एम.एस.डब्ल्यू. उत्तरार्द्ध

चतुर्थ प्रश्नपत्र

सामाजिक कल्याण और विकास का प्रबंधन

(MANAGEMENT OF SOCIAL WELFARE AND DEVELOPMENT)

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Sadhana Singh Bisen
   Former Assistant Professor,
   BSS College, Bhopal (MP)
2. Dr. Aarti Shrivastava
   Professor
   Govt. Sarojini Naidu (PG) College, Bhopal
3. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   Institute for Excellence in Higher Education,
   Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)
2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)
3. Dr. Anjali Singh
   Director, Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)
4. Dr. Sadhana Singh Bisen
   Former Assistant Professor,
   BSS College, Bhopal (MP)
5. Dr. Aarti Shrivastava
   Professor
   Govt. Sarojini Naidu (PG) College, Bhopal
6. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   Institute for Excellence in Higher Education,
   Bhopal (M.P.)

COURSE WRITERS

Dr Rakhi Mittal, Associate Professor, Ginni Devi Girls PG College, Modinagar
Units: (1.0-1.1, 1.2.3, 1.3, 1.4-1.8, 2.0-2.1, 2.3-2.8, 3.0-3.1, 3.2.4, 3.3.5, 3.4-3.8, 5.0-5.1, 5.2.2-5.3, 5.4-5.8)
Dr Kirti Agrawal, Director and Chairperson, Smt Vimla Devi Education Society, Delhi
Units: (1.2-1.2.2, 2.2, 3.2-3.2.3, 4.0-4.1, 4.2-4.3.4, 4.4-4.8, 5.2-5.2.1)
Col (Retired) Pradeep Bajaj, Director Education, Premier Skills Pvt. Ltd. Delhi
Units: (3.3-3.3.4)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

सामाजिक कल्याण और विकास का प्रबंधन

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 प्रबंधन : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र; संगठन में प्रबंधन का महत्व एवं प्रबंधन के तत्व	**इकाई 1** : प्रबंधन की अवधारणा एवं संगठन में प्रबंधन का महत्व **(पृष्ठ 3–38)**
इकाई–2 प्रबंधन की कला और विज्ञान : प्रबंधन के सिद्धांत एवं उद्देश्य; मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र	**इकाई 2** : प्रबंधन के सिद्धान्त एवं मानव संसाधन प्रबंधन **(पृष्ठ 39–60)**
इकाई–3 नियोजन : अवधारणा, उद्देश्य, तकनीक, रणनीतियां एवं परिचालन प्रतिमान; निर्णयन : निर्णय लेने में समय और मानवीय संबंध, कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय, निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान	**इकाई 3** : नियोजन एवं निर्णयन **(पृष्ठ 61–88)**
इकाई–4 संगठन : अवधारणा, संगठन के निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण; नेतृत्व : अभिप्रेरणा, संगठन में टीम और टीम वर्क	**इकाई 4** : संगठन एवं नेतृत्व **(पृष्ठ 89–137)**
इकाई–5 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया : अर्थ, आवश्यकता और प्रमुख चरण; प्रदर्शन क्षेत्रों और रणनीतिक नियंत्रण बिंदुओं की पहचान; भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंधन विज्ञान के सिद्धान्तों एवं तकनीकों का अनुप्रयोग	**इकाई 5** : संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया एवं भारत में सामाजिक कल्याण और विकास **(पृष्ठ 139–174)**

विषय–सूची

परिचय **1–2**

इकाई 1 प्रबंधन की अवधारणा एवं संगठन में प्रबंधन का महत्व **3–38**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 प्रबंधन : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र
  1.2.1 प्रबंध की विभिन्न अवधारणाएं
  1.2.2 प्रबंधन की आवश्यकता एवं उद्देश्य
  1.2.3 प्रबंधन की प्रकृति एवं क्षेत्र
1.3 संगठन में प्रबंधन का महत्व एवं प्रबंधन के तत्व
  1.3.1 संगठन में प्रबंधन की महत्ता
  1.3.2 प्रबंधन के तत्व
  1.3.3 संगठन और नियोजन
1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.5 सारांश
1.6 मुख्य शब्दावली
1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 प्रबंधन के सिद्धान्त एवं मानव संसाधन प्रबंधन **39–60**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 प्रबंधन की कला और विज्ञान : प्रबंधन के सिद्धांत एवं उद्देश्य
  2.2.1 प्रबंधन की कला
  2.2.2 प्रबंधन की वैज्ञानिकता
  2.2.3 प्रबंधन की सैद्धांतिकता एवं उद्देश्यपरकता
2.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास : अवधारणा, आवश्यकता, उद्‌देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र
  2.3.1 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास का संकल्पनात्मक स्वरूप
  2.3.2 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की आवश्यकता तथा उद्देश्यपरकता
  2.3.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की प्रकृति तथा विस्तार क्षेत्र
2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली
2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 नियोजन एवं निर्णयन **61–88**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 नियोजन : अवधारणा, उद्‌देश्य, तकनीक, रणनीतियां एवं परिचालन प्रतिमान
  3.2.1 नियोजन की अवधारणा एवं परिभाषाएं
  3.2.2 नियोजन के उद्देश्य

3.2.3 नियोजन तकनीक एवं रणनीतियां
3.2.4 नियोजन परिचालन प्रतिमान
3.3 निर्णयन : निर्णय लेने में समय और मानवीय संबंध, कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय, निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान
3.3.1 निर्णयन की अवधारणा एवं प्रकृति
3.3.2 निर्णयन के चरण में समय एवं मानवीय संबंध
3.3.3 निर्णयन के स्वरूप : कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय
3.3.4 निर्णयन के उपागम एवं महत्व
3.3.5 निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान
3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.5 सारांश
3.6 मुख्य शब्दावली
3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 संगठन एवं नेतृत्व **89–137**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 संगठन : अवधारणा, संगठन के निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण
4.2.1 संगठन की संकल्पनाएं
4.2.2 संगठन के निर्माण खंड एवं प्रकार
4.2.3 अधिकार (सत्ता) की शक्ति और वितरण
4.3 नेतृत्व : अभिप्रेरणा, संगठन में टीम और टीम वर्क
4.3.1 नेतृत्व के विविध स्वरूप
4.3.2 नेतृत्व के विविध सिद्धांत
4.3.3 अभिप्रेरणा
4.3.4 संगठन में टीम एवं टीमवर्क
4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 मुख्य शब्दावली
4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया एवं भारत में सामाजिक कल्याण और विकास 139–174

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया : अर्थ, आवश्यकता और प्रमुख चरण; प्रदर्शन क्षेत्रों और रणनीतिक नियंत्रण बिंदुओं की पहचान
5.2.1 नियंत्रण : अर्थ, आवश्यकता एवं प्रक्रिया (चरण)
5.2.2 नियंत्रण की तकनीकें
5.2.3 प्रमुख प्रदर्शन क्षेत्र की पहचान तथा नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु
5.3 भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंधन विज्ञान के सिद्धान्तों एवं तकनीकों का अनुप्रयोग
5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.5 सारांश
5.6 मुख्य शब्दावली
5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'सामाजिक कल्याण और विकास का प्रबंधन' विश्वविद्यालय द्वारा एम.एस. डब्ल्यू. (उत्तरार्द्ध) के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम पर आधारित है।

प्रबंधन वह क्रिया है जो प्रत्येक उस संगठन के लिए आवश्यक है जिसमें लोग समूह में भिन्न–भिन्न प्रकार के कार्य एक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु करते हैं। प्रबंधन कर्मचारियों के प्रयत्नों व समान उद्देश्यों को प्राप्त करने में दिशा प्रदान करता है। इसे परिचालन क्षेत्र या प्रबंधन का कार्यात्मक क्षेत्र भी कहा जाता है। प्रबंधन एक सामाजिक और सार्वभौमिक प्रक्रिया होने के कारण इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है।

प्रबंधन का स्थान परिवार, संप्रदाय व समाज में भी निहित रहता है। समाज की व्यवस्था भी एक पूर्व निर्धारित योजना के अंतर्गत संचालित होती है, यही सामाजिक प्रक्रिया है। प्रबंधन का मूल संबंध मानव से है और मनुष्य समाज का एक अंग है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रबंधन का संबंध मनुष्य से होता है। इसलिए इसे सामाजिक प्रक्रिया कहा गया है।

आज प्रबंधकों को विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। एक प्रबंधक का कार्य पुरस्कृत, रोमांचक और चुनौतीपूर्ण व्यवसायों में से एक है। संगठनात्मक प्रक्रिया के रूप में संगठन एक गतिशील तत्व है, क्योंकि इसमें कार्यों का निर्धारण, वर्गीकरण, अधिकारों व दायित्वों का बंटवारा तथा पारस्परिक संबंधों का निर्धारण, संगठनकर्ताओं के अनुभव व ज्ञान के अनुसार बदलता रहता है।

प्रस्तुत पुस्तक में सामाजिक कल्याण और विकास के प्रबंधन के विभिन्न पक्षों का सांगोपांग विवेचन किया गया है। प्रत्येक इकाई के प्रारंभ में विषय का विश्लेषण करने से पहले उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' कॉलम के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता परखने हेतु वैकल्पिक प्रश्न दिए गए हैं। पाठ्यसामग्री तैयार करते समय विषय में विद्यार्थी की रुचि जगाने तथा रोचकता लाने का भरपूर प्रयास किया गया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पुस्तक में पांच इकाइयों को समायोजित किया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई 'प्रबंधन की अवधारणा एवं संगठन में प्रबंधन का महत्व' पर आधारित है। इसमें प्रबंधन की आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र आदि तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है।

दूसरी इकाई में प्रबंधन के सिद्धांतों एवं मानव संसाधन के प्रबंधन को विस्तार से समझाया गया है।

तीसरी इकाई नियोजन एवं निर्णयन पर आधारित है। इसमें नियोजन की अवधारणा, उद्देश्य, रणनीतियां एवं निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमानों का विवेचन किया गया है।

टिप्पणी

चौथी इकाई संगठन एवं नेतृत्व पर आधारित है। इसमें संगठन की अवधारणा, इसके निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण पर चर्चा की गई है, साथ ही नेतृत्व के विविध स्वरूपों व सिद्धांतों की व्याख्या की गई है।

पांचवीं इकाई में संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया एवं भारत में सामाजिक बदलाव और विकास जैसे तथ्यों को समझाया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में सामाजिक कल्याण और विकास के प्रबंधन को सरल भाषा में रुचिकर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों और विद्यार्थियों की जिज्ञासा को शांत कर उनका मार्गदर्शन करने में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 प्रबंधन की अवधारणा एवं संगठन में प्रबंधन का महत्व

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 प्रबंधन : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र
  1.2.1 प्रबंधन की विभिन्न अवधारणाएं
  1.2.2 प्रबंधन की आवश्यकता एवं उद्देश्य
  1.2.3 प्रबंधन की प्रकृति एवं क्षेत्र
1.3 संगठन में प्रबंधन का महत्व एवं प्रबंधन के तत्व
  1.3.1 संगठन में प्रबंधन की महत्ता
  1.3.2 प्रबंधन के तत्व
  1.3.3 संगठन और नियोजन
1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.5 सारांश
1.6 मुख्य शब्दावली
1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

प्रबंधन में समय व परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होता रहा है। इसलिए प्रबंधन की समय–समय पर विभिन्न प्रकार की अवधारणाएं विकसित हुई हैं। प्रबंधन का उद्देश्य दूसरे से कार्य कराने में संलग्न व्यक्तियों से संबंधित है। प्रबंधन प्रक्रिया में पहले उद्देश्य सुनिश्चित करके उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

इस इकाई में हम प्रबंधन की विविध अवधारणाओं को समझते हुए प्रबंधन की आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र का अवलोकन करेंगे। संगठन में प्रबंधन की महत्ता और प्रबंधन के तत्वों पर भी इस इकाई में विचार किया जा रहा है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- प्रबंधन की विभिन्न अवधारणाएं एवं परिभाषाएं समझ पाएंगे।
- प्रबंधन की आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र से अवगत हो पाएंगे;
- संगठन में प्रबंधन की महत्ता एवं प्रबंधन के तत्वों की विवेचना कर पाएंगे।

टिप्पणी

1.2 प्रबंधन : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र

प्रबंधन प्रबंधकीय निर्णयों को लेने तथा उनको क्रियान्वित करने की प्रक्रिया है। प्रबंधन मूलतः मनुष्य, मशीन, मुद्रा, सामग्रियों तथा विधियों (5M's—Men, Machine, Money, Materials and Methods) जैसे उत्पादन के विभिन्न घटकों (Factors of production) का वर्णन करता है। एक प्रबंधक की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस कार्यक्षमता के साथ उत्पादन के इन सीमित साधनों का प्रयोग करता है। उत्पादन के इन साधनों के अनुकूलतम उपयोग में ही प्रबंधन की सफलता का रहस्य निहित है।

प्रबंधन को मानव शरीर में मस्तिष्क के साथ तुलना करके देखा जा सकता है। बिना मस्तिष्क के मानवीय शरीर मात्र हड्डियों तथा स्नायुतंत्र का ढांचा–सा बनकर रह जाता है तथा कुछ भी प्राप्त करने में समर्थ नहीं रहता। ठीक इसी प्रकार प्रबंधन के बिना एक व्यवसाय सामग्री, मुद्रा, मशीन, उपकरण जैसे प्रत्येक साधन का ढेर–सा होकर रह जाता है। यह केवल प्रबंधन ही है जो उसको कार्य रूप में लाता है।

1.2.1 प्रबंधन की विभिन्न अवधारणाएं

अवधारणा एक मनःस्थिति, विचार या धारणा है जो किसी वस्तु, गतिविधि, तकनीक आदि के संबंध में हो सकती है। **वेबस्टर शब्दकोश** के अनुसार, ''अवधारणा एक निराकार विचार है जिसे विशेष उदाहरणों से सामान्यीकृत किया गया है।''

प्रबंधन की अवधारणा में समय व परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होता रहा है। इसलिए अब तक प्रबंधन की कई अवधारणाएं विकसित हुई हैं।

थियो हैमन (Theo Haimann) ने प्रबंधन को निम्नलिखित अर्थों में समझाया है– 1. प्रबंधन संज्ञा के रूप में, 2. प्रबंधन प्रक्रिया के रूप में, 3. प्रबंधन अनुशासन के रूप में।

1. **प्रबंधन संज्ञा के रूप में** (Management as a Noun) – इस अर्थ में प्रबंधन का आशय उन सभी व्यक्तियों से है जो दूसरों से कार्य कराने में संलग्न हैं। संगठन में दूसरों को नियंत्रित करने का अधिकार रखने वाले तथा संगठन के मुख्य अधिकारी इसमें आते हैं, जैसे–संचालक मंडल, प्रमुख संचालक, महाप्रबंधक, प्रथम श्रेणी निरीक्षणकर्ता आदि।
2. **प्रबंधन प्रक्रिया के रूप में** (Management as a Process) – इसका आशय प्रबंधकों द्वारा किए जाने वाले कार्यों से है। नियोजन, संगठन, स्टाफिंग, समन्वय, निर्देशन, नियंत्रण आदि प्रबंधन प्रक्रिया में आते हैं। प्रबंधन एक सतत प्रक्रिया होती है। प्रबंधन प्रक्रिया में पहले उद्देश्य करके उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।
3. **प्रबंधन अनुशासन के रूप में** (Management as a Discipline) – 'प्रबंधन' शब्द का उपयोग ज्ञान की शाखा के रूप में भी होता है। इस रूप में प्रबंधन का आशय प्रबंधन के सिद्धांतों का एक विषय के रूप में अध्ययन किए जाने से होता है।

प्रबंधन का अर्थ एवं परिभाषाएं

टिप्पणी

प्रबंधन की विचारधारा एक व्यापक और जटिल विषय है। विभिन्न प्रबंधन विशेषज्ञों ने प्रबंधन को अपने–अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। ऐसी स्थिति में प्रबंधन की एक सर्वमान्य परिभाषा देना असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रबंधन शास्त्रियों ने प्रबंधन की अग्रलिखित परिभाषाएं दी हैं–

(a) **उत्पादकता या दक्षता अभिमुखी परिभाषाएं** (Productivity or Efficiency-oriented Definitions) – इस वर्ग की परिभाषाएं उत्पादकता में वृद्धि से संबंधित हैं।

एफ.डब्ल्यू. टेलर के अनुसार, ''प्रबंधन यह जानने की कला है कि आप क्या करना चाहते हैं, तत्पश्चात यह देखना कि वह सर्वोत्तम एवं मितव्ययितापूर्ण विधि से किया जाता है।''

विश्लेषण – इस परिभाषा के अनुसार प्रबंधन एक कला व कार्यों का पूर्व निर्धारण है। इसका उद्देश्य कार्य–निष्पादन की सर्वोत्तम एवं मितव्ययतापूर्ण विधि की खोज करना है। प्रबंधन का प्रमुख कार्य उत्पादन के साधनों का कुशलतम उपयोग करते हुए न्यूनतम लागत पर अधिकाधिक कार्य संपन्ना कराना है।

विलियम एफ. ग्लूक के अनुसार, ''उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मानवीय एवं भौतिक साधनों का प्रभावी उपयोग ही प्रबंधन है।''

प्रो. जॉन. एफ. मी के अनुसार, ''प्रबंधन न्यूनतम प्रयत्न द्वारा अधिकतम परिणाम प्राप्त करने की कला है जिससे नियोक्ता एवं कर्मचारी दोनों के लिए अधिकतम समृद्धि एवं खुशहाली प्राप्त की जा सके तथा जनता को सर्वश्रेष्ठ संभव सेवा उपलब्ध कराई जा सके।''

इन परिभाषाओं में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के अधिकतम उपयोग एवं उत्पादन वृद्धि पर अधिक बल दिया गया है और मानवीय पक्ष की उपेक्षा की गई है। अतः आधुनिक प्रबंधन विशेषज्ञ इन परिभाषाओं को पूर्ण नहीं मानते।

(b) प्रक्रिया अभिमुखी अथवा क्रियात्मक परिभाषाएं (Pro-oriented or Functional Definitions) – कुछ प्रबंधन विशेषज्ञों ने प्रबंधन को एक प्रक्रिया माना है।

हेनरी फेयोल के अनुसार, ''प्रबंधन से आशय पूर्वानुमान लगाना एवं योजना बनाना, संगठित करना, आदेश देना, समन्वय करना तथा नियंत्रण करना है।''

विश्लेषण – इस परिभाषा के अनुसार संस्थागत लक्ष्यों के संपादित होने वाले कार्यों का औचित्यपूर्ण ढंग से संपादन करना ही प्रबंधन कहलाता है। इन कार्यों में पूर्वानुमान, नियोजन, संगठन, निर्देशन, समन्वय तथा नियंत्रण आते हैं।

ई.एफ.एल. ब्रेच के अनुसार, ''प्रबंधन एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें एक उपक्रम की गतिविधियों का प्रभावी नियोजन एवं नियमन का उत्तरदायित्व समाहित है, ऐसा उत्तरदायित्व निम्न को सम्मिलित करता है–

(i) योजनाओं के निर्धारण में निर्णय तथा योजनाओं के विपरीत कार्य तथा प्रगति को नियंत्रित करने के लिए आंकड़ों का प्रयोग करना।

(ii) उपक्रम की स्थापना करने वाले तथा उसके कार्यों को संपादित करने वाले व्यक्तियों का दिशा–निर्देशन, एकीकरण, उत्प्रेरण एवं पर्यवेक्षण करना।

टिप्पणी

विश्लेषण – ब्रेंच के अनुसार प्रबंधन को मानव की सहायता से कुछ क्रियाएं संपादित करनी पड़ती हैं। प्रबंधक पर निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु इन क्रियाओं के नियोजन व नियमन का सामाजिक दायित्व होता है। इस हेतु प्रबंधन द्वारा कर्मचारियों का मार्गदर्शन, एकीकरण, प्रेरण एवं पर्यवेक्षण भी किया जाता है।

जॉर्ज आर. टैरी के अनुसार, ''प्रबंधन एक पृथक प्रक्रिया है जिसमें नियोजन, संगठन, क्रियान्वयन एवं नियंत्रण को शामिल किया जाता है तथा इसका निष्पादन व्यक्तियों एवं साधनों के उपयोग द्वारा उद्देश्यों के निर्धारण प्राप्त करने के लिए किया जाता है।''

डी.ई. मैक्फारलैण्ड (Mcfarland) के अनुसार, ''प्रबंधन एक ऐसी प्रक्रिया होती है जिसके द्वारा प्रबंधक समन्वित एवं सहकारी मानवीय प्रयासों की सहायता से उद्देश्यपूर्ण संगठनों का सृजन, निर्देशन, अनुरक्षण एवं संचालन करते हैं।''

1.2.2 प्रबंधन की आवश्यकता एवं उद्देश्य

प्रबंधन एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। यद्यपि टेलर को वैज्ञानिक प्रबंधन का जन्मदाता कहा जाता है लेकिन अन्य विद्वानों, जैसे–चार्ल्स वैबेज, राबर्ट ओवने, हेनरी आदि के द्वारा दिए गए योगदान भी महत्वपूर्ण हैं। उत्तरी अमेरिका के कुछ इंजीनियरों ने अपना एक संघ बनाया जिसमें एफ.डब्ल्यू टेलर, हेनरी एल. गेन्ट, हैरिंगटन, इमरसन फ्रैंक गिलब्रेथ आदि थे। इस संघ ने एक नई विचारधारा को जन्म दिया जो कि वैज्ञानिक प्रबंधन के रूप में उभरकर आई। वैज्ञानिक प्रबंधन विवेकीकरण पर आधारित होता है।

इसकी कार्यप्रणाली में रूढ़िवादिता के स्थान पर ठोस तर्कों का उपयोग किया जाता है। प्रबंधन के कार्यों में वैज्ञानिक अनुसंधान की विधियों का उपयोग किया जाता है। वैज्ञानिक प्रबंधन के अंतर्गत अनेक व्यावहारिक समस्याओं को सुलझाने के लिए संबंधित प्रश्न की पहचान, उसके बारे में विभिन्न प्रकार की सूचनाएं एकत्रित करना, भिन्न–भिन्न पहलुओं का अध्ययन करना, उनका विश्लेषण करना तथा विवेकपूर्ण मूल्यांकन करना और फिर सही मार्ग तय करना सम्मिलित है।

एफ.डब्ल्यू. टेलर का विश्वास था कि प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य स्वामियों को अधिकतम संपन्नता प्रदान करना और प्रत्येक कर्मचारी को अधिकतम कल्याण प्रदान करना होना चाहिए। अधिकतम समानता से उनका आशय न्यूनतम उत्पादन लागत, मालिकों को अधिकतम लाभ, कर्मचारियों को अधिक मजदूरी तथा संपूर्ण उद्योगों को कुशलता का उच्च सामान्य स्तर देना था। टेलर का यह अनुभव था कि इन उद्देश्यों को प्रबंधन के क्षेत्र में नई विचारधारा लागू करके ही प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए उन्होंने प्रबंधन के पुराने रूढ़िवादी तरीकों को त्यागकर, उनके स्थान पर वैज्ञानिक प्रणाली लागू करने का सुझाव दिया। इस संबंध में उन्होंने आवश्यक सुझाव ही नहीं दिए बल्कि जिन कारखानों में वे काम करते थे, उनमें उन्होंने यह बात सिद्ध करके भी दिखाई कि श्रमिक अपनी कार्यकुशलता से कम काम कर रहे हैं। श्रमिकों की कार्यकुशलता कम होने के उन्होंने दो कारण बताए–

प्रथम, श्रमिक जानबूझकर अकुशलता से काम करते हैं क्योंकि उन्हें अधिक कार्य करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता और दूसरा वे यह भी सोचते हैं कि अधिक उत्पादन करने से उनका कोई लाभ नहीं होगा, केवल उत्पादक को लाभ होगा बल्कि उल्टा उन्हें छंटनी हो जाने पर बेरोजगारी का सामना करना पड़ सकता है। श्रमिकों

की अकुशलता का दूसरा कारण कार्य करने में प्रयोग की जाने वाली विधियों का अवैज्ञानिक एवं अव्यवस्थित होना तथा कार्यविधि एवं प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों का श्रमिकों की आवश्यकताओं के अनुकूल न होना बताया।

टिप्पणी

वैज्ञानिक प्रबंधन को लागू करने के लिए एफ.डब्ल्यू. टेलर तथा अन्य प्रबंधन विशेषज्ञों ने समय–समय पर अनेक सिद्धांतों की व्याख्या की है। इन सिद्धांतों में प्रबंधन के तत्वों का स्वरूप भी साकार होता है। किसी भी औद्योगिक उपक्रम में वैज्ञानिक प्रबंधन की सफलता इन सिद्धांतों को अपनाने पर निर्भर करती है। वैज्ञानिक प्रबंधन के महत्तापरक मुख्य सिद्धांत अग्रलिखित हैं–

1. कार्य का वैज्ञानिक अध्ययन (Scientific Study of Work)—वैज्ञानिक प्रबंधन के अंतर्गत कार्य विश्लेषण अथवा कार्य अध्ययन का विशेष महत्व है। इसके अंतर्गत समय अध्ययन, गति अध्ययन, थकान अध्ययन, कार्यविधि अध्ययन तथा कार्य अध्ययन को शामिल किया जाता है, जिसके आधार पर निश्चित प्रमाप स्थापित कर लिए जाते हैं और उन्हीं के अनुसार श्रमिकों से कार्य लिया जाता है। इनका संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है–

(अ) समय अध्ययन (Time Study) –श्रमिकों के द्वारा उत्पादन क्रिया को करने में लगने वाले समय की जांच करना, उसका लेखा (record) रखना तथा उचित समय निर्धारित करना समय अध्ययन कहलाता है। प्रत्येक कार्य को छोटे–छोटे उपभागों में विभाजित करके प्रत्येक उपक्रिया या उपभाग का अध्ययन एवं उन्हें छोटी–छोटी उपक्रियाओं में विभाजित करके उन क्रियाओं को करने में कर्मचारियों द्वारा लिए जाने वाले समय को नोट किया जाता है। समय नोट करने के लिए टेलर ने स्टॉप वॉच का प्रयोग किया था। इस संबंध में यह महत्वपूर्ण है कि आदर्श समय ज्ञात करने के लिए एवं समय अध्ययन करने के लिए उस श्रमिक को चुना जाना चाहिए जिनकी कार्यक्षमता औसत दर्जे की हो, साथ ही समय नोट करते समय यह भी देखना चाहिए कि कार्य की परिस्थितियां असाधारण नहीं हों। इसके लिए उस व्यक्ति से अनेक कार्य कराकर और प्रत्येक बार में लगने वाले समय को अलग–अलग नोट करके उसका औसत ज्ञात कर लेना चाहिए। इस नोट किए गए समय के आधार पर प्रमाप समय (standard time) का निर्धारण किया जाता है। समय निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रमाप समय, निकाले गए वास्तविक औसत समय से बहुत अधिक या बहुत कम नहीं हो। जो व्यक्ति समय नोट करता है उसे स्टॉप वॉच तथा अपनी लेखन पुस्तिका लेकर ऐसे स्थान पर बैठना चाहिए जहां से वह श्रमिकों को आसानी से देख सके। लेकिन यह ध्यान रखा जाए कि श्रमिक उसे न देख सकें। इस अध्ययन के आधार पर जो 'समय प्रमाप' निर्धारित किया जाता है। उसकी कर्मचारी द्वारा उपक्रिया को करने में लगाए जाने वाले वास्तविक समय से तुलना करके ही यह बात ज्ञात होती है कि कर्मचारी की कार्यकुशलता कितनी है और उसके बाद ही आवश्यक सुधार एवं प्रोत्साहन हेतु निर्णय लिए जाते हैं।

(ब) गति या मुद्रा अध्ययन (Motion Study) – किसी कार्य को करने में एक कर्मचारी को और मशीनों को विभिन्न प्रकार की चेष्टाएं या मुद्राएं करनी पड़ती हैं, जैसे – उठना, बैठना, रखना, हटना, ले जाना, पकड़ना, घुमाना, छेद करना आदि। इन सबका अध्ययन गति अध्ययन अथवा मुद्रा अध्ययन (Motion Study) कहलाता है। गिलब्रेथ के शब्दों में ''गति अध्ययन व विज्ञान है जिसके द्वारा अनावश्यक, गलत

टिप्पणी

निर्देशित तथा अकुशल गति से होने वाली क्षति को रोका जा सके। गति अध्ययन का मुख्य उद्देश्य श्रम का न्यूनतम अपव्यय, प्रणाली की योजना को ज्ञात करना तथा लागू करना है। इस अध्ययन के लिए सबसे पहले उन चेष्टाओं एवं मुद्राओं की सूची बनानी पड़ती है जो कि एक श्रमिक या मशीन को कार्य करते समय करनी पड़ती है। वैज्ञानिक प्रबंधन की विचारधारा के अनुसार कार्य को संपादित करने में एक श्रमिक या मशीन को जितनी कम चेष्टाएं करनी पड़ेंगी, उसकी कार्यकुशलता उतनी अधिक होगी। इन चेष्टाओं का अध्ययन एक विशेष कैमरे (micronometer) से किया जाता है। इसमें चेष्टाओं के साथ नोट करने तथा उनके चित्र लेने की व्यवस्था होती है। बाद में इनका अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है और यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि कौन–सी चेष्टाओं या मुद्राओं को समाप्त किया जा सकता है और कौन–सी चेष्टाएं श्रमिक की अपेक्षा मशीन को सौंपी जा सकती हैं और किन चेष्टाओं को एक दूसरे के साथ मिलाया जा सकता है।

जितनी अधिक चेष्टाएं होंगी, उतना ही श्रमिक का शरीर अधिक हिलेगा–डुलेगा जिसके परिणामस्वरूप उसे अधिक थकान अनुभव होगी और जिसका प्रभाव यह पड़ेगा कि उत्पादन में समय भी अधिक लगेगा। इस संबंध में गिलब्रेथ ने काफी अध्ययन एवं प्रयोग किए। उनके अनुभव के अनुसार एक राज को एक ईंट दीवार में रखने के लिए लगभग अठारह बार क्रिया या गति करनी पड़ती है। इसका अध्ययन करके उन्होंने इन चेष्टाओं की संख्या को अठारह से घटाकर पांच कर दिया और कुछ दशाओं में केवल दो तक सीमित कर दिया, जिसका प्रभाव यह हुआ कि एक राज जो एक घंटे में एक सौ बीस ईंट चिनता था, अब तीन सौ पचास ईंट चिनने लगा। इसी प्रकार के विभिन्न अध्ययन किए गए हैं जिसके आधार पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गति या मुद्रा अध्ययन करने से क्षमता में वृद्धि तथा व्यक्ति व समय की बचत होती है और जिससे लागत भी कम आती है। गति अध्ययन का मुख्य उद्देश्य वर्तमान परिस्थितियों में काम करने की एक सर्वोत्तम प्रणाली निश्चित करना है।

(स) समय अध्ययन और गति अध्ययन में अंतर (Distinction between Time Study and Motion Study) – समय अध्ययन और गति अध्ययन दोनों ही कार्य–विश्लेषण की उपक्रियाएं हैं। इन दोनों में निम्नलिखित प्रमुख अंतर हैं–

(1) समय अध्ययन पहले किया जाता है जबकि गति अध्ययन समय अध्ययन के बाद किया जाता है।

(2) समय अध्ययन में मशीन पर लगने वाले समय और श्रमिकों द्वारा किए जाने वाले कार्य का अध्ययन किया जाता है, जबकि गति अध्ययन में श्रमिकों द्वारा किए जाने वाले कार्य का अध्ययन किया जाता है।

(3) समय अध्ययन में केवल स्टॉप वाच विधियों का ही प्रयोग किया जाता है जबकि गति अध्ययन में केवल फोटोग्राफिक कार्यविधियों का प्रयोग किया जाता है।

(4) समय अध्ययन में श्रमिकों के कार्य को मापा जाता है, जिसका आधार प्रमापित समय होता है जबकि गति अध्ययन का उद्देश्य कार्य की आदर्श विधियों को प्रयोग में लाना होता है।

(द) थकान अध्ययन (Fatigue Study) – यह एक वास्तविकता है कि एक कर्मचारी की कार्यक्षमता पूरे दिन समान नहीं बनी रहती है। इसका मुख्य कारण कर्मचारियों के द्वारा थकान अनुभव करना है। एक कर्मचारी कार्य करते–करते

जैसे–जैसे थकता जाता है उसकी कार्य–शक्ति और कार्यकुशलता कम होती जाती है। साधारणतः जब व्यक्ति काम शुरू करता है तो पूरी तरह से स्वस्थ एवं तरोताजा होता है और कार्य करने के साथ–साथ उसका जोश, स्फूर्ति, शारीरिक एवं मानसिक शक्ति कम होती चली जाती है, जिसका उसकी कार्यकुशलता पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इस संबंध में श्री टेलर ने प्रत्येक क्रिया का सूक्ष्म अध्ययन किया और यह ज्ञात किया कि एक श्रमिक को किस समय थकान अनुभव होती है। साथ ही उन्होंने यह ज्ञात करने का भी प्रयास किया कि इस थकान को कैसे दूर या कम किया जा सकता है जिससे श्रमिक की कार्यक्षमता निरंतर सामान्य बनी रहे। इस संबंध में विभिन्न प्रयोग करके टेलर ने यह निष्कर्ष निकाला कि थकान को कम करने के लिए प्रत्येक कार्य के बीच समय–समय पर उचित विश्राम की व्यवस्था होनी चाहिए तथा उनके कार्य की प्रवृत्तियां बदलती रहनी चाहिए। थकान अध्ययन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाले जाते हैं कि थकान को कम करने के लिए कार्य की दशाओं में तथा कार्यविधियों में क्या–क्या आवश्यक सुधार किए जाने चाहिए। उदाहरण के लिए, गर्मियों के दिनों में यदि कार्य करने के स्थान पर गर्मी कम करने के उपकरण लगा दें, तो श्रमिक को कम थकान होगी और उसकी कार्यकुशलता एक निश्चित सीमा तक बनी रह सकती है।

(य) कार्यविधि अध्ययन (Method Study) – कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए कार्यविधि अध्ययन भी बहुत महत्वपूर्ण है। इस अध्ययन के अंतर्गत उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया की जांच–पड़ताल एवं विश्लेषण किया जाता है और उत्पादन प्रक्रिया को अलग–अलग उप–क्रियाओं में इस प्रकार से विभाजित किया जाता है कि कच्चे एवं अर्द्धनिर्मित माल के आवागमन में कम–से–कम दूरी एवं समय लगे। आवश्यक औजार एवं साजो–सामान को उठाने में कम समय और कम कर्मचारी लगें, निरीक्षण करने और माल को एकत्रित करने आदि के संबंध में भी आवश्यक एवं सुधारात्मक कदम उठाए जाते हैं। कार्यविधि का पूरा अध्ययन एवं विश्लेषण करने के बाद कुछ क्रियाओं को पूरी तरह समाप्त किया जा सकता है और कुछ क्रियाओं को आपस में मिलाया जा सकता है। इस संबंध में कारखाने में उपलब्ध स्थान, मशीनों की स्थिति तथा औजारों; यंत्रों की आवश्यकता को ध्यान में रखना चाहिए। साधारणतः कार्यविधि इस प्रकार की होती है कि उत्पादन प्रक्रियाएं एक से दूसरे, दूसरे से तीसरे, तीसरे से चौथे और आगे भी इसी प्रकार विभिन्न स्थानों पर कम से कम प्रयासों और समय में होती चली जाती हैं।

2. कार्य का वैज्ञानिक नियोजन (Scientific Task Planning) – प्रबंधन के क्षेत्र में नियोजन लागू करने में टेलर प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने प्रबंधकों का ध्यान इस ओर दिलाया। नियोजन के अंतर्गत यह निर्णय लिया जाता है कि क्या करना है? कैसे करना है ? कब करना है ? और किसने करना है? हम कहां हैं और भविष्य में कहां पहुंचना चाहते हैं? यह सशक्त रूप से संकेत करता है कि केवल पूर्व निर्धारित बातों को ही नहीं अपनाना है बल्कि समझदारी के साथ अपने कार्य के अनुकूल परिवर्तन भी करना है। टेलर का कहना था कि प्रत्येक संस्था में एक पृथक योजना विभाग होना चाहिए और इस योजना विभाग को उपर्युक्त चारों प्रश्नों के उत्तर खोजने चाहिए। क्या किया जाए, इस संबध में उच्च प्रबंधकों तथा इंजीनियरिंग विभाग से सलाह अवश्य लेनी चाहिए क्योंकि जब उच्च प्रबंधन से यह निर्देश मिल जाए कि क्या, कैसे और कितनी संख्या में उत्पादन किया जाना है और इस माल की सुपुर्दगी कब देना आवश्यक है, तब ही योजना विभाग आवश्यक योजना बनाएगा। एक वैज्ञानिक नियोजन में बहुत सी

बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। टेलर का कहना था कि नियोजन बहुत सावधानी से और बहुत स्पष्ट विधि से किया जाना चाहिए।

टिप्पणी

एक सफल नियोजन में निम्नलिखित कार्यों का समावेश किया जाता है –

(अ) पूर्वानुमान लगाना (Forcasting)

(ब) उद्देश्यों का निर्धारण करना (Determination of Objectives)

(स) कार्यविधि का निर्धारण (Determination of Working Methods)

(द) कार्यक्रमों का निर्धारण करना (Determination of Programmes)

(य) बजट बनाना (Budgeting)

(र) नीति निर्धारण करना (Determination of Policies)

उपरोक्त कार्यों के साथ–साथ अनेक बातें भी ध्यान में रखनी पड़ती हैं, जैसे–उत्पादन का कार्यक्रम बनाते समय वस्तु की किस्म, मात्रा, डिजाइन, समय आदि। मशीनों, प्रक्रियाओं तथा कार्यवाहियों का क्रम निर्धारित करना पड़ता है। कौन–सी क्रिया कब प्रारंभ होगी और कब समाप्त होगी, इसकी उपयुक्त समय तालिका बनानी पड़ती है। योजना को कार्य रूप देने के लिए आवश्यक औजार, कच्चा माल, साजो–सामान आदि उपलब्ध कराना पड़ता है। कर्मचारियों को आवश्यक निर्देश देने पड़ते हैं, जिसके लिए विभिन्न रेखाचित्र, डिजाइन आदि का सहारा भी लिया जा सकता है। समय अध्ययन तथा गति अध्ययन के आधार पर समय प्रमाप निर्धारित करने पड़ते हैं। योजना में इस बात की व्यवस्था भी करनी पड़ती है कि परिस्थितियों के अनुसार उसमें आवश्यक परिवर्तन कर दिया जाए।

ये सभी कार्यवाहियां उत्पादन प्रबंधन का अंग मानी जाती हैं और इन कार्यवाहियों को उत्पादन नियोजन एवं नियंत्रण कहते हैं। सुविधा की दृष्टि से उत्पादन, नियोजन एवं नियंत्रण को चार भागों में बांटा जाता है–

(अ) मार्ग निर्धारण (Routing)

(ब) समय निर्धारण (Scheduling)

(स) प्रेषण (Despatching)

(द) अनुगमन (Follow-up)

ये निर्धारण के अंतर्गत यह निर्धारित किया जाता है कि उत्पादन में क्या–क्या सामग्री, मशीनें, प्रक्रियाएं और कार्यवाहियां निहित हैं। पूर्व–निर्धारित मात्रा में निश्चित किस्म एवं आकार का उत्पादन करने के लिए उत्पादन का सबसे छोटा और मितव्ययी कार्य–मार्ग क्या हो सकता है अर्थात कच्चा माल किन–किन प्रक्रियाओं से होकर उत्पादन का रूप धारण करेगा। समय निर्धारण के अंतर्गत प्रक्रियाओं के प्रारंभ एवं समाप्ति का समय निर्धारित कर लिया जाता है। इससे निश्चित समय पर उत्पादन करने में सहायता मिलती है। प्रेषण के अंतर्गत उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चा माल, मशीन, मजदूर, निर्देश, डिजाइन, नक्शे इत्यादि यथास्थान पहुंचाना शामिल हैं। अनुगमन में उत्पादन कार्यवाही की जांच–पड़ताल शामिल है। प्रगति रिपोर्ट बनाकर इनका योजना से मिलान किया जाता है एवं अंतर आने पर सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है।

3. श्रमिकों का वैज्ञानिक चुनाव एवं प्रशिक्षण (Scientific Selection and Training of Workers) – श्रमिकों का वैज्ञानिक विधि से चुनाव एवं प्रशिक्षण किसी भी संस्था में वैज्ञानिक प्रबंधन लागू करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह कार्य

'कर्मचारी विभाग'(personnel departments) को सौंपा जाना चाहिए। श्रमिकों का चुनाव करने से पहले संबंधित कार्य का विश्लेषण करके अधिकारी को यह निश्चित कर लेना चाहिए कि उस कार्य के लिए उपयुक्त व्यक्ति में क्या–क्या गुण होने चाहिए और श्रमिकों का चुनाव करते समय उन गुणों का ध्यान रखना चाहिए। श्रमिकों का चुनाव कार्य की आवश्यकता के अनुसार बिना किसी भेदभाव के होना चाहिए। टेलर का कहना था कि कर्मचारी के चुनाव के लिए उसमें बहुत अधिक योग्यता होना आवश्यक नहीं है लेकिन यह आवश्यक है कि सभी उम्मीदवारों में से उसे चुना जाना चाहिए जो उस काम के लिए योग्य एवं उपयुक्त हो। इसका कारण यह है कि टेलर सही व्यक्ति को सही काम (right job to right person) के सिद्धांतों के प्रबल पक्षपाती थे। वैज्ञानिक प्रबंधन में ऐसे व्यक्ति के लिए भी कोई स्थान नहीं होता जो काम करने की क्षमता एवं योग्यता तो रखता हो लेकिन काम नहीं करता हो।

कर्मचारियों का सही चुनाव कर देना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि यह देखना भी आवश्यक है कि ये कर्मचारी सौंपे गए कार्य को ठीक प्रकार से कर रहे हैं या नहीं अर्थात जो चुनाव किया गया था, वह उचित था या नहीं। यदि ऐसी जानकारी मिलती है कि कोई कर्मचारी अपने कार्य को ठीक प्रकार से नहीं कर पा रहा है तो उसकी जांच–पड़ताल करके उसके कारणों की खोज करनी चाहिए और उस कर्मचारी को उस स्थान पर स्थानांतरित कर देना चाहिए जहां कि वह ठीक प्रकार से काम कर सके। यदि ऐसा अनुभव किया जाता है कि कर्मचारी को प्रशिक्षण देने से उसकी कमियां दूर की जा सकती हैं तो कर्मचारी के लिए उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। वैसे तो कर्मचारियों को उनके काम पर लगाने से पूर्व उनके उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। विभिन्न औद्योगिक संस्थाओं में कार्य और उनके करने की विधियां भी अलग–अलग होती हैं, इसलिए भी वैज्ञानिक प्रशिक्षण आवश्यक है।

4. सुधार एवं प्रमापीकरण (Improvement and Standardisation) – सुधार एवं प्रमापीकरण वैज्ञानिक प्रबंधन का महत्वपूर्ण अंग है। यदि हम श्रमिकों की कार्यकुशलता बढ़ाना चाहते हैं तो हमें मशीनों, औजारों एवं अन्य साजो–सामान, माल की किस्म तथा कार्य की दशाओं में सुधार करना होगा तथा उचित प्रमाप लागू करने होंगे।

5. अभिप्रेरण (Motivation) – कर्मचारियों द्वारा मन लगाकर कार्य करने के लिए अन्य सभी व्यवस्थाओं के अतिरिक्त अभिप्रेरण की आवश्यकता होती है। टेलर अभिप्रेरण के लिए वित्तीय प्रेरणाओं (financial incentives) के पक्षधर थे अतः उन्होंने कर्मचारियों के सही अभिप्रेरण के लिए भिन्नात्मक प्रति इकाई मज़दूरी प्रणाली (differencial piece rate wage system) का सुझाव दिया। इस प्रणाली के अनुसार श्रमिक को प्रमापित कार्य (standard work) से अधिक कार्य करने पर ऊंची दर से मजदूरी दी जाती है और प्रमापित कार्य से कम करने पर नीची दर से मजदूरी दी जाती है। इन दोनों में बहुत अंतर होता है। अतः इस प्रणाली में कार्यानुसार मजदूरी की दो दरें होती हैं, समयानुसार मजदूरी निश्चित नहीं होती है। अभिप्रेरण के लिए गैर वित्तीय प्रेरणाएं भी आवश्यक हैं क्योंकि व्यक्ति केवल रोटी के लिए ही जीवित नहीं रहता। गैर वित्तीय प्रेरणाओं में उन्नति के अवसर, कार्य का स्थायी होना, कुशल नेतृत्व व्यक्ति के रूप में मान्यता, न्याय, पारस्परिक हितों के मामलों में न्याय देने का अधिकार आदि शामिल हैं।

टिप्पणी

6. क्रियात्मक संगठन या विशिष्टीकरण (Functional Organization or Specialisation) – एफ.डब्ल्यू. टेलर प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने संगठनों के सभी स्तरों पर विशिष्टीकरण लागू करने का सुझाव दिया। उन्होंने कार्य के दो मूल अंगों नियोजन एवं निष्पादन को अलग–अलग रखने के लिए संगठन में कार्यात्मक कार्याध्यक्षों (functional foremen) की नियुक्ति की सिफारिश की। संगठन की परंपरागत प्रणाली में प्रायः सभी कार्यों के लिए एक ही व्यक्ति का उत्तरदायी होता था, जिसे सभी कार्य देखने पड़ते थे तथा श्रमिकों के काम के सभी पहलुओं की वह स्वयं ही देखभाल करता था। श्रमिक उसी से निर्देश एवं अधिकार प्राप्त करते थे और उसी के अधीन एवं निरीक्षण में कार्य करते थे। वैज्ञानिक प्रबंधन के दृष्टिकोण से यह प्रणाली ठीक नहीं मानी गई और टेलर ने कार्यात्मक विशिष्टीकरण के आधार पर एक नई संगठन प्रणाली अपनाने का सुझाव दिया, जिसमें दो मुख्य विभाग बनाए गए – योजना विभाग तथा उत्पादन विभाग। प्रत्येक विभाग में चार नायक (bosses) होते हैं, जो अपनी विशिष्ट योग्यता एवं निपुणता के आधार पर अलग–अलग निरीक्षण व पर्यवेक्षण करते हैं–

(अ) **योजना विभाग** (Planning Department) – योजना विभाग का कार्य उपक्रम के लिए योजना तैयार करना होता है। नियोजन कार्य निम्न अधिकारियों के द्वारा किया जाता है –

(i) **मार्ग निर्धारक क्लर्क** (Route Clerk) –यह क्लर्क उत्पादन की प्रक्रिया निर्धारित करता है तथा यह भी निश्चित करता है कि कच्चा माल किन–किन विभागों एवं मशीनों से होकर गुजरेगा। लागत एवं समय बचाने के लिए सबसे छोटा मार्ग तय करने का प्रयास किया जाता है। इस संबंध में आवश्यक मार्ग–तालिकाएं बनाकर संबंधित विभागों को भेजी जाती हैं।

(ii) **निर्देशन कार्ड क्लर्क** (Instruction Clerk) –इस क्लर्क के द्वारा कर्मचारियों को यह निर्देश दिए जाते हैं कि कौन–सा कार्य किया जाना है। निर्देश विशिष्ट एवं स्पष्ट होने चाहिए। निर्देशों का संबंध क्रियाकलापों, मशीनों की गति, संबंधित यंत्रों एवं औजारों के उठाने–रखने एवं प्रयोग इत्यादि से होता है।

(iii) **समय तथा लागत क्लर्क** (Time and Cost Clerk) –इस क्लर्क का मुख्य कार्य उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं में लगने वाले समय तथा कुल कार्य को पूरा करने में लगने वाले समय को निर्धारित करना होता है। इस क्लर्क के द्वारा कुल उत्पादन लागत तथा प्रति इकाई उत्पादन लागत भी ज्ञात की जाती है जिसके लिए लागत पत्र (cost sheet) तैयार किया जाता है। इससे समय एवं लागत पर नियंत्रण रखने में सुविधा होती है।

(iv) **कारखाना अनुशासक** (Factory Disciplinarian) –इस अधिकारी का उत्तरदायित्व कारखाने में अनुशासन एवं शांति बनाए रखना होता है, जिससे कि कारखाने में उत्पादन पूर्व–निर्धारित योजना के अनुसार होता रहे और श्रमिक अपना पूरा सहयोग देते रहें। यह केवल अनुशासनहीन एवं अनियमित श्रमिकों के लिए ही नियम नहीं बनाता बल्कि माल, किस्म, योजना, कार्य आदि के बारे में यदि कोई शिकायत आती है तो उसकी जांच करके सुधारात्मक कार्यवाही का सुझाव भी देता है।

(ब) **उत्पादन विभाग** (Production Department) – उत्पादन विभाग का कार्य योजना विभाग द्वारा बनाई गई योजना के अनुसार वस्तुओं का उत्पादन करना

होता है। इस कार्य के लिए कारखाना उच्च स्तर पर निम्न चार अधिकारी नियुक्त किए जाते हैं –

टिप्पणी

(i) **टोली नायक** (Gang Boss) – टोली नायक श्रमिक उपलब्ध कराता है; उन्हें भिन्न–भिन्न मशीनों पर नियुक्त करता है; मशीनें, यंत्र एवं अन्य साजो–सामान यथास्थान पर उपलब्ध कराता है। कार्य प्रारंभ करने का आदेश भी टोली नायक के द्वारा ही दिया जाता है।

(ii) **गति नायक** (Speed Boss) – गति नायक का कार्य यह देखना है कि कार्य पूर्व निर्धारित गति से चल रहा है अथवा नहीं। यदि कार्य धीमी गति से चलता है तो वह सुधारात्मक कार्यवाही करता है, मशीनों की क्रियात्मक क्षमता को नियंत्रित करता है तथा श्रमिकों को निर्देश देता है कि उन्हें किस गति से मशीनें चलानी हैं, जिससे कि सभी विभागों एवं व्यक्तियों के कार्यों में एक उचित तालमेल एवं सामंजस्य रहे।

(iii) **मरम्मत नायक** (Repair Boss) – इस अधिकारी का कार्य विभिन्न मशीनों एवं साजो–सामान का रख–रखाव एवं देखभाल व मरम्मत करना होता है। यह मशीनों में तेल डालने, टूट–फूट या खराबी को ठीक करने, मशीनों के चारों ओर तार लगाने (fencing) आदि कार्य करता रहता है।

(iv) **निरीक्षक** (Inspector) –इस अधिकारी का कार्य श्रमिकों द्वारा बनाई गई वस्तुओं की किस्म एवं मात्रा का निरीक्षण करना होता है। यह श्रमिक से पूर्व–निर्धारित किस्म एवं मात्रा का उत्पादन करवाने का प्रयास करता है।

7. मानसिक क्रांति–मानसिक क्रांति सशक्त रूप से संकेत करता है कि केवल पूर्व निर्धारित बातों को भी नहीं अपनाना है बल्कि समझदारी के साथ अपने कार्य के अनुकूल परिवर्तन भी करना है। एक वैज्ञानिक नियोजन में बहुत सी बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। नियोजन बहुत सावधानी से और बहुत स्पष्ट विधि से किया जाना चाहिए। कार्यों के साथ–साथ अनेक बातें भी ध्यान में रखनी पड़ती हैं, जैसे–उत्पादन का कार्यक्रम बनाते समय वस्तु की किस्म, मात्रा, डिजाईन, समय आदि मशीनों, प्रक्रियाओं तथा कार्यवाहियों का क्रम निर्धारित करना पड़ता है। कौन–सी क्रिया कब प्रारंभ होगी और कब समाप्त होगी, इसकी उपयुक्त समय तालिका बनानी पड़ती है। कार्यवाहियां उत्पादन प्रबंधन का अंग मानी जाती हैं और इन कार्यवाहियों को मानसिक क्रांति कहते हैं।

1.2.3 प्रबंधन की प्रकृति एवं क्षेत्र

प्रबंधन निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु नियोजन, संगठन, नियुक्ति, निर्देशन एवं नियंत्रण की प्रक्रिया है। प्रबंधन का प्रयोग सर्वव्यापक एवं सार्वभौमिक है। यह सामूहिक उद्देश्य को प्रभावपूर्ण एवं कुशलतापूर्वक प्राप्त करने के लिए सामूहिक क्रियाओं को एक दिशा में निर्देशित करने की कला है। प्रबंधन की प्रकृति उतनी ही पुरानी है जितनी की मानव सभ्यता। 'प्रबंधन' शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है जो इसकी प्रकृति के विभिन्न पहलुओं को उजागर करते हैं। प्रबंधन के अध्ययन का विकास बीते समय में आधुनिक संगठनों के साथ–साथ हुआ है। यह प्रबंधकों के अनुभव एवं आचरण तथा सिद्धान्तों के सम्बन्ध समूह दोनों पर आधारित रहा है। प्रबंधन का विकास मानव के विकास के

टिप्पणी

साथ–साथ हुआ है। प्रबन्ध के उद्यम से लेकर आधुनिक समय तक इसमें अनेक परिवर्तन हुए हैं। विभिन्न रूप व स्वरूप में इसकी प्रकृति परिवर्तित होती रही है। जैसे–जैसे मानव सभ्यता का विकास हुआ और आवश्यकताओं ने अनिवार्य आवश्यकताओं का स्थान लेना प्रारम्भ किया, वैसे–वैसे प्रबंधन के महत्व में भी वृद्धि होती गई। विभिन्न अर्थशास्त्रियों एवं प्रबंधनशास्त्रियों की भिन्न–भिन्न विचारधारा के कारण प्रबंधन की प्रकृति में परिवर्तन होता गया।

अलग–अलग प्रबंधनशास्त्रियों ने अपनी विचारधारा के अनुरूप प्रबंधन की प्रकृति व स्वभाव को स्पष्ट किया है। अतः समस्त प्रबंधन शास्त्रियों की विचारधारा को निम्न वर्गों में विभाजित करके प्रबंधन की प्रकृति को स्पष्ट किया गया है–

1. प्रबंधन एक कला के रूप में

प्रबंधन में कला से सम्बन्धित समस्त गुण विद्यमान हैं। अतः प्रबंधन एक कला है। इसी प्रकार विज्ञान के भी अधिकांश गुण प्रबंधन में दृष्टिगोचर होते हैं। अतः प्रबंधन एक विज्ञान भी है। उन्नीसवीं शताब्दी तक प्रबंधन को केवल कला का ही दर्जा दिया जाता था। कला का अर्थ किसी कार्य को करने अथवा किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ज्ञान एवं कुशलता का उपयोग करना है। वास्तव में कला सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप प्रदान करने की विधि है। प्रबंधन में व्यवसाय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए ज्ञान व कुशलता का उपयोग निहित होता है। इस प्रकार प्रबंधन वह कला है जो किन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित हो।

कला मनुष्य के रचनात्मक कौशल और कल्पना का एक अनुप्रयोग है जो चित्रों, मूर्तिकला, संगीत, साहित्य और नृत्य के माध्यम से निर्मित होती है। कला इच्छित परिणामों को प्राप्त करने हेतु वर्तमान ज्ञान का व्यक्तिगत एवं दक्षतापूर्ण उपयोग है। इसे अध्ययन, अवलोकन एवं अनुभव से प्राप्त किया जा सकता है। क्योंकि अब कला का सम्बन्ध ज्ञान के व्यक्तिगत उपयोग से है। इसलिए अध्ययन किये गये मूलभूत सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने के लिए एक प्रकार की मौलिकता एवं रचनात्मकता की आवश्यकता होती है।

कला के आधारभूत लक्षण निम्नांकित हैं–

- **सैद्धान्तिक ज्ञान का होना**– कला इस पूर्वानुमान पर चलती है कि कुछ सैद्धान्तिक ज्ञान पहले से है। विशेषज्ञों ने अपने–अपने क्षेत्रों में कुछ मूलभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जो एक विशेष प्रकार की कला में प्रयुक्त होता है।
- **व्यक्तिगत योग्यतानुसार उपयोग**– मूलभूत ज्ञान का उपयोग व्यक्ति विशेष के अनुसार भिन्न–भिन्न होता है। इसी कारण कला अत्यन्त व्यक्तिगत अवधारणा है।
- व्यवहार एवं रचनात्मकता पर आधारित समस्त कला व्यवहारिक होती है। कला वर्तमान सिद्धान्तों के ज्ञान का रचनात्मक उपयोग है।

प्रबंधन एक कला है क्योंकि यह निम्न विशेषताओं को पूर्ण करती है–

- एक सफल प्रबंधक, उद्यमिता के प्रबंधन हेतु सदैव प्रयासरत रहता है जो कि अध्ययन, अवलोकन एवं अनुभव पर आधारित होते हैं। प्रबंधन के विभिन्न क्षेत्र

है, जिससे सम्बन्धित पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है। ये क्षेत्र हैं– विपणन, वित्त एवं मानव संसाधन जिनमें प्रबंधक की विशिष्टता होती है। इनके सिद्धान्त पहले से ही विद्यमान हैं।

टिप्पणी

- प्रबंधन के विभिन्न सिद्धान्त हैं जिनका प्रतिपादन अनेक प्रबंधन विचारकों ने दिया है तथा जो कुछ सर्वव्यापी सिद्धान्तों को अधिकृत करते हैं। कोई भी प्रबंधक इन वैज्ञानिक पद्धतियों एवं ज्ञान को दी गई परिस्थिति अथवा समस्या के अनुरूप अपने विशिष्ट तरीके से प्रयोग करता है। एक अच्छा प्रबंधक वह है जो व्यवहार, रचनात्मकता, कल्पना शक्ति, पहल क्षमता आदि को मिलाकर कार्य करता है। एक प्रबंधक एक दीर्घावधि के अभ्यास के पश्चात् संपूर्णता को प्राप्त करता है। प्रबंधन के विद्यार्थी भी अपनी सृजनात्मकता के आधार पर इन सिद्धान्तों को भिन्न–भिन्न तरीके से प्रयोग में लाते हैं।
- एक प्रबंधक इस प्राप्त ज्ञान को परिस्थितिजन्य वास्तविकता के परिदृश्य में व्यक्तिनुसार एवं दक्षतानुसार उपयोग करता है। वह संगठन की गतिविधियों में लिप्त रहता है। संवेदनशील परिस्थितियों का अध्ययन करता है एवं अपने सिद्धान्तों का निर्माण करता है जिन्हें प्रदत्त परिस्थितियों के अनुसार उपयोग में लाया जा सकता है। इससे प्रबन्ध की विभिन्न शैलियों का जन्म होता है।

  सर्वश्रेष्ठ प्रबंधक वे होते हैं जो समर्पित होते हैं, जिन्हें उच्च प्रशिक्षण एवं शिक्षा प्राप्त है, उनमें उत्कृष्ट आकांक्षा, स्व–प्रोत्साहन, सृजनात्मकता एवं कल्पनाशीलता जैसे व्यक्तिगत गुण होते हैं तथा वह स्वयं एवं संगठन के विकास की इच्छा रखता है।

2. प्रबंधन एक विज्ञान के रूप में

प्रबंधन एक क्रमबद्ध ज्ञान–समूह है, किन्हीं सामान्य सत्य अथवा सामान्य सिद्धान्तों को स्पष्ट करता है। विज्ञान की मूलभूत विशेषताएं निम्न हैं–

- **क्रमबद्ध ज्ञान–समूह**– विज्ञान, ज्ञान का क्रमबद्ध समूह है। इसके सिद्धान्त कारण एवं परिणाम के मध्य सम्बन्ध पर आधारित होते हैं।
- **परीक्षण पर आधरित**– वैज्ञानिक सिद्धान्तों को पहले अवलोकन के माध्यम से विकसित किया जाता है और फिर नियन्त्रित परिस्थितियों में बारम्बार परीक्षण कर उसकी जांच की जाती है।
- **व्यापक वैधता**– वैज्ञानिक सिद्धान्त, वैधता एवं उपयोग के लिए सार्वभौमिक होते हैं।

प्रबंधन विज्ञान के रूप में निम्नांकित विशेषताओं को धारण करता है–

- प्रबंधन क्रमबद्ध ज्ञान–समूह है। इसके अपने सिद्धान्त एवं नियम हैं जो समय–समय पर विकसित हुए हैं। ये अन्य विषय जैसे– अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र, मनोविज्ञान शास्त्र एवं गणित से भी प्रेरित होता है। अन्य किसी भी संगठित क्रिया के समान प्रबंधन की भी अपनी शब्दावली एवं अवधारणाओं का शब्दकोश है।
- प्रबंधन के सिद्धान्त, विभिन्न संगठनों में बार–बार परीक्षण व अवलोकन के आधार पर विकसित हुए हैं। प्रबंधन का सम्बन्ध मानव व मानवीय व्यवहार से

टिप्पणी

है, इसलिए इन परीक्षणों के परिणामों की न तो सही भविष्यवाणी की जा सकती है और न ही ये प्रतिध्वनित होते हैं। इन सीमाओं के साथ भी प्रबंधन के विद्वान प्रबंधन के सामान्य सिद्धान्तों की पहचान करने में सफल रहे हैं। उदाहरणार्थ– एफ.डब्ल्यू. टेलर के वैज्ञानिक प्रबंधन के सिद्धान्त एवं हेनरी फेयॉल के कार्यात्मक प्रबंधन के सिद्धान्त।

- प्रबंधन के सिद्धान्त विज्ञान के सिद्धान्तों के समान विशुद्ध नहीं होते हैं और न ही इनका उपयोग सार्वभौमिक होता है। इनमें परिस्थिति के अनुसार संशोधन किया जाता है। परन्तु यह प्रबंधकों को मानक तकनीक प्रदान करते हैं जिन्हें भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में प्रयोग में लाया जा सकता है। इन सिद्धान्तों का प्रबंधकों को प्रशिक्षण एवं उनके विकास के लिए भी उपयोग किया जाता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि प्रबंधन विज्ञान एवं कला दोनों की विशेषताओं युक्त है। प्रबंधन का उपयोग कला है। लेकिन प्रबंधन के सिद्धान्तों के उपयोग द्वारा यह श्रेष्ठतम स्तर तक पहुंच सकता है। कला एवं विज्ञान के रूप में प्रबंधन एक–दूसरे से भिन्न नहीं हैं, अपितु पूरक हैं।

3. प्रबंधन एक व्यवसाय के रूप में

यह सत्य सर्वविदित है कि समस्त प्रकार की संगठन प्रक्रियाओं का प्रबंधन आवश्यक है। संगठनों में प्रबंधन हेतु कुछ विशिष्ट योग्यताओं एवं अनुभव की आवश्यकता होती है। आधुनिक परिवेश में एक ओर तो व्यवसाय के निगमित स्वरूप में वृद्धि हुई है तथा दूसरी ओर व्यवसाय के प्रबंधन पर विशेष बल दिया जा रहा है।

प्रबंधन के व्यवसायिक स्वरूप को ज्ञात करने हेतु व्यवसाय की प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक है जो निम्नांकित है–

- **भलीभांति परिभाषित ज्ञान का समूह**– समस्त व्यवसाय भली–भांति परिभाषित ज्ञान के समूह पर आधारित होते हैं जिसे गुणवत्तायुक्त शिक्षा से प्राप्त किया जा सकता है।
- **अवरोधित प्रवेश**– व्यवसाय में प्रवेश, परीक्षा अथवा शैक्षणिक योग्यता के द्वारा सीमित होता है, जिससे व्यवसाय में कुशल, सक्षम तथा प्रवीण प्रबंधकों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके।
- **पेशागत परिषद**– समस्त व्यवसाय किसी न किसी परिषद सभा से सम्बन्धित होते हैं जो इनमें प्रवेश का नियमन करते हैं। कार्य करने के लिए प्रमाणपत्र जारी करते हैं एवं आचार संहिता तैयार करते हैं तथा उसको लागू करते हैं। यह परिषद व्यवसाय से सम्बन्धित कार्यों का नियमन तथा नियंत्रण करता है।
- **नैतिक आचार संहिता**– सभी व्यवसाय आचार संहिता से बंधे हैं जो उनके सदस्यों के व्यवहार तथा गतिविधियों को दिशा प्रदान करते हैं।
- **सेवा का उद्देश्य**– व्यवसाय का मूल उद्देश्य निष्ठा एवं प्रतिबद्धता है तथा अपने उपभोक्ताओं के हितों की साधना है।

प्रबंध, व्यवसाय के सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से पूरा नहीं करता है। इसमें कुछ विशेष विशेषताएं होती हैं, जो निम्न हैं–

टिप्पणी

- संपूर्ण विश्व में प्रबंधन विशेष रूप से एक संकाय के रूप में विकसित हुआ है। यह ज्ञान के व्यवस्थित समूह पर आधारित है जिसमें भली–भांति परिभाषित सिद्धान्त है जो व्यवसाय की विभिन्न स्थितियों पर आधारित है। इसका ज्ञान विभिन्न महाविद्यालय एवं पेशेवर संस्थानों में पुस्तकों व पत्रिकाओं के माध्यम से अर्जित किया जा सकता है। प्रबंधन को विषय के रूप में विभिन्न संस्थानों में पढ़ाया जाता है। इनमें से कुछ संस्थानों की स्थापना केवल प्रबंधन की शिक्षा प्रदान करने के लिए की गई है। जिनमें प्रवेश साधारणतया प्रवेश परीक्षा के माध्यम से होता है। उदाहरणार्थ भारतीय प्रबंधन संस्थान (आई.आई.एम.)।
- किसी भी व्यावसायिक इकाई में किसी भी व्यक्ति को प्रबंधक मनोनीत किया जा सकता है। व्यक्ति की कोई भी शैक्षणिक योग्यता हो उसे प्रबंधक कहा जा सकता है। संपूर्ण विश्व में प्रबंधक हेतु कोई डिग्री विशेष कानूनी रूप से अनिवार्य नहीं है।

भारत में प्रबंधन में संलग्न प्रबंधकों के अनेक संगठन है। (जैसे– ए.आई.एम.ए.) हैं। ये संगठन अपने सदस्यों के कार्यों के नियमन के लिए आचार संहिता बनाते हैं। प्रबंधकों हेतु इन संगठनों का सदस्य बनना आवश्यक नहीं होता है और न ही इनकी कोई वैधानिक मान्यता है।

- प्रबंधन का मूल उद्देश्य संगठन को अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना है।

प्रबंधन एक जन्मजात तथा अर्जित प्रतिभा है। (Management is in inborn and acquired quality)– कुछ व्यक्ति जन्म से ही इतने अधिक योग्य, कुशल, अनुभवी तथा दूरदर्शी होते हैं कि वे दूसरों पर कुशलतापूर्वक नेतृत्व संगठन करने की क्षमता रखते हैं। ये गुण इनमें जन्म से ही निहित होते हैं। इसलिए प्रबंधन एक जन्मजात प्रतिभा है। लेकिन आधुनिक युग में प्रबंधन प्रबन्धकीय शिक्षा प्राप्त व्यक्ति कर रहे हैं। अतः प्रबंधन एक जन्मजात प्रतिभा के साथ–साथ अर्जित प्रतिभा भी है।

प्रबंधन एक गत्यात्मक प्रक्रिया है (Management is a dynamic Process)– प्रबंधन एक गतिशील या गत्यात्मक प्रक्रिया है। इसके समस्त कार्य क्रियाशील रहते हैं। यहां गतिविधि का आशय विवेक एवं बुद्धि के साथ विभिन्न शक्तियों का उपयोग करने से है।

प्रबंधन एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है (Management is a Universal Process)– प्रबंधन घर में, विद्यालय में, संगठन में, धार्मिक संस्थानों के व्यवसाय में, व्यापार में, कार्यालयों में परिवहन में सर्वव्यापी है अतः यह सार्वभौमिक होता है। प्रबंधन के अभाव में किसी भी क्षेत्र में, किसी भी स्थान में कार्य विधिवत क्रमवार व पूर्व उद्देश्यानुसार संपन्न नहीं किया जा सकता। इसके साथ ही प्रबंधन कला एवं विज्ञान के रूप में सार्वभौमिकता को प्रमाणित करता है।

टिप्पणी

प्रबंधन एक प्रणाली है (Management is a Process)– प्रबंधन को एक प्रणाली या पद्धति के रूप में भी स्वीकार किया गया है। प्रणाली विभिन्न वस्तुओं या भाग का संयोजन है जो एक जटिल इकाई बनाती है। अतः यह एक प्रणाली है। कुछ विद्वानों ने इसे तंत्र की संज्ञा भी दी है। प्रणाली में सामान्यतः निम्न विशेषताएं होती हैं–

- प्रत्येक प्रणाली की उपप्रणाली होती है।
- प्रत्येक प्रणाली का एक निश्चित उद्देश्य होता है।
- प्रणाली में संदेशवाहक गतिमान रहना चाहिए।
- एक प्रणाली को अन्य प्रणाली से अलग नहीं किया जा सकता है।

अतः हम प्रबंधन को एक प्रणाली या तंत्र कह सकते हैं।

प्रबंधन एक सामाजिक प्रक्रिया है (Management is a Social Process)– प्रबंधन का स्थान परिवार, संप्रदाय व समाज में भी निहित रहता है। समाज व परिवार की व्यवस्था भी एक पूर्व निर्धारित योजना के अन्तर्गत संचालित होती है, यही सामाजिक प्रक्रिया है। प्रबंधन का मूल सम्बन्ध मानव से है और मनुष्य समाज का एक अंग है, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रबंधन का सम्बन्ध मनुष्य से होता है इसलिए इसे सामाजिक प्रक्रिया कहा गया है। ई.एफ.एल. ब्रेच ने प्रबंधन में मानव तत्व की विद्यमानता को ही सामाजिक प्रक्रिया कहा है।

प्रबंधन एक सामूहिक क्रिया है (Management is a groupActivity)– प्रबंधन को एक सामूहिक क्रिया इसलिए कहा जाता है क्योंकि संस्था के लक्ष्यों व उद्देश्यों की प्राप्ति एक व्यक्ति की तुलना में अनेक व्यक्तियों अथवा समूह के प्रयासों द्वारा होना अधिक सरल है।

प्रबंधन एक अदृश्य शक्ति है (Management is an invisible Power)– प्रबंधन एक अदृश्य शक्ति है जो साधनों के सर्वोत्तम उपयोग में सहयोग करती है।

4. प्रबंधन एक शास्त्र के रूप में

वर्तमान में प्रबंधन का अध्ययन एक विशिष्ट क्षेत्र बन गया है। वर्तमान में प्रबंधन के क्रमबद्ध अध्ययन की आवश्यकता हो गई है। अनुशासन ज्ञान एवं विवेक की एक शाखा है जिसमें मानसिक व नैतिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।

प्रबंधन में विशिष्ट ज्ञान, दक्षता, कुशलता, विवेक व दूरदर्शिता की आवश्यकता होती है जो कि जन्मजात व अर्जित दोनों प्रकार से संभव है। अब प्रबंधन के अपने सिद्धान्त, नियम व अपना स्वयं का विषय हो गया है।

वर्तमान में अधिकांश प्रबंधक कार्य पूर्व ही उपर्युक्त ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। अनेक संस्थान अध्ययन काल में ही कुशल विद्यार्थियों की नियुक्ति अपने संगठन के विकास हेतु करने का प्रयास करते हैं।

प्रबंधन शास्त्र ने भी समाजशास्त्र, नैतिक शास्त्र, मनोविज्ञान एवं अर्थशास्त्र आदि के नियमों व सिद्धान्तों के अनुरूप अपने सिद्धान्त विकसित कर लिए हैं। प्रबंधन शास्त्र

में गणित एवं सांख्यिकी के नियमों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। इस प्रकार प्रबंधन स्वयं में एक शास्त्र, संकाय या अनुशासन बन गया है।

प्रबंधन का विषय–क्षेत्र

टिप्पणी

प्रबंधन एक बहुप्रचलित शब्द है जिसे सभी प्रकार की क्रियाओं के लिए व्यापक रूप से प्रयुक्त किया गया है। प्रबंधन वह क्रिया है जो प्रत्येक उस संगठन के लिए आवश्यक है जिसमें लोग समूह में भिन्न–भिन्न प्रकार के कार्य एक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु करते हैं। प्रबंधन कर्मचारियों के प्रयत्नों व समान उद्देश्यों को प्राप्त करने में दिशा प्रदान करता है। इसे परिचालन क्षेत्र अथवा प्रबंधन के कार्यात्मक क्षेत्र भी कहा जाता है। प्रबंधन, एक सामाजिक और सार्वभौमिक प्रक्रिया होने के कारण, इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है।

प्रबंधन के मुख्य कार्यात्मक क्षेत्र निम्नांकित हैं–

1. **मानव संसाधन प्रबंधन**– मानव संसाधन विकास या कार्मिक प्रबंधन या जनशक्ति प्रबंधन किसी प्रतिष्ठान के सबसे मूल्यवान उन व्यक्तियों के प्रबंधन का कौशलगत और सुसंगत दृष्टिकोण है जो वहां कार्य कर रहे हैं तथा व्यक्तिगत व सामूहिक रूप से व्यापार के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान देते हैं। यह 'मैन मैनेजमेंट' से संबंधित प्रबंधन की एक विशेष शाखा है। इसमें भर्ती, प्रेरणा, अभिविन्यास, प्रशिक्षण, पदोन्नति, प्रदर्शन मूल्यांकन, वेतन, सेवानिवृत्ति, स्थानांतरण योग्यता रेटिंग, औद्योगिक सम्बन्ध, कार्य करने की स्थिति, ट्रेड यूनियन, कर्मचारियों की कल्याणकारी योजनाएं सम्मिलित हैं। कार्मिक प्रबंधन का उद्देश्य श्रमिकों और प्रबंधकों के मध्य सामंजस्य तथा टीम भावना उत्पन्न करना तथा इस भावना को प्रोत्साहित करना है।
2. **उत्पादन प्रबंधन**– उत्पादन प्रबंधन से आशय कार्य के नियोजन, संगठन, निर्देशन, समन्वय और नियंत्रण से है, जिससे वांछित वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन सही समय पर, सही मात्रा में तथा सही लागत पर संभव हो सके। उत्पादन प्रबंधन में निम्नलिखित कार्य सम्मिलित हैं–

– उत्पादन योजना और विकास

– संयंत्र स्थान, अभिन्यास और रखरखाव

– उत्पादन प्रणाली और मशीनें

– सामग्री का क्रय और भंडारण का प्रबंधन

– प्रभावी उत्पादन नियंत्रण सुनिश्चित करना।

3. **कार्यालय प्रबंधन**– "कार्यालय प्रबंधन को नियोजन, समन्वय के कार्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो कार्यालय में विशिष्ट उद्देश्यों के प्रति दूसरों के प्रयासों को प्रेरित करता है।"

   कार्यालय प्रबंधन को किसी भी व्यावसायिक उद्यम को उद्देश्यों की उपलब्धि की सुविधा के लिए कार्यालय की योजना, आयोजन, स्टाफिंग, निर्देशन, समन्वय और नियंत्रण की एक अलग प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

   कार्यालय प्रबंधन व्यावसायिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से कार्यालय गतिविधियों की योजना आयोजन, समन्वय और नियंत्रण की वह तकनीक है

और यह कार्यालय के कार्य के कुशल और प्रभावी प्रबंधन से संबंधित है। किसी व्यवसाय की सफलता का उसके कार्यालय की दक्षता पर निर्भर करती है।

कार्यालय प्रबंधन के मुख्य विषय हैं–

टिप्पणी

– कार्यालय आवास

– अभिविन्यास और पर्यावरण

– संचार

– पत्राचार और मेल

– टाइपिंग और डुप्लीकेटिंग

– रिकार्ड प्रबंधन और फाइलिंग

– अनुक्रमण

– प्रपत्र और स्टेशनरी

– मशीन और उपकरण

– कार्यालय रिपोर्टिंग

– कार्य माप

– कार्यालय पर्यवेक्षण

4. **वित्तीय प्रबंधन**– वित्तीय प्रबंधन का प्रमुख उद्देश्य लाभ एवं व्यवसाय की परिसम्पत्तियों को अधिकतम करना होता है।

   वित्तीय प्रबंधन एक व्यवसाय की वह संचलनात्मक प्रक्रिया है जो कुशल प्रचालनों के लिए आवश्यक वित्त को प्राप्त करने तथा उसका प्रभावशाली तरीके से उपयोग करने हेतु उत्तरदायी होता है।

   वर्तमान समय में वित्तीय प्रबंधन के अन्तर्गत कोषों को एकत्रित करने के साथ–साथ नियोजन, निर्णयन, संचालन, पूंजी स्रोतों के निर्धारण एवं अनुकूलन प्रयोग से घनिष्ठतापूर्वक संबंधित है।

   वित्तीय प्रबंधन के विषय हैं–

– पूंजी का पूंजीगत व्यय

– निवेश सूची प्रबंधन

– लाभांश नीति

– वित्त के लघु और दीर्घकालिक स्रोत।

वित्तीय प्रबंधन में मुख्य रूप से तीन निर्णय सम्मिलित होते हैं–

– **निवेश नीतियां**– यह पूंजी बजटिंग और व्यय से जुड़ी प्रक्रिया को निर्धारित करता है। धन व्यय करने के सभी प्रस्तावों को क्रमबद्ध किया जाता है और निवेश के निर्णय लिये जाते हैं।

– **वित्त पोषण के तरीके**– उद्यम को न्यूनतम जोखिम पर प्रस्तावित उपक्रमों के लिए आवश्यक धन उपलब्ध कराने के लिए लघु व दीर्घकालिक वित्त पोषण का उचित मिश्रण सुनिश्चित किया जाता है।

टिप्पणी

– **लाभांश निर्णय**– यह निर्णय शेयरधारकों को भुगतान की गई राशि और स्टॉक के अतिरिक्त शेयरों के वितरण को प्रभावित करता है।

5. **विपणन प्रबंधन**– फिलिप कोटलर, विपणन को एक सामाजिक और प्रबंधकीय प्रक्रिया के रूप में देखता है। जिसके द्वारा व्यक्तियों और समूह को वह प्राप्त होता है जो वे चाहते हैं और दूसरों के साथ उत्पादों और मूल्यों का निर्माण और आदान–प्रदान करते हैं। अमेरिकन मार्केटिंग एसोसिएशन ने विपणन प्रबंधन को व्यक्तिगत और संगठनात्मक उद्देश्यों को पूर्ण करने वाले विनिमय बनाने के लिए विचारों, वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन, मूल्य निर्धारण, प्रचार और वितरण की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करता है।

विपणन प्रबंधन के विषय में सम्मिलित हैं–

– विपणन अवधारणा
– उपभोक्ता व्यवहार
– विपणन मिश्रण
– बाजार विभाजन
– उत्पाद और मूल्य निर्णय
– पदोन्नति और भौतिक वितरण
– विपणन अनुसंधान और सूचना
– अन्तर्राष्ट्रीय विपणन।

आधुनिक विपणन डी मार्केटिंग, रीमार्केटिंग, ओवर–मार्केटिंग और मेटा–मार्केटिंग के माध्यम से मांग और आपूर्ति के अंतर को पाट रहा है। आधुनिक विपणन, सामाजिक दृष्टि से वह बल है जो समाज की आवश्यकताओं और इच्छाओं को पूर्ण करने हेतु एक राष्ट्र की औद्योगिक क्षमता का दोहन करता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. संज्ञा, प्रक्रिया एवं अनुशासन के रूप में प्रबंधन की अवधारणा किसने दी?
   (क) एफ. डब्ल्यू टेलर (ख) थियो हैमन
   (ग) हेनरी फेयोल (घ) जार्ज.आर. टैरी
2. वैज्ञानिक प्रबंधन के महत्तापरक सिद्धांतों में इनमें से क्या शामिल नहीं है?
   (क) अभिप्रेरण (ख) क्रियात्मक संगठन
   (ग) विघटन (घ) मानसिक क्रांति

1.3 संगठन में प्रबंधन का महत्व एवं प्रबंधन के तत्व

प्रबंधन एक संगठन की संस्कृति को आकार प्रदान करने में अहम भूमिका निभाता है। व्यावसायिक संगठन का प्रदर्शन और अस्तित्व उसके प्रबंधन पर निर्भर करता है।

टिप्पणी

पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, 'प्रबंधन आधुनिक संस्थान का विशिष्ट अंग है। जिसके प्रदर्शन पर संस्था का अस्तित्व पर निर्भर करता है। प्रबंधन प्रत्येक व्यवसाय में गतिशीलता जीवन देने वाला तत्व है। इसके बिना उत्पादन के संसाधन, मात्र संसाधन बने रहते हैं और कभी भी उत्पादन नहीं बनते हैं।'

प्रबंधन उत्प्रेरक है जिसके बिना कोई संगठन जीवित और विकसित नहीं हो सकता है। प्रबंधन समस्त संस्थानों में अनिवार्य है। यह एक रचनात्मक शक्ति है, जो संसाधनों के इष्टतम उपयोग में सहायता करता है। समूह प्रयासों की योजना बनाने, व्यवस्थित करने, निर्देशित करने और नियंत्रित करने हेतु प्रबंधन की आवश्यकता होती है। प्रबंधन व्यक्तियों को नेतृत्व और प्रेरणा प्रदान करता है। एक संगठन में प्रबंधन की निरन्तर आवश्यकता होती है। एक अभिनव बल के रूप में, प्रबंधन एक संगठन में, मानव शरीर के मस्तिष्क के समान कार्य करता है। यह मौलिक समन्वय तंत्र है जो संगठित प्रयासों का पालन करता है। संगठनों के आकार, जटिलता, अशांत वातावरण तथा व्यापार के उत्तरदायित्वों में वृद्धि के कारण आजकल प्रबंधन का महत्व काफी बढ़ गया है।

प्रबंधन उत्पादन को अधिकतम करने और लागत को कम करने में सहायक होता है। यह एक संगठन और इसके निरन्तर परिवर्तित वातावरण के मध्य एक गतिशील संतुलन बनाये रखता है। प्रबंधन संगठनों के निर्माण, अस्तित्व और विकास हेतु उत्तरदायी होता है।

आधुनिक समाज अपने अस्तित्व के लिए संगठनों पर निर्भर करता है। संगठन निम्नलिखित रूप में समाज की सहायता करते हैं–

- ये व्यक्तिगत लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं।
- ये पूर्व की उपलब्धियों को संग्रहित कर ज्ञान का संरक्षण करते हैं और भविष्य की पीढ़ियों के लिए ज्ञान प्रदान करते हैं।
- ये व्यक्तियों को व्यवसाय के अवसर प्रदान करते हैं।

1.3.1 संगठन में प्रबंधन की महत्ता

एक उचित रूप से प्रबंधित संगठन अपने संसाधनों का प्रभावी ढंग से उपयोग कर सकता है और अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के साथ–साथ समाज की आवश्यकताओं को भी पूर्ण कर सकता है। प्रबंधन सफलता की मूलभूत कुंजी है। ड्रकर के अनुसार 'प्रबंधक को सर्वाधिक अवसर बनाने की आवश्यकता है। विश्व के प्रत्येक राष्ट्र में प्रबंधन हेतु रुचि बड़े पैमाने पर प्रसारित हो रही है।

प्रबंधन का महत्व निम्नांकित है–

– **संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति**– प्रबंधन संगठनों को अपने लक्ष्यों को प्रभावशाली तरीके से तैयार करके और उन्हें कुशलतापूर्वक प्राप्त करने हेतु योजनाओं और नीतियों को तैयार करने में सहायता करता है।

– **संगठनात्मक संसाधनों का इष्टतम उपयोग**– प्रबंधन संगठन को अपने दुर्लभ संसाधनों (मानव, भौतिक तथा वित्तीय) का कुशलतापूर्वक उपयोग करने में सहायक होता है।

टिप्पणी

संगठन में मानव संसाधन स्वरूप अपनी प्रतिभा, कौशल, ज्ञान, अनुभव तथा कम से कम संसाधनों में अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रभावी रूपान्तरण के लिए क्षमताओं से युक्त लोग आवश्यक होते हैं।

भौतिक संसाधन कच्चे माल या संयंत्र और मशीनरी है जो वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के लिए आवश्यक है।

वित्तीय संसाधन से तात्पर्य उस धन से है जो कि कच्चे माल, श्रम, मशीनरी और अन्य वर्तमान और अचल संपत्तियों की संगठनात्मक अल्पकालिक और दीर्घकालिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु आवश्यक है।

– **प्रबंधकों की विश्लेषणात्मक और वैचारिक क्षमता विकसित करना**– प्रबंधन संगठनात्मक समस्याओं का विश्लेषण करने, उन्हें अन्य संगठनात्मक मामलों से जोड़ने और संगठनात्मक लक्ष्यों की दिशा में तैयार किये गए समाधानों तक पहुंचने में सहायता प्रदान करता है।

– **अनेक लक्ष्यों के मध्य संतुलन**– अनेक बार, प्रबंधकों को एक समय में अनेक लक्ष्यों का सामना करना पड़ता है जिन्हें एक साथ प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह तय करना अधिक महत्वपूर्ण है कि विभिन्न संगठनात्मक लक्ष्यों के लिए दुर्लभ संगठनात्मक संसाधनों को बेहतर तरीके से आवंटित किया जा सकता है जो कि प्रबंधन के माध्यम से सुविधापूर्वक की जा सकती है।

– **आर्थिक और सामाजिक विकास**– ड्रकर का कहना है कि 'विकासशील देश अविकसित नहीं हैं। वे कमतर हैं।' यदि प्रबंधन का ज्ञान विकसित देशों में स्थानांतरित किया जाता है तो विकासशील देश अपनी उद्यमशीलता की क्षमता, प्रबंधकीय उत्कृष्टता, बचत की दर, पूंजी निर्माण द्वारा आर्थिक और सामाजिक विकास करने में सक्षम होंगे।

– **प्रतिस्पर्धात्मक प्रतियोगिता**– समस्त व्यवसाय उत्पादों/सेवाओं की मांग में वृद्धि के साथ प्रतिस्पर्धा का अनुभव करते हैं। इस प्रकार व्यवसाय अधिक बिक्री, अधिक लाभ और उच्च मूल्यों, उत्पादों और सेवाओं का सर्वोत्तम मूल्य, गुणवत्ता और सेवा प्रदान करके एक–दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। तदनुसार मानव और भौतिक संसाधनों को बढ़ती प्रतिस्पर्धा के साथ उपयुक्त ढंग से प्रबंधित करने की आवश्यकता होती है। प्रबंधन नवाचार को तेजी से बदलती प्रौद्योगिकी के रूप में बढ़ावा देता है। सामाजिक प्रक्रियाएं और संगठन संरचनाएं संगठनात्मक कार्य का अनिवार्य हिस्सा बन गई हैं। प्रबंधन संगठनों को जटिल पर्यावरणीय परिवर्तनों को अपनाने और उनकी क्षमता के स्तर को बढ़ावा देने में सहायता करता है।

– **सुधार, समाज और सरकार**– प्रबंधन व्यक्तिगत मूल्यों, परम्परा और सामाजिक संस्कृति के लिए सम्मान सिखाता है। एक संगठन जितना अधिक समाज की परम्पराओं, रीति–रिवाजों, मूल्यों और मान्यताओं में विश्वास करता है उतना ही अधिक संगठन समाज और सरकार द्वारा स्वीकार किया जाता है।

– **सामाजिक नवाचार**– सक्षम और कुशल प्रबंधकों के माध्यम से हमारे व्यक्तियों, समाज तथा राष्ट्र का कल्याण संभव हो पाता है। इसलिए प्रबंधन को ज्ञान

टिप्पणी

समाज के सामाजिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। 'आर्थिक और सामाजिक विकास प्रबंधन का परिणाम है। विकास धन के बजाय मानव ऊर्जा का विषय है और मानव ऊर्जा की दिशा और दशा प्रबंधन का कार्य है। प्रबंधन एक प्रस्तावक है और विकास एक परिणाम है।

– **सुदृढ़ आधार से संगठन**– स्पष्ट रूप से परिभाषित कार्य, प्राधिकरण वाले लोगों को उचित वितरण संगठन को आधार प्रदान करता है। यह संगठनात्मक गतिविधियों में दोहराव और भ्रम से बचने के लिए उचित व्यक्ति को उचित कार्य सौंपता है।

– **प्रभावी नेतृत्व और प्रेरणा**– उचित प्रबंधन सामूहिक प्रयासों को अधिक प्रभावी बनाता है। यह कर्मचारियों को सहकारी रूप से स्थानांतरित करने और समन्वित तरीके से लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। एक अच्छा प्रबंधक समूह कार्य, कर्मचारियों को आवश्यक मार्गदर्शन, परामर्श और प्रभावी नेतृत्व प्रदान करके उच्चतर कार्य करने हेतु प्रेरित करता है।

– **परिवर्तन और विकास**– एक कुशल प्रबंधक में दूरदर्शिता का गुण भी पाया जाता है। प्रबंधक आने वाले परिवर्तनों (संसाधनों की कुशल उपयोग के साथ संयुक्त पूर्वानुमान) की भविष्यवाणी करके और उचित कदम उठाकर एक संगठन की सहायता करते हैं। सफल प्रबंधक वे होते हैं जो निष्क्रिय परिस्थितियों के साथ बिना प्रभावित हुए बदलती परिस्थितियों का पूर्वानुमान और समायोजन करते हैं।

– **जीवन स्तर में सुधार**– महान अर्थशास्त्री 'शुम्पीटर' (Schumpeter) ने प्रबंधन और उद्यमियों को विकास के ईंजन के रूप में संदर्भित किया है।

ड्रकर ने एक उद्यम के प्रबंधन को 'जीवन रक्त' कहा है। इनके अनुसार, प्रबंधन को 'आर्थिक और सामाजिक' विकास में महत्वपूर्ण कारक बताया है।

आर्थिक प्रगति के सम्बन्ध में प्रबंधन सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक गतिविधि है। भौतिक, वित्तीय और जनशक्ति संसाधन, स्वयं में निष्क्रिय तत्व हैं उन्हें उचित व प्रभावशाली प्रबंधन के माध्यम से संयोजित व समन्वित किया जाना चाहिए।

– **उत्पादकता में वृद्धि**– उत्पादकता वृद्धि में प्रबंधन अति महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सुनिश्चित करता है कि पूंजी, श्रम, ऊर्जा, कच्चे माल जैसे संसाधनों को संगठन द्वारा नियोजित तरीके से विशेष अवधि में कुशलतापूर्वक उपयोग किया जा रहा है। संगठन में लक्ष्य प्राप्ति में भी प्रबंधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

– **वास्तविक मूल्यों से जोड़ना**– कुशलतापूर्वक किया गया प्रबंधन कर्मचारियों में 'समूह कार्य' की भावना को उत्पन्न करता है। एक अच्छा प्रबंधक कर्मचारियों में नए विचार, कल्पनाशक्ति तथा उत्साह का संचार करता है। एक अच्छा और सकारात्मक प्रबंधन, सुविधाओं और उपलब्धता द्वारा एक बेहतर मानक विकसित कर सकता है; जिससे व्यक्ति उच्च गुणवत्तायुक्त जीवनयापन कर सकें।

– **समस्त संगठनों हेतु आवश्यक**– प्रबंधन सरकारी, गैर–सरकारी, लाभ, गैर–लाभकारी, शैक्षिक, धार्मिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय तथा धर्मार्थ संगठनों हेतु

टिप्पणी

अति महत्वपूर्ण है। प्रबंधन घरों, परिवारों, समाजों तथा संघों के मध्य भी पाया जाता है, जिनमें भौतिक संसाधनों के साथ मानवीय गतिविधियों की आवश्यकता होती है।

– **नये तकनीकी आविष्कार**– आधुनिक विज्ञान और तकनीकी आविष्कारों ने उत्पादन प्रक्रियाओं को जटिल बना दिया है जिसके परिणामस्वरूप परिष्कृत मशीनों और विधियों की मांग में वृद्धि हुई है। इन आविष्कारों से मानव संसाधनों पर निर्भरता में कमी आई है; जिससे प्रबंधन की आवश्यकता को बढ़ावा मिला है।

– **वातावरण का विश्लेषण**– प्रबंधन एक संगठन को अपनी शक्तियों तथा कर्मचारियों का विश्लेषण करने में सक्षम बनाता है। यह स्वॉट (SWOT) विश्लेषण की सहायता से किया जाता है। यह प्रबंधकों को जोखिमों का कम करने तथा पर्यावरणीय अवसरों व व्यावसायिक लाभ को अधिकतम करने में सहायता करता है।

निम्नांकित चुनौतियों के कारण आधुनिक समय में प्रबंधन के महत्व में वृद्धि हुई है–

- व्यवसाय के बढ़ते आकार और जटिलता।
- कार्य विशेषज्ञता में वृद्धि।
- बाजार में प्रतियोगिता।
- श्रम के बढ़ते संघटन।
- परिष्कृत व पूंजीगत गहन प्रौद्योगिकी।
- व्यापार निर्णयों की जटिलता में वृद्धि।
- सरकार द्वारा व्यवसाय के बढ़ते विनियमन।
- अनुसंधान और विकास की आवश्यकता।
- व्यापार का अशांत वातावरण।
- मालिकों, ग्राहकों, श्रमिकों और जनता के हितों को सुलझाने की आवश्यकता।
- दुर्लभ संसाधनों के इष्टतम उपयोग की आवश्यकता।

आधुनिक समाज में प्रबंधन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह सामाजिक प्रगति, उत्पादकता वृद्धि, रोजगार वृद्धि, आय वृद्धि, बेहतर प्रदर्शन तथा समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादन के कारखानों का आयोजन करता है। यह सामाजिक विकास और जनता के कल्याण को प्रोत्साहन देता है। प्रबंधन समाज के कल्याण में एक निर्णायक भूमिका निभाता है।

एक गतिशील व्यवहार्य समाज वह है जो अनेक गतिशील, व्यवहार्य संस्थानों से निर्मित होता है, जो संपूर्ण समाज के कल्याण हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। जॉन गार्डनर ने कहा है 'एक समाज अपने संस्थानों की भांति ही स्वस्थ है। अगर वे विकास कर रहे हैं, तो वह भी विकसित होता है, परन्तु यदि वे सड़ रहे हैं तो यह भी सड़ जाता है।'

प्रबंधन व्यक्ति विशेष हेतु, परिवार हेतु, समाज हेतु, राष्ट्र तथा समस्त विश्व के कल्याण हेतु एक मील का पत्थर साबित हुआ है।

टिप्पणी

1.3.2 प्रबंधन के तत्व

व्यवस्था/प्रबंधन एक गत्यात्मक तथा परिवर्तनशील प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत निर्णय लेना और उसके अनुसार कार्य करना सम्मिलित है। प्रबंधन एक मानसिक प्रक्रिया है जो लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया आयोजन, संगठन, नियंत्रण एवं मूल्यांकन है। उपलब्ध संसाधनों से निर्धारित लक्ष्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया जा सकता है। यह प्रबंधक की योग्यता, रुचि एवं नेतृत्व करने की क्षमता पर निर्भर करता है।

न्यूमैन के अनुसार, प्रबंधन प्रक्रिया प्रशासनात्मक कौशल है जिसके निम्न 5 चरण हैं–

1. आयोजन (Planning)
2. संगठन (Organizing)
3. साधनों का एकीकरण (Assembling Resources)
4. निर्देशन (Directing)
5. नियंत्रण (Controlling)

प्रबंधन के अन्तर्गत सात प्रमुख तत्व सम्मिलित हैं–

1. आयोजन (Planning)
2. संगठन (Organizing)
3. स्टाफिंग (Staffing)
4. नेतृत्व करना/निर्देशन (Directing)
5. समन्वय (Coordination)
6. नियंत्रण (Controlling)
7. मूल्यांकन/नियोजन (Evaluation)

आयोजन (Planning)– प्रबंधन के तत्वों में आयोजन सर्वाधिक मान्यताप्राप्त व सर्वाधिक प्राचीन तत्व है। अच्छे आयोजन के परिणाम अच्छे और लाभप्रद होते हैं। आयोजन इसलिए महत्वपूर्ण होता है कि इसे कार्य को आरम्भ करने से पहले ही सम्पन्न किया जाता है। पूर्व आयोजन करने के परिणामस्वरूप कार्य को पूर्ण इकाई के रूप में देखा जा सकता है जिससे सरलतापूर्वक एवं शीघ्रतापूर्वक लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

- पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार, 'आयोजन/नियोजन मात्र कार्य सूची बना लेना ही नहीं है वरन् यह एक बुद्धिमतापूर्ण वैज्ञानिक पद्धति है।'
- गुलिक के अनुसार, 'आयोजन या नियोजन' को प्रशासन का प्रथम कार्य बताया है। उद्देश्य निर्धारण के अनुरूप कार्य योजना बनाना और यह तय करना कि कार्य कौन करेगा, कब करेगा, कैसे और कहां करेगा आदि प्रशासन की सर्वत्र ही सर्वप्रथम क्रिया स्वीकारी जाती है।'

टिप्पणी

- टेरी के शब्दों में, 'आयोजन/नियोजन भविष्य में झांकने की प्रक्रिया है। वस्तुतः नियोजन उद्देश्य प्राप्ति के लिए किये जाने वाले कार्यों और अपनाये जाने वाली प्रक्रियाओं की एक रूपरेखा है।'
- डिमॉक के अनुसार, 'आयोजन या नियोजन भावी कार्य के लिए आधार की रूपरेखा बनाने की प्रक्रिया है।'

नियोजन की आवश्यकता (Need of Planning)

किसी भी व्यक्ति या समूह को प्रभावशाली तरीके से कार्य करने के लिए आवश्यक होता है कि वह अपने लक्ष्यों को दृष्टिगत रखें और उन्हें प्राप्त करने की विधि उसे स्पष्ट होनी चाहिए। यदि व्यक्ति यह जानता है कि उसे क्या प्राप्त करना है। तो उसके द्वारा किया गया प्रयास प्रभावशाली होता है और यही नियोजन का कार्य है, जो सभी प्रबंधकीय कार्यों का आधार होता है। इसमें भविष्य में किये जाने वाले कार्यों हेतु विभिन्न विकल्पों में से महत्वपूर्ण एवं उपयुक्त विकल्प का चयन किया जाता है। इसमें लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को निर्धारित करने की आवश्यकता होती है तथा उन्हें प्राप्त करने के तरीकों का निर्धारण किया जाता है। इस प्रकार नियोजन पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने का एक विवेकपूर्ण तरीका है।

किसी कार्य को सम्पन्न करने से पूर्व यह बेहतर होता है कि उसके विभिन्न पहलुओं और पक्षों को पहले से निर्धारित कर लिया जाये। नियोजन भावी कार्य प्रक्रिया के स्वरूप को निर्धारित करता है।

हम कहां हैं? और कहां जाना है? इन दोनों प्रश्नों के मध्य नियोजन पुल का निर्माण करती है। यह एक बुद्धिमतापूर्ण कार्य है जिससे क्रिया की विधि का सचेततापूर्ण निर्धारण किया जाता है।

यह उपलब्ध संसाधनों और उनके युक्तिसंगत आवंटन को सुनिश्चित कर कार्य की दिशा को लक्ष्य की दिशा प्रदान करता है।

आर.सी. माहेश्वरी के अनुसार, 'यह एक विवेकपूर्ण प्रक्रिया है जो समस्त मानव व्यवहारों में पायी जाती है।'

टेलर ने नियोजन को वैज्ञानिक प्रबंधन का आधार माना है और कहा है कि 'यदि संगठनों को उद्देश्य प्राप्ति में सफल होना है तो उन्हें योजना का निर्माण करना चाहिए।'

यह नियोजन की महत्ता ही है कि साम्यवादी देशों में प्रसिद्धि के पश्चात् पूंजीवादी देशों ने भी प्रारंभिक विरोध के पश्चात् अंततः मॉडल अपनाये। विकासशील देशों के समरूप आर्थिक–सामाजिक विकास, आधारिक संरचना के निर्माण और संसाधनों के युक्तियुक्त दोहन में नियोजन एक प्रबल प्रभावी यंत्र की पहचान बना चुका है। नियोजन का महत्व निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण लक्ष्यों के कारण होता है–

– **अनिश्चितता को दूर करना (To Off set Uncertaintity)**– भविष्य अनिश्चित होता है तथा योजना का क्रियान्वयन भी भविष्य में किया जाता है। अतः इस अनिश्चितता को दूर करने के लिए ही नियोजन किया जाता है।

टिप्पणी

– **उद्देश्यों को महत्व प्रदान करना अथवा ध्यान देना (To give importance or focusAttention on objectives)**– नियोजन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु ही किया जाता है। व्यक्ति अथवा समूह का ध्येय लक्ष्य प्राप्ति ही रहता है। उद्देश्य पर ध्यान केन्द्रित रहने से योजना भी ठीक बनती है और व्यक्ति को अपने लक्ष्य भी स्पष्ट व निश्चित ज्ञात होते हैं। भली–भांति विचारपूर्वक बनाई गई संपूर्ण योजना अन्य क्रियाओं को एक रूप करती है तथा आकस्मिक समस्याओं को हल भी किया जा सकता है, साथ ही भविष्य की योजनाओं पर भी ध्यान दिया जा सकता है। समय–समय पर लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए योजना में संशोधन एवं आवश्यकतानुसार सुधार भी किया जाता है।

– **नियंत्रण करने के लिए (To Facilitate Control)**– योजना के क्रियान्वयन के समय नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है अन्यथा संस्था को प्रत्येक व्यक्ति अलग ढंग से उस योजना पर कार्य करेगा। परिणामस्वरूप योजना सफल नहीं हो सकेगी।

– **मितव्ययिता हेतु (To Gain Economical Operation)**– यदि सोच–विचार कर योजना के समस्त पहलुओं को ध्यान में रखकर क्रियान्वयन किया जाता है तब अनावश्यक व्यय पर प्रतिबंध लग जाता है।

नियोजन की विशेषताएं

– यह एक मानसिक प्रक्रिया है।

– यह एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।

– यह कार्य से पूर्व की जाने वाली प्रक्रिया है।

– यह एक वैज्ञानिक पद्धति है, जिसमें क्रमबद्धतापूर्वक कार्य होता है।

– यह निर्णयों की एक संगठित प्रक्रिया है।

– यह एक बुद्धिमतापूर्ण एवं विवेकपूर्ण कार्य है।

– यह लक्ष्य प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है।

– इसके अन्तर्गत साधनों को व्यवस्थित किया जाता है।

– संगठन के कर्मचारियों में योग्यतानुसार कार्यों का विभाजन भी किया जाता है।

नियोजन के प्रकार

नियोजन के निम्नांकित तीन विभेद किए जाते हैं–

(i) दीर्घकालीन (ii) मध्यवर्ती (iii) अल्पकालीन

योजना प्रक्रिया

लुईस ए. एवन के अनुसार, योजना सात प्रमुख क्रियाओं द्वारा तैयार की जा सकती है–

– उद्देश्यों को विकसित करना (Developing Objectives)

– भविष्यवाणी करना (Forecasting)

– कार्यक्रम निर्माण (Programming)

– समय अनुसूची बनाना (Scheduling)

टिप्पणी

– बजट तैयार करना (Budgeting)

– नीति विकसित करना (Developing Policies)

– प्रक्रिया का विकास (Developing Procedure)

मिलेट के अनुसार नियोजन में निम्नांकित तीन प्रमुख चरण होते हैं–

– लक्ष्यों का निर्धारण

– उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध साधनों का आकलन

– निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बनाये गये कार्यक्रम की तैयारी।

ग्रास व क्रैण्डल के अनुसार, नियोजन व्यक्तिगत–उद्देश्यीय निर्णयों की शृंखला होती है। यह शृंखला निम्न रूपों में परस्पर निर्भर होती है–

– समस्या को परिभाषित करना

– विकल्पों को ढूंढना

– विकल्पों के उपयोग के अनुसार उन पर विचार करना

– अधिकतम उपयुक्त सम्भावित हल का चयन करना

– उत्तरदायित्व को स्वीकार करना।

नियोजन की सफलता

नियोजन की सफलता के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है–

– नियोजन इस प्रकार होना चाहिए कि वह संगठन व संगठन के व्यक्तियों की आवश्यकता को पूर्ण करें और उनके उपयुक्त हों।

– योजना वास्तविक होनी चाहिए तथा हमारे संसाधनों के अनुरूप होनी चाहिए।

– योजना लचीली होनी चाहिए विशेषकर दीर्घकालीन योजनाओं के लिए।

– योजना बनाने तथा उसके क्रियान्वयन में बहुत अधिक अंतर नहीं होना चाहिए।

1.3.3 संगठन और नियोजन

नियोजन से सम्बन्धित प्रत्येक पहलू को संगठित करना ही संगठन है। संस्था में विभिन्न योजनाएं बनाई जाती हैं और उन्हें क्रियान्वित करने हेतु विभिन्न क्रियाएं भी की जानी आवश्यक हैं किन्तु यदि इन क्रियाओं को कुशलता व सफलतापूर्वक करना है तो इनका संगठन करना अत्यन्त आवश्यक है। संगठन वास्तव में वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत क्रियाओं का विभाजन तथा समूहीकरण किया जाता है तथा उन्हें संपन्न करने का उत्तरदायित्व व्यक्तियों को सौंपा जाता है।

संगठन का अर्थ है– व्यक्तियों के कर्तव्यों का निर्धारण तथा समूहीकृत गतिविधियों के मध्य प्राधिकरण सम्बन्धी स्थापना तथा रखरखाव।

नियोजन द्वारा उद्देश्य एवं लक्ष्य आदि निर्धारित करने के पश्चात् उन्हें क्रियान्वित करना होता है, जिन्हें प्रबंधक संगठन के माध्यम से करता है। संगठन का आशय योजना द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति करने वाले तंत्र से है। उपक्रम की

टिप्पणी

योजनाएं संगठन के अभाव में सदैव निष्फल ही होती हैं। अतः नियोजन द्वारा निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को क्रियान्वित करने तथा उन्हें प्राप्त करने हेतु यह आवश्यक है कि एक ऐसे कुशल एवं प्रभावशाली संगठन का निर्माण किया जाये जिसमें नियुक्त समस्त अधिकारी व कर्मचारी अपने निर्धारित कार्यों को इस प्रकार संपन्न करें कि उनके कार्यों में किसी प्रकार की कोई कठिनाई उत्पन्न न हो।

प्रबंधक को उपक्रम के संपूर्ण कार्य को छोटी–छोटी क्रियाओं में बांटकर उन्हें इस प्रकार समूहबद्ध करें कि एक प्रकार की क्रियाएं एक ही समूह में सम्मिलित हों। इन क्रियाओं के विश्लेषण उपरान्त उन्हें अधिकारियों को उनकी योग्यता एवं कुशलता के अनुरूप सौंपा जाना चाहिए।

उन्हें अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक व उत्साहपूर्वक सम्पन्न कराने के लिए पर्याप्त अधिकार व सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए। उपक्रम में संगठन इसलिए इस भी आवश्यक है।

- न्यूनतम प्रयासों में संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति करना।
- उपलब्ध संसाधनों का अपव्यय न हो।
- कार्यरत व्यक्तियों के मध्य संबंधों की स्थापना करना।

इसलिए प्रबंधक को एक संगठक तथा संगठन को प्रबंधन का तंत्र कहा जाता है।

संगठन, निर्धारित नियोजन के क्रियान्वयन हेतु कार्य सौंपने, कार्यों को समूहों में बांटने, अधिकार निश्चित करने एवं संसाधनों के आवंटन के कार्य का प्रबंधन करता है। एक बार संगठन के उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए विशिष्ट योजना तैयार कर ली जाती है तो फिर संगठन योजना के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक क्रियाओं एवं संसाधनों की जांच करता है। यह आवश्यक कार्यों एवं संसाधनों का निर्धारण करता है। यह निर्णय लेता है कि कौन–सा व्यक्ति किस कार्य को करेगा। उन्हें कहां करना है तथा कब करना है? संगठन में आवश्यक कार्यों को प्रबंधन के योग्य विभाग एवं कार्य इकाइयों में विभाजित किया जाता है और संगठन की अधिकार श्रृंखला में अधिकार एवं वितरण देने के संबंधों का निर्धारण किया जाता है। संगठन की उचित तकनीक कार्य को पूर्ण करने एवं प्रचलन की कार्यक्षमता एवं परिणामों की प्रभावपूर्णता के संवर्धन में सहायता करते हैं। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों को कार्य की प्रकृति के अनुसार भिन्न–भिन्न ढांचों की आवश्यकता होती है।

निकिल एवं अर्सी के अनुसार, 'संगठन को हम ऐसी उपयुक्त प्रक्रिया के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो कि कार्य व्यक्ति और अन्य साधन तथा नेतृत्व और उत्तरदायित्वों के मध्य उपयुक्त सम्बन्ध स्थापित करती है।'

संगठनात्मक प्रबंधन (नियोजन) के विविध चरण–

(क) स्टाफिंग

स्टाफिंग विशिष्ट पदों के लिए संगठन में योग्य उम्मीदवारों को काम पर रखने की प्रक्रिया है। प्रबंधन में, स्टाफिंग का अर्थ कर्मचारियों को उनके कौशल, ज्ञान का मूल्यांकन करके भर्ती करने की एक प्रक्रिया है और उसके बाद उन्हें विशिष्ट नौकरी की भूमिका प्रदान करना है।

टिप्पणी

'स्टाफिंग को प्रबंधन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यों में से एक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसमें सही समय पर सही कार्य पर सही 'कर्मियों' की खाली स्थिति को भरने की प्रक्रिया सम्मिलित है।

यह सत्य है कि मानव संसाधन प्रत्येक संगठन के लिए सबसे बड़ा है। क्योंकि किसी भी संगठन में अन्य समस्त साधन (धन, सामग्री, मशीन) आदि का उपयोग मानव संसाधन के सकारात्मक प्रयासों द्वारा प्रभावी और कुशलतापूर्वक किया जा सकता है।

किसी भी संगठन के ढांचे का निर्माण तब ही संभव है जब उसमें कुशल एवं योग्य व्यक्ति नियुक्त हों। नियुक्तियां करना प्रबन्ध के प्रमुख कार्यों में से एक है। स्टाफिंग का अर्थ है– 'संगठन की योजना के अनुसार, अधिकारियों तथा कर्मचारियों की नियुक्ति करना, उनको आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करना, पदोन्नति, स्थानान्तरण, सेवा मुक्ति आदि की व्यवस्था करना।' जिस संस्था के कर्मचारी जितने अधिक योग्य, प्रशिक्षित एवं अनुभवी होंगे उस संस्था का प्रबंधन उतना ही अधिक प्रभावी व कुशल होगा। इस कार्य को सफलतापूर्वक व कुशलतापूर्वक संपन्न करने के लिए प्रबंधकों आवश्यक कर्मचारियों की संख्या का पहले से ही पूर्वानुमान लगा लेना चाहिए ताकि उनके चयन हेतु विज्ञापन देना, चयन करना, प्रशिक्षण देना तथा उन्हें नियुक्ति देकर कार्य भार सौंपना आदि कार्यों को सूझ–बूझ से किया जा सकें।

स्टाफिंग के कार्य (Functions of Staffing)

– स्टाफिंग का प्रथम सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य संगठन में विभिन्न नौकरियों की स्थितियों के लिए योग्य कर्मचारियों को प्राप्त करना है।

– स्टाफ में, सही व्यक्ति को सही नौकरियों के लिए भर्ती किया जाता है इसलिए यह अधिकतम उत्पादकता और उच्च प्रदर्शन की ओर जाता है।

– यह विभिन्न पहलुओं के माध्यम से मानव संसाधन के इष्टतम उपयोग को प्रोत्साहित करने में सहायता करता है।

– सही व्यक्ति की भर्ती से श्रमिकों की नौकरी की संतुष्टि और मनोबल में वृद्धि होती है।

– स्टाफिंग मानव संसाधनों का बेहतर व उचित उपयोग सुनिश्चित करने में सहायता करता है।

– यह विकास प्रबंधकों के माध्यम से संगठन की निरन्तरता व वृद्धि सुनिश्चित करता है।

स्टाफिंग का महत्व (Importance of Staffing)

– **अन्य कार्यों का कुशल प्रदर्शन**– प्रबंधन के अन्य कार्यों के कुशल प्रदर्शन के लिए स्टाफिंग महत्वपूर्ण कुंजी है। क्योंकि सक्षम कर्मियों के अभाव में प्रबंधन के अन्य तत्वों (नियोजन, आयोजन व नियंत्रण) को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है।

– **प्रौद्योगिकी और अन्य संसाधनों का प्रभावी उपयोग**– स्टाफिंग वह मानवीय कारक है जो नवीनतम प्रौद्योगिकी पूंजी सामग्री आदि के प्रभावी उपयोग में सहायक होता है।

टिप्पणी

– **मानव संसाधन का इष्टतम उपयोग**– बड़ी संस्थाओं का वेतन बिल काफी अधिक होता है। साथ ही, भर्ती, चयन, प्रशिक्षण और कर्मचारियों के विकास पर एक बड़ी राशि खर्च की जाती है। इष्टतम उत्पादन हेतु स्टाफिंग को एक कुशल तरीके से निष्पादित किया जाना चाहिए।

– **मानव पूंजी का विकास**– स्टाफिंग का एक अन्य कार्य मानव पूंजी की आवश्यकताओं से सम्बन्धित है। चूंकि प्रबंधन को अग्रिम जनशक्ति आवश्यकताओं को निर्धारित करना आवश्यक है। इसलिए कैरियर की उन्नति के लिए कार्यरत कर्मियों को प्रशिक्षित और विकसित करना भी है। यह भविष्य में संस्था की आवश्यकताओं को पूर्ण करता है।

– **मानव संसाधन का अभिप्रेरण**– एक संगठन में व्यक्तियों का व्यवहार विभिन्न कारकों से प्रभावित होता है जो कि शिक्षा के स्तर, आवश्यकताओं, सामाजिक– सांस्कृतिक कारकों आदि से जुड़े होते हैं। इसलिए, संगठन के मानवीय पहलू बहुत महत्वपूर्ण होते हैं।

– **नैतिक मूल्यों का विकास**– संगठनात्मक उद्देश्यों की उपलब्धि में योगदान करने के लिए श्रमिकों को उचित वातावरण प्रदान किया जाता है जिससे कर्मचारी संस्थान से भावनात्मक व नैतिक रूप से जुड़ जाते हैं और संस्थान की उन्नति में अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करते हैं।

– **जन केन्द्रित स्टाफिंग के लक्षण**– स्टाफिंग को सामान्य तथा जन केंद्रित कार्य के रूप में देख सकते हैं इसलिए यह सभी प्रकार के संगठनों के लिए प्रासंगिक है।

– **प्रबंधक का उत्तरदायित्व**– स्टाफिंग प्रबंधन का मूल कार्य है, प्रबंधक निरन्तर स्टाफिंग कार्य में संलग्न रहता है। वे अपने अधीनस्थों की भर्ती, चयन, प्रशिक्षण और मूल्यांकन से सक्रिय रूप से जुड़े रहते हैं। इसलिए गतिविधियों का संचालन, मुख्य कार्यकारी, विभागीय प्रबंधकों और फोरमैन द्वारा अपने अधीनस्थों के संबंध में किया जाता है।

– **मानवीय कौशल**– स्टाफिंग कार्य मुख्य रूप से मानव संसाधन के विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण और विकास से सम्बन्धित है इसलिए प्रबंधकों को अधीनस्थों को मार्गदर्शन और प्रशिक्षण प्रदान करने में मानव संबंध कौशल का उपयोग करना चाहिए। यदि स्टाफिंग कार्य उचित प्रकार से निष्पादित किया जाता है तो संगठन में मानवीय संबंध सौहार्दपूर्ण और पारस्परिक रूप से संगठित होते हैं।

– **सतत कार्य**– स्टाफिंग कार्य निरन्तर किया जाना चाहिए और एक नए और पूर्ण रूप से स्थापित दोनों संगठनों के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण है। चूंकि एक नए स्थापित संगठन में, कर्मियों की भर्ती, चयन और प्रशिक्षण होता है। इसी प्रकार पूर्व से स्थापित संगठन में भी समान गतिविधियां होती हैं। किसी संगठन के समग्र उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समस्त कार्मिकों के प्रबंधन अति आवश्यक है।

यह सर्वविदित है कि मानव शक्ति ही उत्पादन के साधनों में सजीव संवेदनशील तत्व है, जो निर्जीव तत्वों को सक्रियता प्रदान करता है। अतः इनकी नियुक्ति एक विशेष

कार्य में सम्मिलित है। योग्य तथा कुशल कर्मचारी संस्था की संपत्ति होते हैं और इन्हीं के परिश्रम और कुशल कार्य निष्पादन से संस्था प्रगति के पथ पर अग्रसर होती है।

टिप्पणी

(ख) निर्देशन

प्रबन्ध मूलतः व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। दूसरे व्यक्तियों से कार्य करवाने के लिए यह आवश्यक है कि उनके कार्य को निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निर्धारित दिशाओं में प्रशस्त तथा निर्देशित किया जाये।

निर्देशन का अर्थ है– उपक्रम में विभिन्न नियुक्त व्यक्तियों को यह बतलाना कि उन्हें क्या करना है और कैसे करना है? तथा निरन्तर यह देखना कि वे व्यक्ति अपना कार्य सही दिशा में कर रहे हैं या नहीं। निर्देशन प्रबन्ध का महत्वपूर्ण तत्व इसलिए है क्योंकि यह संगठित प्रयत्नों को प्रारम्भ करता है, प्रबन्धकीय निर्णयों को वास्तविकता का जामा पहनाता है और उद्योग अथवा व्यवसाय को अपने उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर करता है।

प्रत्येक व्यवसाय/उद्योग में निदेशक की स्थिति एक जहाज के कप्तान के समान होती है। प्रत्येक प्रबन्धक को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्यों को सही दिशा में प्रशस्त करने के लिए उनका उचित निदेशन करना अति आवश्यक है।

(ग) समन्वय

एक ही कार्य की विभिन्न व्यक्तियों द्वारा भिन्न–भिन्न रूप से व्याख्या करना मानव का स्वभाव है। इन वैचारिक मतभेदों से उपक्रम के सामूहिक उद्देश्यों को पूर्ण करना कठिन है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तिगत क्रियाओं, विचारों, कार्यकलापों तथा भावनाओं में सामंजस्य स्थापित करना अति आवश्यक है। इसी सामंजस्य स्थापन को समन्वय कहते हैं।

- प्ले तथा रैले के अनुसार, 'विभिन्न क्रियाओं के मध्य एकता बनाये रखने के उद्देश्य से सामान्य उद्देश्य की पूर्ति हेतु सामूहिक प्रयत्नों में सुव्यवस्था करने को ही समन्वय कहते हैं।'
- मूनी के अनुसार, 'समन्वय संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है और इसमें वे सभी सिद्धान्त शामिल हैं जो इसके अधीन हैं और इसके कार्य करते हैं।'
- न्यूमैन के शब्दों में, 'यह अलग गतिविधि नहीं है बल्कि एक नियति है जो प्रशासन के सभी चरणों में व्याप्त होनी चाहिए।'
- जी.आर. टेरी के अनुसार, 'समन्वय अंगों का एक–दूसरे के साथ व्यवस्थापन और अंगों के कार्य और गतिमानता का समय में व्यवस्थापन है ताकि प्रत्येक अंग संपूर्ण नतीजे में अपना सर्वाधिक योगदान दे सकें।
- एल.डी. व्हाइट 'समन्वय वह प्रक्रिया है जो अलग संघटकों को शक्तियों और प्रभाव की एक संश्लिष्ट रचना पर संकेन्द्रित करती है जो परस्पर स्वतंत्र तत्वों को साथ कार्य करने योग्य बनाती है।

समन्वय के निम्नांकित आधारभूत प्रकार होते हैं–

(i) आंतरिक और बाह्य समन्वय	(ii) उर्ध्वाधर और क्षैतिज समन्वय	(iii) प्रक्रियात्मक और मौलिक समन्वय

टिप्पणी

किसी भी उपक्रम को निर्बाध रूप से चलते रहने के लिए, अच्छे मानवीय सम्बन्धों के विकास के लिए, सुदृढ़ निर्णयों तथा पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को पूर्ण कुशलता के साथ पूरा करने के लिए सामंजस्य अति आवश्यक है। अतः समन्वय प्रबन्ध का आधारभूत तत्व है, क्योंकि समन्वय के अभाव में कोई भी प्रतिष्ठान अपने इच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं कर सकता है।

(घ) नियन्त्रण

संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निर्मित योजनाएं उचित प्रकार से लागू हैं या नहीं, यह जानने के लिए अधीनस्थों के कार्यों की जांच पड़ताल कर, उसमें आवश्यकतानुसार सुधार करना ही नियंत्रण है।

नियंत्रण का अर्थ है वर्तमान निष्पादन की पूर्व निर्धारित मानक से तुलना करना ताकि पर्याप्त प्रगति और संतोषजनक निष्पादन सुनिश्चित हो सके।

नियंत्रण एक प्रबंधकीय कार्य है। प्रबंधन नियन्त्रण के माध्यम से संगठन की गतिविधियों को उद्देश्यों के अनुसार एक पाता है इस प्रकार सफलता सुनिश्चित करता है।

नियंत्रण कार्यों को दिशा में रखने की व्यवस्था है। नियंत्रण से कार्यों में विचलन को ज्ञात करके, उसे हटाया भी जाता है। इस प्रकार नियंत्रण एक सुधारात्मक प्रक्रिया है। यह संगठन में विचलन पर प्रतिबंध लगाकर संतुलन स्थापित करता है।

- हेनरी फेयाल के अनुसार, 'नियंत्रण का अर्थ इस बात का मूल्यांकन करने से है कि उपक्रम के समस्त कार्य अपनायी गई योजनाओं, दिये गये निर्देशों तथा निर्धारित नियमों के अनुसार सम्पन्न हो रहे हैं अथवा नहीं। नियंत्रण का उद्देश्य कार्य की दुर्बलताओं और त्रुटियों को प्रकाश में लाना है। जिससे यथासंभव उन्हें सुधारा जा सके तथा भविष्य में उनकी पुनरावृत्ति रोकी जा सकें।
- कुण्ट्ज ओडोनेल के अनुसार, 'नियंत्रण का प्रबंधकीय प्रकार्य अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों का माप एवं उनमें आवश्यक सुधार करने होते हैं जिससे कि इस बात को सुनिश्चित किया जा सके कि उपक्रम के उद्देश्यों तथा उनको प्राप्त करने के लिए निर्धारित योजनाओं को क्रियान्वित किया जा रहा है अथवा नहीं।'
- बिल ई. गोज के अनुसार, 'प्रबंधकीय नियंत्रण से तात्पर्य घटकों को योजनानुसार बनाये रखने से है।'
- पीटर ड्रकर के अनुसार, 'नियंत्रण साध्य का साधन से और परिणाम का प्रयास से संतुलन रखता है।'
- जे.एल. मैसी के अनुसार, 'नियंत्रण वह प्रक्रिया है जो वर्तमान निष्पादन को मापती है और उसे पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की दिशा देती है।'
- न्यूमैन व सडर के अनुसार, 'नियंत्रण का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कार्यों का परिणाम जहां तक संभव हो सके लक्ष्यों के नजदीक हो।'

टिप्पणी

(ङ) मूल्यांकन

अधिकतर संस्थाओं में मूल्यांकन तीन स्तरों पर होता है–

- प्रबंधक का मूल्यांकन
- शिक्षा का मूल्यांकन
- प्रशिक्षण का मूल्यांकन

मूल्यांकन प्रक्रियात्मक अधिक व परिणामोन्मुखी कम होता है। यह सामान्यतया संकुचित प्रकृति का होता है क्योंकि सिर्फ प्रस्तुत समय में ही परिणामों का अवलोकन करना होता है। मूल्यांकन करने के लिए आंकड़े एकत्रित करना अति आवश्यक है, जिसके लिए निम्न तरीके प्रयोग में लाये जा सकते हैं–

- अवधि के दौरान तथा अवधि के पश्चात् साक्षात्कार और प्रश्नपत्र द्वारा सर्वेक्षण।
- व्यवहारिक सर्वेक्षण और मनोवैज्ञानिक परीक्षण।
- प्रशिक्षकों, प्रबंधकों द्वारा अवलोकन।
- प्रबंधकों द्वारा रिपोर्ट तैयार करना।

प्रबंधन का अंतिम चरण मूल्यांकन है तथा यह प्रक्रिया को पुनः प्रारम्भिक चरण अर्थात् नियोजन की ओर ले जाता है।

- ओपनहीम के अनुसार– 'पूर्व की गई क्रियाओं के परिणामों की परीक्षा करने से किसी व्यक्ति को अपने भविष्य में अधिक प्रभावशाली निर्णय लेने में सहायक हो सकती है।'
- ग्रास एवं क्रेडल के अनुसार– 'मूल्यांकन वह तकनीक है जो किसी व्यक्ति को अपने पास उपलब्ध साधनों के परिणाम के अधिकतम संतोष प्राप्त करने में सहायक होती है।'

मूल्यांकन के अन्तर्गत जो क्रिया सम्पन्न हो चुकी है उसका पूर्ण इकाई के रूप में पुनर्वालोकन किया जाता है। क्रिया की सफलता एवं असफलता के कारणों पर विचार किया जाता है, जिससे भविष्य में प्रबंधन के लिए मार्गदर्शन प्राप्त हो तथा सर्वोत्तम प्रबंधन संभव हो सके।

लेविन के अनुसार मूल्यांकन के चार उद्देश्य हैं–

- योजना के क्रियान्वयन द्वारा पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया गया है? यह देखना आवश्यक है।
- भविष्य में नियोजन बनाने में मूल्यांकन आधार प्रस्तुत करता है और दिशा–निर्देश देता है। इसका उपयोग प्राप्त अनुभव के रूप में भावी योजना में किया जाता है।
- योजना बनाने, उसे क्रियान्वित करने तथा नियंत्रण आदि में यदि कोई त्रुटि हो जाये तो मूल्यांकन द्वारा उसकी जानकारी प्राप्त होती है और भविष्य में उस गलती से बचा जा सकता है और त्रुटियों में सुधार कर कार्यक्रम को सफल बनाया जा सकता है।

टिप्पणी

- मूल्यांकन द्वारा पुराने अनुभवों के आधार पर नये विचार तथा सूझबूझ प्राप्त होती है।

मूल्यांकन द्वारा किसी भी स्थिति को नये ढंग से देखने तथा नई दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करता है तथा स्वयं एवं अन्य व्यक्तियों को परम्परागत ढंग से सोचने के स्थान पर नवीन ढंग से सोचने में सहायता मिलती है। किसी भी नई योजना को आरम्भ करने से पूर्व अपनी पहले की योजना के मूल्यांकन की जानकारी रखना अति आवश्यक है जिससे पूर्व की त्रुटियों की पुनरावृत्ति ना हों। इसमें आगामी योजना में सुधार संभव होता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. इनमें से क्या प्रबंधन के महत्व में शामिल नहीं है?

   (क) संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति (ख) अनेक लक्ष्यों के मध्य संतुलन

   (ग) सामाजिक नवाचार (घ) अ–सुदृढ़ आधार से संगठन

4. नियोजन के प्रकार हैं–

   (क) दीर्घकालीन (ख) मध्यवर्ती

   (ग) अल्पकालीन (घ) उपरोक्त सभी

1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ग)
3. (घ)
4. (घ)

1.5 सारांश

एक प्रबंधक की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस कार्यक्षमता के साथ उत्पादन के इन सीमित साधनों का प्रयोग करता है। उत्पादन के इन साधनों के अनुकूलतम उपयोग में ही प्रबंधन की सफलता का रहस्य निहित है।

प्रबंधन को मानव शरीर में मस्तिष्क के साथ तुलना करके देखा जा सकता है। बिना मस्तिष्क के मानवीय शरीर मात्र हड्डियों तथा स्नायुतंत्र का ढांचा–सा बनकर रह जाता है तथा कुछ भी प्राप्त करने में समर्थ नहीं रहता। ठीक इसी प्रकार प्रबंधन के बिना एक व्यवसाय सामग्री, मुद्रा, मशीन, उपकरण जैसे प्रत्येक साधन का ढेर–सा होकर रह जाता है। यह केवल प्रबंधन ही है जो उसको कार्य रूप में लाता है।

समय नोट करने के लिए टेलर ने स्टॉप वॉच का प्रयोग किया था। इस संबंध में यह महत्वपूर्ण है कि आदर्श समय ज्ञात करने के लिए एवं समय अध्ययन करने के

टिप्पणी

लिए उस श्रमिक को चुना जाना चाहिए जिनकी कार्यक्षमता औसत दर्जे की हो, साथ ही समय नोट करते समय यह भी देखना चाहिए कि कार्य की परिस्थतियां असाधारण नहीं हों। इसके लिए उस व्यक्ति से अनेक कार्य कराकर और प्रत्येक बार में लगने वाले समय को अलग–अलग नोट करके उसका औसत ज्ञात कर लेना चाहिए। इस नोट किए गए समय के आधार पर प्रमाप समय (standard time) का निर्धारण किया जाता है। समय निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रमाप समय, निकाले गए वास्तविक औसत समय से बहुत अधिक या बहुत कम नहीं हो।

प्रबंधन के अध्ययन का विकास बीते समय में आधुनिक संगठनों के साथ–साथ हुआ है। यह प्रबंधकों के अनुभव एवं आचरण तथा सिद्धान्तों के सम्बन्ध समूह दोनों पर आधारित रहा है। प्रबंधन का विकास मानव के विकास के साथ–साथ हुआ है। प्रबन्ध के उद्यम से लेकर आधुनिक समय तक इसमें अनेक परिवर्तन हुए हैं। विभिन्न रूप व स्वरूप में इसकी प्रकृति परिवर्तित होती रही है। जैसे–जैसे मानव सभ्यता का विकास हुआ और आवश्यकताओं ने अनिवार्य आवश्यकताओं का स्थान लेना प्रारम्भ किया, वैसे–वैसे प्रबंधन के महत्व में भी वृद्धि होती गई।

आधुनिक समाज में प्रबंधन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह सामाजिक प्रगति, उत्पादकता वृद्धि, रोजगार वृद्धि, आय वृद्धि, बेहतर प्रदर्शन तथा समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादन के कारखानों का आयोजन करता है। यह सामाजिक विकास और जनता के कल्याण को प्रोत्साहन देता है। प्रबंधन समाज के कल्याण में एक निर्णायक भूमिका निभाता है।

किसी भी संगठन के ढांचे का निर्माण तब ही संभव है जब उसमें कुशल एवं योग्य व्यक्ति नियुक्त हों। नियुक्तियां करना प्रबन्ध के प्रमुख कार्यों में से एक है। स्टाफिंग का अर्थ है– संगठन की योजना के अनुसार, अधिकारियों तथा कर्मचारियों की नियुक्ति करना, उनको आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करना, पदोन्नति, स्थानान्तरण, सेवा मुक्ति आदि की व्यवस्था करना। जिस संस्था के कर्मचारी जितने अधिक योग्य, प्रशिक्षित एवं अनुभवी होंगे। उस संस्था का प्रबंधन उतना ही अधिक प्रभावी व कुशल होगा।

1.6 मुख्य शब्दावली

- **मनःस्थिति** : मानसिक अवस्था
- **सर्वमान्य** : जिसे सभी मानते हों
- **प्रक्रियाएं** : प्रविधियां, तरीके
- **डिजाइन** : प्रारूप, आकृति
- **सृजनात्मकता** : रचनाशीलता
- **सार्वभौमिक** : सार्वजनिक, सभी के लिए
- **पेशागत** : व्यवसाय से संबंधित

टिप्पणी

1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार 'अवधारणा' क्या है?
2. प्रबंधन के 2 उद्देश्य बताइए।
3. सफल नियोजन में किन कार्यों का समावेश किया जाता है?
4. प्रबंधनशास्त्रियों की विचारधारा को, प्रबंध की प्रकृति स्पष्ट करने के लिए किन वर्गों में विभाजित किया गया है?
5. प्रबंधन को एक शास्त्र के रूप में स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. प्रबंधन की अवधारणा स्पष्ट करते हुए इसकी विविध परिभाषाओं का उल्लेख कीजिए।
2. प्रबंधन की आवश्यकता एवं इसके उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
3. प्रबंधन की प्रकृति रेखांकित करते हुए इसके क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए।
4. संगठन में प्रबंधन की महत्ता का विश्लेषण कीजिए।
5. 'संगठन एवं नियोजन' विषय पर सारगर्भित टिप्पणी लिखिए।

1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- *Managing for Value*, Hamilton, PHI
- *Management*, Stoner, PHI
- *Management Concepts and Practice*, Gupta, C.B. Sultan.
- *A Guide to Maintenance Management,* Roy, B.K., Jaico
- *Management Control Systems*, Ghosh , PHI
- *Compensation Management in Knowledge*, Henderson, Person
- *Knowledge Management*, Awad, Pearson
- *Knowledge for Competitive*, Chaudhary, Harish Excel.
- *Essentials of Management*, Dubrin, Andrew, Thomson
- *Brand Management Text and Case*, Moorthi, Vikas
- *Management: Principles & Practice*, Prag, Diwan, Excel.
- *Principles and Practice of Management*, Prasad, L.M., Sultan C.

इकाई 2 प्रबंधन के सिद्धान्त एवं मानव संसाधन प्रबंधन

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 प्रबंधन की कला और विज्ञान : प्रबंधन के सिद्धांत एवं उद्देश्य
  2.2.1 प्रबंधन की कला
  2.2.2 प्रबंधन की वैज्ञानिकता
  2.2.3 प्रबंधन की सैद्धांतिकता एवं उद्देश्यपरकता
2.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र
  2.3.1 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास का संकल्पनात्मक स्वरूप
  2.3.2 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की आवश्यकता तथा उद्देश्यपरकता
  2.3.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की प्रकृति तथा विस्तार क्षेत्र
2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली
2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

मानव संसाधन प्रबंधन की शुरुआत संयुक्त राज्य में हुई। यह अमरीकी, आशावादी, प्रत्यक्ष रूप से मानवतावादी एवं विशेष रूप से सहज है। इसने अमरीकी सपनों (गेस्ट 1990 : 379) के तत्त्वों की पुनः खोज की है। अमरीकी व्यावसायिक सम्बंधों में परिवर्तन सन् 1980 से शुरू हुआ जो कि बाह्य दबाव के विरुद्ध प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया के फलस्वरूप था। अधिक उत्पादन, वेतन-क्रम में किफायत एवं टेलोयन श्रम विभाजन पर संयुक्त राज्य का आधिपत्य रहा है।

प्रबंधन का एक मौलिक कार्य है मानव संसाधन को उद्योग के आर्थिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए व्यवस्थित करना। अगर कोई आर्थिक रूप से सफल है तो इसका अर्थ है उस कम्पनी में मानव संसाधन का प्रबंधन सफलतापूर्वक हुआ है। मानव संसाधन औद्योगीकरण की सक्रिय शक्ति है। अतः विकास के कौशलों को इसकी प्रगति पर ध्यान देना चाहिए।

इस इकाई में हम प्रबंधन की कला, वैज्ञानिकता, सैद्धांतिकता, उद्देश्यपरकता को समझते हुए मानव संसाधन विकास के अवधारणात्मक स्वरूप से परिचित होंगे और साथ ही इसकी आवश्यकता, उद्देश्यपरकता, प्रकृति एवं क्षेत्र का अवलोकन भी करेंगे।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- प्रबंधन की कला व प्रबंधन का विज्ञान समझ पाएंगे;

- प्रबंधन के सिद्धांत और उद्देश्यों से परिचित हो पाएंगे;
- मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति व क्षेत्र से अवगत हो पाएंगे।

टिप्पणी

2.2 प्रबंधन की कला और विज्ञान : प्रबंधन के सिद्धांत एवं उद्देश्य

प्रबंधन की कला, प्रबंधन का विज्ञान, प्रबंधन के सैद्धांतिक स्वरूप एवं इसके उद्देश्य को पृथक–पृथक इस प्रकार समझा जा सकता है–

2.2.1 प्रबंधन की कला

प्रबंधन का कार्य विभिन्न प्रकार के चातुर्यों के चित्रण की मांग करता है चाहे वह एक व्यावसायिक संगठन से संबंध रखता है, एक शिक्षण संस्थान है, एक अस्पताल है या एक क्लब है। एक प्रबंधक को उस समय सफल माना जाता है जब वह अपने अधीन काम कर रहे लोगों की एक सुचारू क्रियाशील टीम बनाने में समर्थ हो जाता है। उसको विभिन्न विचारों तथा संगठनात्मक उद्देश्यों के प्रति उसके अंतर्गत काम कर रहे लोगों की क्षमताओं के बीच सामंजस्य, समन्वय तथा आकलन करना होता है। उसे उपक्रम की गतिविधियों का नियोजन तथा संगठन भी करना होता है ताकि अधीनस्थ सर्वोत्तम संभव तरीके से मूल्यवान संसाधनों का उपयोग करने में समर्थ हों। इसके लिए उसको उपयुक्त मात्राओं में विभिन्न चातुर्यों का उपयोग करना होता है।

हम निम्न तीन श्रेणियों में प्रबंधकों द्वारा अपेक्षित चातुर्यों का स्तरीय वर्गीकरण कर सकते हैं – (i) सैद्धांतिक चातुर्य (ii) मानवीय चातुर्य (iii) तकनीकी चातुर्य।

तकनीकी चातुर्य कार्यों का वर्णन करते हैं, मानवीय चातुर्य व्यक्तियों का तथा सैद्धांतिक चातुर्य दृष्टिकोणों का वर्णन करते हैं। तीनों प्रकार के चातुर्य अंतःसंबंधित होते हैं तथा इनकी सभी प्रबंधकों को आवश्यकता होती है। लेकिन इन चातुर्यों की सापेक्षित महत्ता प्रबंधक स्तर के साथ बदलती रहती है।

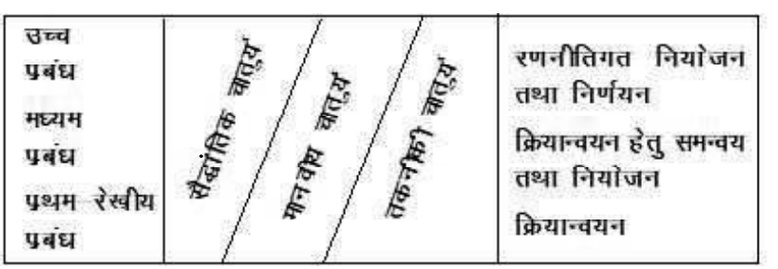

चित्र : प्रबंधकीय चातुर्य

(i) **सैद्धांतिक चातुर्य** (Conceptual Skills) – सैद्धांतिक चातुर्य संपूर्ण रूप में संगठन को देखने की योग्यता होती है, यह व्यवसाय के विभिन्न कार्यों के बीच अंतः संबंधों को पहचानने तथा बाहरी शक्तियों को जानने की क्षमता है ताकि संगठनात्मक प्रयासों का प्रभावी मार्गदर्शन हो सके। सैद्धांतिक चातुर्यों को भाववाची सोच के लिए

टिप्पणी

काम लाया जाता है तथा नियोजन तथा रणनीति सृजन में शामिल संकल्पना विकास के लिए प्रयोग किया जाता है।

सैद्धांतिक चातुर्यों में यह समझने की योग्यता शामिल होती है कि कैसे एक संगठन के विभिन्न भाग एक–दूसरे पर निर्भर करते हैं। एक प्रबंधक को विभिन्न परिस्थितिजन्य घटकों के अंतः संबंधों को पहचानने के लिए सैद्धांतिक चातुर्यों की आवश्यकता होती है तथा इसलिए वह ऐसे निर्णय लेता है जो संगठन के सर्वोत्तम हित में होंगे।

(ii) **मानवीय चातुर्य** (Human Skills) – मानवीय चातुर्य विवादों के समाधान, अभिप्रेरित करने, नेतृत्व करने तथा दूसरों के साथ प्रभावी संचार करने के लिए अपेक्षित योग्यताएं होती हैं। क्योंकि सारा काम तब किया जाता है जब लोग मिल–जुलकर काम करते हैं अतः मानवीय संबंधों के चातुर्य प्रबंधक सभी स्तरों पर समान रूप से महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

(iii) **तकनीकी चातुर्य** (Technical Skills) – तकनीकी चातुर्यों से विशिष्ट कार्यों की तकनीकी विधियों तथा प्रक्रियाओं को संभालने में विशिष्ट ज्ञान तथा दक्षता का बोध होता है। ये चातुर्य प्रबंधन के निम्न स्तरों पर अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं तथा उच्च स्तरों पर कम ही महत्वपूर्ण होते हैं।

उदाहरण के लिए एक उत्पादकीय संयंत्र में एक उत्पादन अधीक्षक को प्रयुक्त प्रविधियों का ज्ञान होना चाहिए तथा उसको उन कार्यों को भौतिक तौर पर करने में समर्थ होना चाहिए जो वह सुपरवाईज कर रहा है। एक Word processing supervisor में प्रक्रिया में प्रयुक्त कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर के बारे में सुपरवाईजरी प्रबंधकों को कार्य–संबद्ध उपकरणों, मशीनों एवं औजारों के उचित प्रयोग के बारे में अपने अधीनस्थों को प्रशिक्षण देना चाहिए।

2.2.2 प्रबंधन की वैज्ञानिकता

प्रबंधन की वैज्ञानिकता का आधार प्रबंधन की व्यवहारवादी अवधारणा है। प्रबंधन की व्यवहारवादी विचारधारा से आशय मानवीय व्यवहार का सामाजिक एवं व्यवहारवादी विज्ञानों के संदर्भ में अध्ययन करके यह मालूम करना है कि मानवीय व्यवहार किन–किन घटकों से प्रभावित होता है। व्यवहारवादी विचारधारा में समाजशास्त्र (Sociology), मानव विज्ञान (Anthropology) तथा मनोविज्ञान (Psychology) को सम्मिलित किया जाता है। दूसरे शब्दों में, व्यवहारादि विचारधारा समाजशास्त्र, मानव विज्ञान तथा मनोविज्ञान जैसे सामाजिक विज्ञानों का सामूहिक नाम है। व्यवहारवादी विचारधारा अथवा विज्ञान मनुष्य की समस्याओं के समाधान संबंधी क्रियाओं का अध्ययन करता है। यह विचारधारा मनुष्य के व्यक्तिगत रूप में तथा समूह के रूप में, दोनों परिस्थितियों का अध्ययन करती है।

एक व्यक्ति अकेले में तथा समूह में किस प्रकार की गतिविधियां करता है, इनका अध्ययन ही व्यवहारवादी विचारधारा के अंतर्गत किया जाता है। जहां तक समूह का संबंध है, समूह छोटे तथा बड़े समूहों में एक संपूर्ण राष्ट्र तक को सम्मिलित किया जा सकता है। व्यवहारवादी विचारधारा के अंतर्गत एक समूह के अंदर तथा बाहर के व्यवहार का अध्ययन करने पर बल दिया जाता है। यदि देखा जाए तो प्रबंध की व्यवहारवादी विचारधारा एक आधुनिक एवं वैज्ञानिक विचारधारा है जिसके अंतर्गत

टिप्पणी

मानवीय संबंध, समूह गति विज्ञान, मानवीय अभियांत्रिकी, प्रबंध में सहभागिता, औद्योगिक प्रजातंत्र, औपचारिक तथा अनौपचारिक संगठन आदि का विकास हुआ है।

यह विचारधारा नियंत्रण तथा आत्म विकास के सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर आधारित है। यह प्रबंधकों के ऊपर है कि वे संगठन की सेवाओं में प्रयोग किए जाने के लिए मानवीय संभाविता (human potential) के लिए पहचान करें तथा आवश्यक परिस्थितियां प्रदान करें। मानवीय व्यवहार के प्रति प्रबंधक का रुझान सकारात्मक होना चाहिए। व्यक्ति के व्यवहार को उस समूह के व्यवहार से घनिष्ठता का संबंध होता है तथा इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संगठनात्मक भूमिकाएं व्यवस्थित की जाती हैं।

प्रबंधन की सफलता के लिए व्यावहारिक विज्ञान वास्तव में महत्वपूर्ण होता है क्योंकि एक व्यक्ति अपने सामाजिक तंत्र (social system) का भाग होता है। संगठनात्मक शक्तियां न केवल उसका व्यवहार ही तय करती हैं वरन अनेक दूसरे घटक भी प्रभाव डालते हैं। अनेक समाजशास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों ने प्रबंधन में इन समस्याओं के अध्ययन में गहरी रुचि दिखाई है। यह सिद्धांत मानवीय व्यवहार के सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं से संबंध रखता है।

व्यावहारिक विज्ञान या सामाजिक–तंत्र व्यवस्था का वैशिष्ट्य

1. व्यक्ति अपने दृष्टिकोण तथा मूल्य तंत्र की दृष्टि से एक–दूसरे से भिन्न होते हैं इसीलिए वे समान स्थिति में अलग–अलग प्रतिक्रिया करते हैं।
2. एक संगठन में काम कर रहे कर्मचारियों की अपनी–अपनी जरूरतें होती हैं, अपने–अपने लक्ष्य होते हैं जो संगठन की आवश्यकताओं तथा लक्ष्यों से भिन्न होते हैं। प्रबंधन को संगठनात्मक तथा मानवीय उद्देश्यों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए।
3. अधिकारियों की अधिसत्ता की अपेक्षा अनौपचारिक नेतृत्व निष्पादकों के ग्रुप मानदंडों की स्थापना तथा क्रियान्वयन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।
4. अपनी प्रकृति के कारण अनेक कर्मचारी आत्म–शक्तियों द्वारा कहीं अधिक अभिप्रेरित होते हैं; तथा काम में रुचि लेते हैं जैसे व्यक्ति का नजरिया, रुझान, आदतें तथा उसका सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश भी उसके व्यवहार का निर्माण करता है। अतः संगठन में मानवीय व्यवहार को समझने के लिए इन सभी घटकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

• मानव व्यवहार की अन्य विशेषताएं और ध्यातव्य बिंदु

1. मनुष्य का मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र बड़ा महत्वपूर्ण है। किसी ने ठीक ही कहा है कि मनुष्य केवल रोटी के लिए ही जीवित नहीं रहता। उसकी भावनाएं तर्क मात्र से शांत नहीं की जा सकती हैं। अतः मनुष्य बहुत कुछ सामाजिक प्राणी है और उसके जीवन में अतार्किक बातों का विशेष महत्व होता है, जिसे मानवीय संबंध के ज्ञान ने स्वीकार किया है।
2. कारखाना व्यक्तियों का स्थान मात्र नहीं है, वह एक सामाजिक संगठन है। समूह में व्यक्तियों के संबंध का अपना ही महत्व है, जिस पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए।

टिप्पणी

3. कारखाने में नियंत्रण तथा अनुशासन की मर्यादा में स्वच्छंदता (permissiveness) का वातावरण होना चाहिए। संगठन में अनौपचारिक व्यवहारों (informal relationships) के औचित्य को स्वीकार किया जाना चाहिए। औपचारिक संगठन में अनौपचारिक संबंधों का स्थान होना चाहिए।
4. ये समूह कारखाने के सामाजिक जीवन की बुनियादी कोशिकाएं (cells) माने जाते हैं। श्रमिकों को इन समूहों में कार्य करने से एक प्रकार की सामाजिक संतुष्टि मिलती है।
5. श्रमिकों को सभी सूचनाओं से अवगत रखना चाहिए।
6. श्रमिकों को प्रबंध संबंधी निर्णय लेने में भागीदार बनाना चाहिए।
7. ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे श्रमिकों का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य (physical and mental health) अच्छा हो।
8. कार्य की दशाएं (working conditions) तथा कार्य करने की विधियां (methods of work) सर्वोत्तम होनी चाहिए।
9. श्रमिकों के मान–सम्मान का ध्यान रखा जाना चाहिए (recognition)। ऐसा वातावरण उत्पन्न किया जाना चाहिए, जिससे उसमें आत्म–गौरव (self-regard) तथा आत्म–विश्वास (self-confidence) जाग्रत हो और संगठन उसकी रक्षा करे।
10. श्रमिकों को कार्य के मध्य कुछ अवकाश के क्षण (rest period) मिलने चाहिए। शोध की सहायता से यह देखा गया है कि इससे श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है तथा उनका मनोबल ऊंचा उठता है।
11. श्रमिकों को एक 'टीम' के रूप में (team spirit) काम करना चाहिए। व्यक्ति अलग–अलग कार्य करें तो इससे कार्य का विकास नहीं होता। कारखाना एक खेल के मैदान की भांति है, जहां श्रमिकों को खिलाड़ियों की प्रवत्ति से टीम–भावना के रूप में कार्य करना चाहिए।

2.2.3 प्रबंधन की सैद्धांतिकता एवं उद्देश्यपरकता

प्रबंधन के सिद्धांतों एवं उद्देश्यों को इस प्रकार समझा जा सकता है–

1. सही व्यक्ति को सही कार्य पर लगाने का सिद्धांत (Principle of Right Man at the Right Job) – प्रत्येक कर्मचारी को उसकी व्यक्तिगत रुचि के अनुरूप कार्य दिया जाना चाहिए। इससे न केवल उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि होगी अपितु उसे कार्य के संपादन से अधिकाधिक संतुष्टि की प्राप्ति होगी, जो मधुर संबंधों की रचना की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।

2. व्यक्तिगत भावनाओं को महत्व देने का सिद्धांत (Principle of giving importance to Individual Feelings) – इस सिद्धांत के अनुसार प्रबंधकों एवं सेवा नियोजकों को प्रत्येक कर्मचारी की भावनाओं का आदर करना चाहिए। यहां पर यह ध्यान में रखने योग्य बात है कि प्रत्येक कर्मचारी की भावनाएं अन्य कर्मचारियों की भावना से भिन्न होती हैं। अतः कर्मचारियों से व्यवहार करते समय भावनाओं की इस भिन्नता को भी ध्यान में रखना चाहिए। इस सिद्धांत का पालन करने पर प्रबंधकों को 'कार्य केंद्रित' (work centred) प्रबंध व्यवस्था को अपनाना चाहिए।

टिप्पणी

3. सामान्य हित का सिद्धांत (Principle of Common Interest) – अच्छे मानवीय सिद्धांतों के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि प्रबंधकों और श्रमिकों दोनों को अनुभव करना चाहिए कि हमारे हित एक ही हैं। प्रबंधकों को अपने श्रमिकों को कम वेतन एवं सुविधाएं देकर लाभों में वृद्धि करने की प्रवृत्ति नहीं रखनी चाहिए। इस प्रवृत्ति से जहां एक ओर उत्पादन में कमी होगी, वहां दूसरी ओर प्रबंधकों के लाभ में वृद्धि के स्थान पर कमी ही होगी। इस प्रकार कर्मचारियों को भी अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना चाहिए। उन्हें प्रबंधकों को सदैव अपना विरोधी एवं शोषणकर्ता नहीं मानना चाहिए। उनका उद्देश्य उत्पादन में वृद्धि करना ही होना चाहिए। अतः इस संदर्भ में यह कहना अधिक उचित एवं न्यायसंगत होगा कि दोनों पक्षों (श्रम और पूंजी) का हृदय परिवर्तन आवश्यक है।

4. सहभागिता का सिद्धांत (Principle of Participation) – इस सिद्धांत के अनुसार कर्मचारियों को निर्णयन प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाना चाहिए। इससे कर्मचारियों के महत्व में वृद्धि होती है और उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती है। निर्णयन प्रक्रिया में कर्मचारियों के सम्मिलित होने से, निर्णयकर्ताओं के दृष्टिकोण में व्यापकता आती है जिससे निर्णयों में गुणात्मक सुधार होता है और कर्मचारियों के सहयोग से उन्हें लागू करने में सुविधा रहती है।

5. संप्रेषण का सिद्धांत (Principle of Communication) – संवहन का अभाव भ्रांतियों एवं अफवाहों को जन्म देता है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव मानवीय संबंधों पर पड़ता है। अच्छे मानवीय संबंधों की रचना के लिए यह आवश्यक है कि संस्था में द्विमार्गीय संवहन प्रणाली की स्थापना की जाए। इससे प्रबंधकों एवं कर्मचारियों को एक दूसरे के विचारों से अवगत होने का अवसर प्राप्त होता है। कर्मचारियों की शिकायतों एवं सुझावों पर शीघ्र ध्यान दिया जा सकता है, परिवर्तनों की पूर्व सूचना प्राप्त हो जाती है तथा निर्णयन में सुविधा रहती है और इस प्रकार मानवीय संबंधों को सुधारने में सहायता मिलती है।

6. कार्यमान्यता का सिद्धांत (Principle of Work Recognition) – अच्छा कार्य करने पर उसकी प्रशंसा की जानी चाहिए तथा उसे उचित पारितोषिक प्रदान किया जाना चाहिए। ऐसा करने से कर्मचारी में स्वयं के प्रति विश्वास की भावना जागृत होती है। प्रबंधकों को चाहिए कि वे कार्य–विधियों, कार्य–स्थितियों आदि का अध्ययन कर ऐसे सुधारात्मक कदम उठाएं जिससे भविष्य में त्रुटियों की संभावनाएं न्यूनतम रह जाएं।

7. अभिप्रेरणा का सिद्धांत (Principle of Motivation) – कर्मचारी की कार्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने तथा उसे निरंतर रूप से बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि उन्हें कार्य के प्रति अभिप्रेरित किया जाए। ये अभिप्रेरणाएं मौद्रिक एवं अमौद्रिक दोनों ही प्रकार की होती हैं। प्रबंधक कर्मचारियों की आवश्यकताओं के अनुसार समय–समय पर विभिन्न प्रकार की अभिप्रेरणाएं प्रयोग में लाते हैं।

8. प्रजातांत्रिक वातावरण का सिद्धांत (Principle of Democratic Atmosphere) – राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक सभी क्षेत्रों में प्रजातांत्रिक व्यवस्था को स्वीकार किया गया है। अधिनायकवाद का जनाजा कभी का उठ चुका है। अतः

टिप्पणी

प्रबंधन के क्षेत्र में भी प्रजातांत्रिक प्रणालियों को अपनाने की आवश्यकता है। व्यावसायिक सफलता की दृष्टि से भी कर्मचारियों का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है। मानवीय संबंधों की विचारधारा प्रजातांत्रिक प्रणाली एवं व्यवस्थाओं में आस्था रखती है।

प्रबंधन की व्यवहारवादी विचारधारा के अंतर्गत अन्य बातों के अतिरिक्त मूलभूत रूप में निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया जाता है –

1. **समाजशास्त्र** (Sociology) – समाजशास्त्र में बड़े समूहों, उनके व्यवहार, पारस्परिक संबंधों तथा उनके प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। इन समूहों में व्यक्ति किस प्रकार से व्यवहार करता है तथा उसके व्यवहार का समूह पर कैसा प्रभाव पड़ता है और समूह का व्यक्ति पर किसी प्रकार का प्रभाव पड़ता है आदि का अध्ययन किया जाता है। इस दृष्टि से समाजशास्त्र व्यवहारवादी विचारधारा का अंग हुआ। समाजशास्त्र की इस शाखा को व्यवहारवादी विचारधारा में औद्योगिक तथा वयस्क श्रमिकों आदि की समस्याओं, संगठन की सोपान शृंखला (Hierarchy) में विभिन्न स्तर के व्यक्तियों के मध्य आपसी संबंधों आदि का अध्ययन इसके अंतर्गत किया जाता है। समाजशास्त्रीय अध्ययन किसी उपक्रम में कार्यरत व्यक्तियों की सामाजिक समस्याओं के अध्ययन में सहायक होते हैं।

प्रबंधकीय दृष्टिकोण से समाजशास्त्र का अध्ययन करके महत्वपूर्ण योगदान देने वाले विद्वानों में इंग्लैंड के हरबर्ट स्पेन्सर, जर्मनी के मैक्स बेबर तथा फ्रांस के इमाइल दुर्खीम आदि के नाम प्रमुख रूप से जाने जाते हैं। मनुष्य समाज में रहकर जो व्यवहार करता है तथा समाज में जो उसकी स्थिति है, उसका प्रत्यक्ष प्रभाव उसके कार्य पर पड़ता है। इस दृष्टि से समाजशास्त्र का प्रत्यक्ष प्रभाव उसके कार्य पर पड़ता है। इस दृष्टि से समाजशास्त्र का प्रत्यक्ष प्रभाव प्रबंधन पर पड़ता है।

2. **मानविकी अथवा मानव विज्ञान** (Anthropology) – ग्रीक भाषा का शब्द Anthropo का अर्थ है 'मानव' तथा logy का अर्थ है 'विज्ञान'। अतः इसे हम मानव विज्ञान कहते हैं। मानव विज्ञान को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है– (i) भौतिक मानव विज्ञान (Physical Anthropology) तथा (ii) सांस्कृतिक मानव विज्ञान (Cultural Anthropology)। प्रबंध का एक सीधा संबंध सांस्कृतिक मानव विज्ञान से है। सांस्कृतिक मानव विज्ञान में मनुष्य की संस्कृति, उसकी उत्पत्ति, इतिहास, विकास, संरचना तथा क्रिया का अध्ययन किया जाता है।

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के शब्दों में, ''संस्कृति रहन–सहन, व्यवहार या जीवनयापन की एक पद्धति है जिसका निर्माण व्यक्तियों के समूह द्वारा किया जाता है तथा जिसका संप्रेषण एक संतति से दूसरी संतति को होता रहता है।'' इस प्रकार संस्कृति मानवीय व्यवहार को प्रभावित एवं निर्देशित करती है। संस्कृति एक व्यक्ति के नैतिक मापदंडों का निर्धारण करने में सहायक होती है। व्यक्ति के नैतिक मापदंडों से उसका कार्य निश्चित रूप से प्रभावित होता है। निष्कर्ष रूप में, मानव विज्ञान का अध्ययन मानवीय व्यवहार को समझने में सहायक होता है।

3. **मनोविज्ञान** (Psychology) – आधुनिक मनोविज्ञान को 'व्यवहार का विज्ञान' के नाम से जाना जाता है। यदि देखा जाए तो मनोविज्ञान का केंद्र–बिंदु ही मनुष्य का व्यवहार है। मनोविज्ञान की एक नवीन शाखा 'सामाजिक मनोविज्ञान' (Social Psychology)

टिप्पणी

है। सामाजिक मनोविज्ञान इस बात का अध्ययन करता है कि समूहों का निर्माण किस प्रकार से होता है, समूह में व्यक्ति किस प्रकार से दूसरे व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है तथा ये समूह व्यक्ति के व्यवहार को किस प्रकार से प्रभावित करते हैं। प्रबंध में इस प्रकार का अध्ययन किया जाना परम आवश्यक है।

व्यावसायिक उपक्रमों में कार्यरत व्यक्तियों के अनौपचारिक समूह बन जाते हैं जो व्यक्ति के कार्य को बहुत अधिक मात्रा में प्रभावित करते हैं। सामान्यतः संगठन का प्रत्येक व्यक्ति इन अनौपचारिक एवं संदर्भ समूहों द्वारा निर्धारित मापदंडों के अनुरूप ही कार्य करता है, चाहे प्रबंध द्वारा कितने ही प्रमाप निर्धारित क्यों न किए गए हों। इस प्रकार मनोविज्ञान की शाखा सामाजिक मनोविज्ञान का सीधा संबंध व्यवहारवादी विचारधारा से है। इस दृष्टि से सामाजिक मनोविज्ञान भी व्यवहारवादी विचारधारा का एक अंग है।

प्रबंधन की सामाजिक प्रणाली आधारित विचारधारा मानवीय व्यवहार की विचारधारा के समान ही है। कुछ विद्वानों का विचार है कि कर्मचारियों के वैयक्तिक अथवा सामूहिक व्यवहार से प्रबंध के कार्यों का अध्ययन संभव नहीं है वरन इसके लिए संपूर्ण संगठन का अध्ययन किया जाना चाहिए। वस्तुतः यह विचारधारा प्रणाली विश्लेषण (System Analysis) पर आधारित है। इस विचारधारा के अनुसार प्रबंध एक सामाजिक प्रणाली है (Management is a Social System) तथा यह प्रणाली सामाजिक एवं सांस्कृतिक अंर्तसंबंधों (Socio-Culture Interrelationship) से मिलकर बनती है।

इस विचारधारा की प्रमुख विशेषताएं एवं मान्यताएं निम्न प्रकार हैं –

1. ''संगठन एक सहकारी सामाजिक प्रणाली है'' और प्रणाली दृष्टिकोण पर आधारित है।
2. यह प्रबंध के अध्ययन के लिए समग्र संगठन (total organisation) के अध्ययन को अनिवार्य मानती है।
3. यह विचारधारा प्रबंध में व्यवहारवादी विज्ञानों; जैसे मनोविज्ञान, समाज विज्ञान आदि के उपयोग पर बल देती है।
4. इसके अनुसार प्रबंधकों को कार्य करवाने के लिए एक संगठन अर्थात सामाजिक तंत्र का निर्माण करना पड़ता है। तंत्र की सफलता इसमें कार्यरत व्यक्तियों के आपसी व्यक्तिगत एवं सामूहिक सांस्कृतिक संबंधों (interpersonal and group cultural relations) पर निर्भर करती है।
5. यह प्रबंध को एक 'सहकारी प्रणाली' (Cooperative System) मानती है जिससे जुड़े व्यक्तियों की इच्छाएं, धारणाएं, विचार, दृष्टिकोण, वृत्तियां, आदि सभी एक दूसरे से पारस्परिक रूप में प्रभावित होती हैं।
6. यह प्रबंधकीय समस्याओं का निराकरण सहकारिता के आधार पर करती है।
7. यह विचारधारा प्रबंध के समुचित अध्ययन एवं व्यवहार के लिए संस्था के आंतरिक एवं बाहरी कार्यरत ''सामाजिक समूहों'' के आपसी सांस्कृतिक संबंधों का अध्ययन करती है।
8. यह विचारधारा सामाजिक प्रणाली में व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों के बीच समन्वय स्थापित करती है।

टिप्पणी

9. यह विचारधारा पारस्परिक सहयोग स्थापित करने के लिए एक सामाजिक इकाई का निर्माण करती है।
10. इस संगठनात्मक प्रणाली में लोग सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संदेशों का आदान–प्रदान करते हैं, तथा सहर्ष रूप से योगदान करते हैं।
11. इस विचारधारा के अनुसार सभी सामाजिक समूहों में परस्पर संघर्ष, विरोध, अंतर्क्रिया एवं संबद्धता के प्रयास चलते रहते हैं।
12. यह विचारधारा प्रबंध के अध्ययन के लिए औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के संगठनों को अनिवार्य मानती है।

मानवीय व्यवहार एवं सामाजिक प्रणाली में अंतर

मानव व्यवहार	समाजिक प्रणाली
• यह पहुंच अंतः वैयक्तिक संबंधों पर ही अधिक ध्यान देने में अपना आधार खोजती है।	• यह पहुंच वास्तव में ग्रुप संबंधों पर आधारित है तथा उन्हीं पर ध्यान संकेंद्रित करती है
• यह एल्टन क्षेत्रों के हॉथेर्न प्रयोग पर आधारित है तथा इसका क्षेत्र सीमित है।	• इस पहुंच ने मानवीय संबंधों की पुनः परिभाषा देने का प्रयास किया है तथा इसका क्षेत्र कहीं अधिक व्यापक है। यह संगठन में मानवीय व्यवहार का कहीं अधिक व्यवस्थित अध्ययन है।
• यह पहुंच सारा जोर व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर देती है तथा उनके व्यवहार पर आधारित है।	• इस पहुंच ने ग्रुप तथा व्यवहार पर कहीं अधिक ध्यान दिया है।
• इस पहुंच में मुख्य जोर केवल ग्रुपों, अभिप्रेरणा तथा मनोबल के महत्व पर ही दिया गया है।	• व्यावहारिक वैज्ञानिकों ने ग्रुप गतिविज्ञान, अनौपचारिक संगठनात्मक नेतृत्व, सामूहिक सौदागरी तथा प्रबंध में त्रुटियों की सहभागिता का अध्ययन किया है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. इनमें से क्या प्रबंधन कला का चातुर्य नहीं है?
   (क) सैद्धांतिक चातुर्य (ख) मानवीय चातुर्य
   (ग) धार्मिक चातुर्य (घ) तकनीकी चातुर्य
2. कर्मचारियों को प्रबंधन की निर्णयन प्रक्रिया में सम्मिलित करना प्रबंधन के किस सिद्धांत का सूचक है?
   (क) सामान्य हित का सिद्धांत (ख) संप्रेषण का सिद्धांत
   (ग) अभिप्रेरणा का सिद्धांत (घ) सहभागिता का सिद्धांत

टिप्पणी

2.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास : अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकृति एवं क्षेत्र

मानव संसाधन प्रबंधन के व्यवहार करने वाले एवं उनके व्यवहार करने के उद्देश्य को रखते हुए इसे विभिन्न परिभाषाओं से परिभाषित किया गया है। कुछ इसे लोक प्रबंधन की दृष्टि से विचार करते हैं जिसमें विशिष्टता इस नीति की कोई गुंजाइश ही नहीं होती। इस दृष्टिकोण से मानव संसाधन प्रबंधन व्यावसायिक संबंध, कर्मचारी संबंध या कार्मिक संबंधों का एक आडम्बररहित विकल्प है। कुछ मानव संसाधन के प्राचीन अर्थ को ही मानकर चलते हैं इसके समकालीन वलय के अन्तर्गत होने के कारण। व्यावसायिक उद्योगों ने कार्मिक विभाग को सम्मान देने के लिये इसका पुनः नामकरण किया है एवं प्राचीन पाठ्यपुस्तकों के लेखकों ने भी किताबों की बिक्री में वृद्धि लाने के लिए नए संस्करणों में नए नाम का प्रयोग किया है। यद्यपि सिर्फ नाम के अलावा कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ है।

2.3.1 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास का संकल्पनात्मक स्वरूप

'मानव संसाधन प्रबंधन' शब्द के अर्थ को स्पष्ट करने के लिये विभिन्न शब्दों का इस्तेमाल किया गया है, जैसे, श्रमिक प्रबंधन, श्रमिक प्रबंधन सम्पर्क, मालिक कर्मचारी सम्पर्क, औद्योगिक सम्पर्क, कार्मिक संचालन, कार्मिक प्रबंधन, मानव पूंजी प्रबंधन, मानव सम्पत्ति प्रबंधन इत्यादि। यद्यपि इन शब्दों में अन्तर दिखाया जा सकता है, पर इस विभेदन का मूल प्रकृति में निहित है, उसके विस्तार एवं विकासशील स्थिति में। मानव संसाधन प्रबंधन का अर्थ है कर्मचारी को नियुक्त करना, उनके कार्य एवं संगठन के अनुसार उनके संसाधन का विकास कर उसका प्रयोग करना, उसे बरकरार रखना एवं उनके कार्य के बदले में प्रतिफल देना।

कार्मिक प्रबंधन को 'इंस्टीट्यूट ऑफ पर्सोनेल मैनेजमेन्ट' U.K. द्वारा परिभाषित किया गया है, जिसे बाद में भारतीय कार्मिक संसाधन संस्थान द्वारा स्वीकार किया गया है, वह है:

"Personnel management is a responsibility of the those who mango people as well as being a description of the work of those who are employed as specialists. It is that part of management which is concerned with people at work and with their relationships within an enterprise. It applies not only to industry and commerce but to all fields of employment"

उपरोक्त व्याख्या की परिभाषा निम्न प्रकार से कर सकते हैं:

1. किसी भी संगठन में लाइन मैनेजर या प्रबन्धक जैसे, जनरल मैनेजर या महाप्रबन्धक, उत्पादन प्रबन्धक, विपणन प्रबन्धक, वित्तीय प्रबन्धक इत्यादि एवं यह कार्मिक प्रबन्धक, जिसे विशेषज्ञ के रूप में नियुक्त किया जाता है, उनका कार्य है। अतः, किसी संगठन में सभी प्रबन्धक कार्मिक प्रबन्धक के साथ आवश्यक रूप से सम्बद्ध हैं, क्योंकि संगठन के कर्मचारियों के प्रयास के माध्यम से ही उन्हें अपने लक्ष्य की पूर्ति करनी है।

टिप्पणी

2. यह कार्मिक प्रबन्धक का एक अंश है जो कि संगठन के अन्तर्गत व्यक्ति एवं उनके सम्बन्धों से जुड़ा है।
3. यह सत्य विश्व के सभी संगठनों अर्थात् सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक इत्यादि संगठनों पर लागू होता है।

Michael J. Jucius ने कार्मिक प्रबंधन को परिभाषित करते हुए कहा कि यह प्रबंधन का वह क्षेत्र है जो श्रमिक शक्ति के व्यापार एवं उसे कायम रखने से सम्बन्धित है, उसे आयोजित, संचालित एवं नियन्त्रित करता है।

जिससेः

1. जिस उद्देश्य से संगठन की स्थापना की गई है उसकी आर्थिक रूप से एवं प्रभावकारी रूप से पूर्ति हो सके।
2. कार्मिक के सभी स्तरों के उद्देश्यों की अधिक से अधिक मात्रा में पूर्ति संभव हो।
3. समाज के उद्देश्यों का यथोचित विचार और उनको साकार किया जा सके।

अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मानव संसाधन प्रबंधन नियुक्त करने, विकास करने एवं प्रतिफल देने के कार्यों का प्रबंधन करता है जिससे व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों को संगठनात्मक, व्यक्तिगत एवं सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता के लिये विकसित किया जा सके।

कार्मिक प्रबंधन की इस परिभाषा को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है:

• उद्देश्यों की पूर्ति के संन्दर्भ में, कार्मिक प्रबंधन कर्मचारियों के साथ व्यक्तिगत रूप से एवं साथ ही, गोष्ठी के सदस्य के रूप में भी संबंधित है।

• कार्मिक प्रबंधन का कार्य है मानव संसाधन अर्थात् ज्ञान, दक्षता, योग्यता इत्यादि को विकसित कर कर्मचारियों के उद्देश्यों की पूर्ति करना एवं उनके द्वारा किये जाने वाले कार्य से उन्हें सुकून मिले, इसका ध्यान रखना।

• कर्मचारियों के सभी स्तर एवं श्रेणी, अर्थात् दक्ष, अदक्ष, तकनीकी, पेशेवर, क्लरिकल एवं प्रबंधकीय कार्मिक प्रबंधन के अन्तर्गत आते हैं। इनमें संगठित एवं असंगठित दोनों प्रकार के कर्मचारी शामिल हैं।

• इसके अन्तर्गत औद्योगिक, वाणिज्यिक, अर्थशास्त्रीय, सामाजिक, धार्मिक राजनैतिक एवं सरकारी इत्यादि, विश्व के सभी प्रकार के संगठन इसके अन्तर्गत आते हैं।

• कार्मिक प्रबंधन एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है।

• इसका उद्देश्य है एक संकलित रूप से संगठन, व्यक्ति एंव समाज के लक्ष्य की पूर्ति करना। इसमें संगठन का उद्देश्यों के अन्तर्गत जीवित रहना, विकास एवं वृद्धि के साथ लाभ, उत्पादन, नवीनता, उत्कृष्टता इत्यादि भी शामिल हैं। व्यक्तिगत रूप से कर्मचरियों का उद्देश्य है कार्यतुष्टि, कार्यसुरक्षा, उच्च वेतन, आकर्षक अनुसंगी लाभ, चुनौतीपूर्ण कार्य, गौरव, प्रतिष्ठा, स्वीकृति, विकास का सुअवसर इत्यादि। सामाजिक उद्देश्यों के अन्तर्गत आते हैं समान रोज़गारी का अवसर, वंचित वर्ग एवं अक्षमों की सुरक्षा, वेतन में अन्तर को कम कर आमदनी की असमानता को कम करना, विकासात्मक कार्यों का आयोजन कर समाज को सुधारना इत्यादि।

टिप्पणी

इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अधिकतर परिभाषाएं मानव संसाधन प्रबंधन के कार्य एवं लक्ष्य से संबंधित हैं।

मानव संसाधन प्रबंधन रोजगार प्रबंधन की दिशा में एक नया प्रयत्न है जिसका उद्देश्य है सांस्कृतिक, रचनात्मक एवं कार्मिक शैलियों का एक संकलित विन्यास का व्यवहार करते हुए प्रतिबद्ध एवं समर्थ कार्यबल का कूटनीतिक तैनाती के माध्यम से प्रतिस्पर्धी लाभ उठाना।

यद्यपि हमने प्रबंधन के विषय में पढ़ा है पर 'प्रबंधन क्या है' इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। पर मानव संसाधन प्रबंधन के अध्ययन से पूर्व इसके अर्थ की जानकारी होना आवश्यक है। मेरी पार्कर फोलेट ने प्रबंधन को परिभाषित करते हुए कहा है कि "The art of getting things done through people" अर्थात्, यह लोगों के माध्यम से कार्य सम्पन्न करने का एक शिल्प' है। पर प्रबंधन का अर्थ इस परिभाषा से बढ़कर है।

एक और परिभाषा में यह कहा गया है कि यहां मानव व्यवहार का वह क्षेत्र है जिसमें प्रबन्धक कर्मचारियों के संबंध में योजनाएं बनाते हैं एवं संगठित करते हैं, लोगों को एवं उनके आर्थिक संसाधनों को एक संगठित प्रयास के द्वारा संचालित करते हैं जिससे कि आकांक्षित, व्यक्तिगत एवं सामूहिक उद्देश्यों की, सर्वोत्तम दक्षता एवं प्रभावकारिता के साथ, पूर्ति कर सके। इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि प्रबंधन का सम्बन्ध उसके उद्देश्यों की पूर्ति, मानव संसाधनों की उद्यम के माध्यम से, शारीरिक एवं आर्थिक संसाधनों के व्यवहार से है।

अत: मानव संसाधन प्रबंधन प्रक्रिया के अन्तर्गत एक अत्यंत महत्वपूर्ण उप प्रक्रिया है। 'मानव संसाधन' यह शब्द भारतवर्ष में काफी प्रचलित है एवं केंद्रीय मंत्रिमंडल में इसका नाम है मानव संसाधन विकास मंत्रालय। पर ज्यादातर लोगों को मानव संसाधन के अर्थ की जानकारी नहीं है।

Leon C. Megginson के अनुसार, मानव संसाधन का अर्थ है किसी संस्था के कार्यबल की सम्पूर्ण दक्षता, ज्ञान, रचनात्मक क्षमता, प्रतिभा, झुकाव, के साथ लोगों का दृष्टिकोण, उनकी मान्यताएं एवं विश्वास है। मानव संसाधन दूसरे प्राकृतिक संसाधनों की तरह ही है। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रबंधन इन गुणों को और विकसित कर, उनका बारम्बार उपयोग करे। अत: यह एक दीर्घकालिक संभावना है एवं कर्मचारीगण एक अल्पकालिक संभावना हैं। मानव संसाधन को मानवीय पहलू मानव परिसंपत्ति एवं मानव पूंजी भी माना जाता है। इसमें' कर्मचारी' शब्द को किसी कार्य में नियुक्त व्यक्ति एवं 'श्रय' एवं 'मानव शक्ति' शब्दों को उनकी शारीरिक क्षमता के संदर्भ में ग्रहण किया गया है। पर यह शब्द मानव प्रबंधन के विभिन्न तत्त्वों जैसे दक्षता, ज्ञान, मान्यताएं इत्यादि को सूचित नहीं करता।

कार्मिक बनाम मानव संसाधन के विभिन्न स्तर

मैक्रो स्तर पर मानव संसाधन का अर्थ है- सभी कार्यरत, अकार्यरत, स्वकार्यरत नियोजक मालिक इत्यादि। व्यक्तियों के संसाधनों के सभी तत्त्वों (जैसे कि कौशल और रचनात्मक क्षमता) का कुल योग जबकि इसी स्तर पर कार्मिक का अर्थ सभी संगठनों के कर्मचारी

टिप्पणी

तक ही सीमित है। संघटनात्मक स्तर पर भी मानव संसाधन के अन्तर्गत सामान्य कर्मचारियों से लेकर प्रबन्ध संचालक, निदेशक मंडल अवैतनिक रूप से काम करने वाले, विभिन्न संगठनों से लिए गए विशेषज्ञ जैसे उच्च प्रबन्धक स्तर एवं इन लोगों के संसाधनों को प्रभावित करने वाले, विशेषतः परिवार वाले तक सभी कार्मिक इसके अन्तर्गत आते हैं। संक्षेप में, इसके अन्तर्गत उन सभी लोगों के संसाधन शामिल हैं, जो संगठनात्मक उद्देश्य की पूर्ति के लिए कार्य करते हैं एवं जो इस उद्देश्य की पूर्ति के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करते हैं। इसके अलावा मानव संसाधन के अन्तर्गत लोगों की मान्यताएं मानव प्रकृति भी शामिल हैं। अर्थात् किसी भी स्तर पर 'मानव संसाधन' शब्द कार्मिक शब्द की तुलना में अधिक व्यापक है। संगठनात्मक स्तर पर मानव संसाधन शब्द का अर्थ है मालिक से कर्मचारी तक या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संबंधित सभी लोगों के संसाधनों का संगठनात्मक अनुक्रम में सभी स्तरों पर लगातार प्रबंधन। कार्मिक बनाम मानव संसाधन को निम्नलिखित सूची में प्रस्तुत किया गया है।

कार्मिक बनाम मानव संसाधन प्रबंधन	
1. कार्मिक का अर्थ है नियोजित कर्मचारी एवं कार्मिक प्रबन्धन का अर्थ है नियोजित कर्मचारियों का प्रबन्धन।	1. मानव संसाधन प्रबंधन का अर्थ है कार्मिक दक्षता, क्षमता, झुकाव एवं रचनात्मक क्षमता इत्यादि का प्रबंधन।
2. कार्मिक प्रबंधन में नियोजित कर्मचारियों को 'आर्थिक व्यक्ति' कहा जाता है क्योंकि उनके कार्य विनियम में वेतन या मजदूरी मिलती है।	2. मानव संसाधन प्रबंधन में नियोजित कर्मचारियों को सिर्फ एक अर्थ सम्बन्धी व्यक्ति ही नहीं बल्कि उन पर एक सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भ में भी विचार किया जाता है। अतः इस दृष्टिकोण से संपूर्ण व्यक्ति इसका विचार के रूप में देखा जाता है।
3. कर्मचारियों को एक वस्तु या साधन के रूप में देखा जाता है जिसे खरीदा या प्रयोग किया जा सके।	3. कर्मचारियों के साथ संसाधन के रूप में व्यवहार किया जाता है।
4. कर्मचारियों को व्यय केन्द्र के संदर्भ में विचार किया जाता है। अतः इसमें श्रम लागत का नियन्त्रण भी प्रबंधन ही करता है।	4. कर्मचारियों को मुनाफे का केन्द्र भी कहा जाता है, अतः मानव संसाधन विकास एवं भविष्य में उपयोगिता के लिये पूंजी निवेश किया जाता है।
5. कर्मचारियों को मूलतः संगठनात्मक लाभ के लिये ही प्रयोग किया जाता है।	5. कर्मचारियों को उनके, उनके परिवार के सदस्यों एवं संगठन के पारस्परिक लाभ के लिये प्रयोग किया जाता है।

विषयगत परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए, हाल ही में, विभिन्न विश्वविद्यालयों के वाणिज्य विभाग, प्रबंधन अध्ययन के विद्यालय, कार्मिक प्रबंधन विभागों ने अध्ययन के क्षेत्र को 'मानव संसाधन प्रबंधन' का नाम दिया है। पर यह प्रक्रिया अभी परिवर्तन की स्थिति में है।

टिप्पणी

2.3.2 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की आवश्यकता तथा उद्देश्यपरकता

आधुनिक अर्थशास्त्र के विकास में मानव संसाधन एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आर्थर लेविस Arthur Lewis के अनुसार-

"there are great differences between countries which seem to have roughly equal resources, so it is necessary to enquire into the difference in human behavior" अर्थात्, समान संसाधन युक्त देशों के विकास में बहुत अन्तर है, अतः व्यक्ति के व्यवहार का विचार करना आवश्यक है। यद्यपि यह देखा गया है कि प्राकृतिक संसाधनों का शोषण, पदार्थ एवं आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहायता, आधुनिक अर्थशास्त्र में मुख्य भूमिका निभाते हैं, परन्तु इनमें से कोई भी कार्यदक्ष एवं समर्पित जनबल जैसा महत्त्वपूर्ण नहीं है। वास्तव में ऐसा कहा गया है कि विकास की उत्पत्ति मानव मस्तिष्क से ही होती है।

राष्ट्रहित में मानव संसाधन प्रबंधन की भूमिका

किसी भी राष्ट्र का विकास उसके मानव संसाधन पर निर्भर करता है। किसी राष्ट्र में प्राकृतिक संसाधन की बहुतायत हो सकती है पर जब तक मानव संसाधन उसका प्रयोग न करे तब तक उस संसाधन का कोई महत्त्व नहीं रहता। मानव संसाधन ही पारम्परिक संसाधनों को आधुनिक एवं औद्योगिक संसाधन में परिवर्तित करते है। किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास उसके नागरिकों की मान्यताएं, प्रवृति, साधारण अवस्थिति एवं गुण से ही निश्चित होता है। असंगठित मानव संसाधन किसी भी राष्ट्र के पिछड़ेपन का कारण बन सकता है। बैंक, रेलवे इत्यादि उद्योगों में मानव संसाधन की प्रकृति, मात्रा एवं प्रायोगिकता एक आवश्यक तत्त्व है।

मानव और मशीन

संगठनात्मक विभागों की अधिकतर समस्याएं मानव एवं समाज से संबंधित हैं। सभी उद्योग मूलतः मानव सम्बन्धी हैं। किसी भी उद्योग में मशीन आवश्यक है पर उसे चलाने वाले मानव के बिना उद्योग चल नहीं सकता।

व्यक्तिगत एवं साधारण प्रबंधन

आधुनिक युग में किसी भी संगठन का प्रबंधन एक जटिल कार्य ही नहीं बल्कि महत्त्वपूर्ण कार्य भी है। यह किसी भी देश की आर्थिक विकास को प्रभावित करता है। प्रबंधन की दक्षता ही राष्ट्र के नागरिकों का हित एवं उनके सम्पदाओं को निश्चित करती है। प्रबंधन के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण है मानव संसाधन प्रबंधन।

कार्मिक प्रबंधन का अर्थ है मानव संसाधन को एक सक्रिय संगठन की राह दिखाना, जो कि उससे संबंधित सभी व्यक्तियों की संतुष्टि के साथ-साथ लक्ष्य की पूर्ति करता है। अर्नेस्ट डेले (Earnest Dale) ने प्रबंधन को व्यक्ति के माध्यम से कार्य सम्पादन की प्रक्रिया बताया है। वास्तव में सभी प्रबंधन कार्मिक प्रबंधन ही हैं क्योंकि सभी प्रबंधन मानव से संबंधित हैं। यद्यपि उनके कार्यक्षेत्र में अन्तर है एवं हरेक विभाग के लिये अलग अलग प्रबन्धक हैं जो अपने विभाग के कार्मिक का प्रबंधन करते हैं जिससे प्रभावकारी

परिणाम मिल सके। पर सभी प्रबन्धक कार्मिक के कार्य के साथ जुड़े रहने के कारण कार्मिक प्रबन्धक हैं एवं सभी प्रबंधन को कार्मिक प्रबंधन कहा जा सकता है।

मानव संसाधन प्रबंधन संदर्भित त्रुटिपूर्ण धारणाएं

टिप्पणी

मानव संसाधन कार्यकारिता के बावजूद कुछ प्रबन्धक संगठन में मानव संसाधन विशेषज्ञों के प्रयोजन को नकारते हैं। उनके अनुसार मानव संसाधन के क्षेत्र विस्तृत हो रहे हैं, अधिकारी नियोजन नियोग इत्यादि विषय भी इसके अन्तर्गत आ गए हैं। अब मानव संसाधन द्वारा सरकार द्वारा मांगे गए विभिन्न दस्तावेज की देख-रेख, मनोरंजक कार्यक्रमों का प्रबन्ध करना, सेवा निवृत्ति कार्यक्रमों का संचालन करना इत्यादि कार्यों का सम्पादन किया जाता है। गलत धारणाओं के कारण अब 'मानव संसाधन' शब्द के बदले में 'कार्मिक' शब्द का प्रयोग किया जाता है जिससे 'मानव संसाधन' शब्द नकारात्मक धारणा से मुक्त हो।

मानव संसाधन विशेषज्ञों की दृष्टि में इसके खंडन के निम्नांकित कारण हैं:

(क) विशेषज्ञता का अभाव: कुछ प्रबन्धकों ने मानव संसाधन प्रबन्धकों की समालोचना करते हुए कहा है कि उनमें संगठन के अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों के विषय में दिलचस्पी एवं ज्ञान की कमी होती है। उन्हे सैद्धान्तिक धारणाओं का स्पष्ट ज्ञान है पर जब उन सिद्धान्तों को सम्पादित करने की बात आती है तो वे मूल व्यावसायिक नियमों के ज्ञान के अभाव के कारण उसकी उपेक्षा करते हैं।

(ख) मुख्य स्रोत से अलगाव: मानव संसाधन विशेषज्ञ संगठन में कर्मचारियों के दुर्दशाग्रस्त कार्य करने के वातावरण एवं उनके प्रति होनेवाले अन्याय पर प्रश्न उठाते हैं। अत: कार्यकारी प्रबन्धकों में मानव संसाधन प्रबन्धकों के प्रति एक स्वभाविक द्वेष की भावना होती है। मानव संसाधन प्रबन्धकों की बात सही होने पर भी उनकी पद्धति से कार्यकारी प्रबन्धक संतुष्ट नहीं होते। दूसरी ओर, जब मानव संसाधन प्रबन्धक संगठन के विरुद्ध कर्मचारियों का पक्ष लेते हैं तो कार्यकारी प्रबन्धकों से उनका अलगाव हो जाता है।

(ग) आधुनिक सनक के प्रति आकर्षण: कुछ कार्यकारी प्रबन्धक समझते हैं कि मानव संसाधन के लोगों में आधुनिक सनक को मानव संसाधन के क्षेत्र में प्रयोग करने की सनक होती है। एक आदर्श कार्मिक की खोज में कार्मिक प्रबंधक मानव संसाधन की आधुनिक सनक की ओर, उसकी त्रुटियों को जानने की कोशिश किए बिना, आकर्षित हो जाते हैं।

(घ) श्रद्धा का अभाव: कई संगठन ऐसे है जहां कार्मिक पद को सर्वोच्च नहीं माना जाता है। कभी-कभी मानव संसाधन क्षेत्र को पद की अवनति मान लिया जाता है विशेषकर उन संगठनों में जहां कार्यकारी प्रबन्धकों को मानव संसाधन क्षेत्र में नियुक्त किया जाता है। इस तरह मानव संसाधन क्षेत्र में ऐसे लोगों का नियोग होता है जो इस क्षेत्र में अनुभवी नहीं होते हैं।

उपरोक्त बातों से मानव संसाधन विभाग के सम्बन्ध में कड़ी समालोचना का आभास मिलता है। कार्मिकों को इन समस्याओं के यथार्थ समाधान के विषय में सोचकर इस विभाग को निगम से संबंधित क्षेत्र में स्वीकृति पाने में सहायता करनी चाहिए।

टिप्पणी

मानव संसाधन प्रबंधन के उद्देश्य

अतीत में प्रबन्धक एवं कर्मचारियों के बीच स्वेच्छाचारी एवं अनियंत्रित सम्बन्ध थे। पर वर्तमान में यह स्थिति नहीं है। आज के कर्मचारी, प्रबन्धकों से विचारशील आचरण की आशा रखते हैं क्योंकि वह अतीत की तुलना में अधिक शिक्षित होते हैं। इसके अलावा यूनियन एवं सरकार की तरफ से उन्हें सुरक्षा का परिवेश प्रदान किया जाता है। उनकी योग्यता के आधार पर उन्हें और उत्कृष्ट प्रकार की नौकरी मिल सकती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए मानव संसाधन प्रबंधन का उद्देश्य इन वर्षों में विस्तृत हुआ है, जिसका विवरण नीचे दिया जा रहा है:

1. **संगठन को उसके उद्देश्य की पूर्ति में सहायता करना:** मानव संसाधन विभाग का कार्य है संगठन को उसके उद्देश्य की पूर्ति करने में सहायता करना। अगर ऐसा करने में मानव संसाधन विभाग असफल रहे तो इसका अस्तित्व नहीं रहता।
2. **कार्यशक्ति की योग्यता एवं दक्षता को कुशलता से नियोग करना:** मानव संसाधन प्रबंधन का मुख्य कार्य है मानव शक्ति को उत्पादक बनाना जिससे क्रेता, साझेदार एवं कर्मचारियों को लाभ हो सके।
3. **संगठन को सुप्रशिक्षित एवं प्रेरित कर्मचारी उपलब्ध कराना:** मानव संसाधन का उद्देश्य है संगठन को प्रेरित कर्मचारी उपलब्ध कराना जो अधिक से अधिक अपनी उत्कृष्टता का प्रदर्शन करे एवं उनके कार्यों का यथार्थ रूप से मूल्यांकन हो जिसके आधार पर उन्हें पारिश्रमिक दिया जाय।
4. **कर्मचारियों को पूर्णरूप से कार्य संतुष्टि मिले एवं वे अपनी क्षमताओं का वास्तविकीकरण कर सके:** मानव संसाधन प्रबंधन प्रत्येक कर्मचारी को अपनी क्षमताओं का वास्तविकीकरण करने के लिये प्रोत्साहित करता है। अत: यथार्थ कार्यक्रम बनाने होंगे जिससे कर्मचारियों को कार्य की उत्कृष्टता में कोई संतुष्टि मिले।
5. **एक उत्कृष्ट कार्यजीवन का विकास एवं उसे बनाए रखना:** इसके द्वारा संगठन में एक व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्थिति का गठन होता है जो संगठन में काम करने वाले सभी सदस्यों के लिये काम्य होता है। मनचाहा कार्यक्षेत्र एवं कार्य जीवन के बिना संगठनात्मक कार्य संपादन में सुधार लाना असंभव है।
6. **मानव संसाधन प्रबंधन की नीति को सभी कर्मचारियों तक पहुंचाना:** मानव संसाधन का यह दायित्व है कि वह सभी कर्मचारियों तक ग्राहक, जो ग्राहक नहीं है, संचालक एवं अन्य जनता से उनकी धारणाओं को जानना एवं अंतत: मानव संसाधन की धारणाओं को समझना।
7. **नैतिक नीति एवं आचरण को बनाए रखने में मदद करना:** प्रबंधन में नैतिकता लाने का अर्थ है लोगों को एक परिवर्तन के लिये तैयार करना, असम्मति एवं मतभेदों के साथ सम्बन्ध रखना, उत्पादन के ऊंचे आदर्श रखना, विकास के आदर्शों पर सहमत करना इत्यादि।

टिप्पणी

अत: संक्षेप में, मानव संसाधन प्रबंधन का यह प्रयास होना आवश्यक है (क) संगठनात्मक उद्देश्यों की किफायती एवं प्रभावकारी तरीके से पूर्ति करना (ख) व्यक्तिगत उद्देश्यों की अधिक से अधिक मात्रा में पूर्ति करना (ग) समुदाय के हित हो संरक्षित करना।

मानव संसाधन प्रबंधन की महत्ता

मानव संसाधन आर्थिक एवं वस्तु संसाधन के साथ संगठन के उत्पादन एवं कार्यों में सहायता करते हैं। अत: संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये साथ-साथ वस्तु-संसाधन के सम्मिलित प्रयास की आवश्यकता है। पर इन प्रयासों एवं दक्षताओं के तहत मानव संसाधन के प्रभाव को संगठन के अनुकूल बनाने के लिये, समय पर विकास करना होगा जिससे और जटिल चुनौतियों का सामना कर सके। मानव संसाधन प्रबंधन संगठन को विविध प्रकार से सहायता प्रदान करता है:

1. **उद्योग के स्तर पर :** अच्छे मानव संसाधन संगठन में श्रेष्ठ लोगों को नियुक्त करने एवं उन्हें कायम रखने में सहायता करते हैं। योजन के द्वारा ही यह निर्धारित किया जाता है कि संगठन में कैसे लोगों का नियोग करना है।
2. **व्यक्तिगत स्तर पर:** मानव संसाधन के प्रभावकारी प्रबंधन कर्मचारियों को इस प्रकार से सहायता करते हैं:
   - यह कर्मचारियों में सामूहिक रूप से कार्य करने की इच्छा जगाता है।
   - जिन लोगों में क्षमता है उनके विकास एवं वृद्धि में यह सहायता करता है।
   - यह लोगों को उद्यमी एवं जिम्मेदारी के साथ काम करने में सहायता करता है।
3. **सामाजिक स्तर पर:** मानव संसाधन नीति से समाज लाभान्वित होता है:
   - रोजगारी के मौके बढ़ते हैं।
   - असाधारण क्षमताओं का सर्वोत्तम व्यवहार। कम्पनियां, जो अपने कर्मचारियों को अच्छा वेतन देती हैं एवं उनके साथ अच्छा करती है उसका विकास निश्चित है।

मानव संसाधन प्रबंधन की व्यवस्था प्रणाली

प्रणाली का अर्थ है कई तत्त्वों का एक समाहार जिसमें यह तत्त्व अलग-अलग रूप से रहते हैं पर वे परस्पर संबंधित रहते हैं एवं एक समान उद्देश्य के लिए काम करते हैं। किसी उद्योग में भी कई कार्यो का एक समाहार होता है, जैसे, श्रम, अर्थ, मानव संसाधन, जो कि एक दूसरे के साथ संबंधित होकर कार्य करते हैं एवं इसका परिणाम मिलता है- उत्पादन, सेवा एवं संतुष्टि में। पर इस परिणाम तक पहुंचने के लिए उद्योग में कई विभाग बनाए जाते हैं। इन्हें उप प्रणाली कहते हैं। प्रत्येक उपप्रणाली के अन्तर्गत कई अन्य उपप्रणालियां होती हैं। जैसे मानव संसाधन उपप्रणाली के अन्तर्गत आते हैं- प्रबन्ध, प्रशिक्षण, क्षतिपूर्ति, मूल्यांकन, पुरस्कार इत्यादि। मानव संसाधन को संगठनात्मक प्रदर्शन के लिये आवश्यक माना गया है।

टिप्पणी

किसी भी संगठन में विविध प्रकार के लोग कार्य करते हैं जिसका स्वरूप, मानसिकता, चरित्र भिन्न होते हैं। पर इन भिन्नताओं की मांग होती है उन पर ध्यान दिया जाय जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता का अधिक से अधिक विकास कर सके। मानव संसाधन के प्रबन्धकों का कार्य है प्रत्येक व्यक्ति पर ध्यान देकर उनकी क्षमता का विकास कर संगठन की उत्पादकता में वृद्धि लाना। तकनीकी विकास, विश्वव्यापी प्रतिस्पर्धा, जनसांख्यिकीय परिवर्तन इत्यादि के कारण काफी परिवर्तन हुआ है।

2.3.3 मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की प्रकृति तथा विस्तार क्षेत्र

किसी भी संगठन में लोग अपने आप को अलग-अलग विभागों के माध्यम से ही नहीं बल्कि ग्रुप में पारस्परिक आदान-प्रदान के माध्यम से भी प्रदर्शित करते हैं। वे अपने कार्यस्थल पर सिर्फ अपनी दक्षता या ज्ञान के सहित ही नहीं बल्कि अपनी व्यक्तिगत भावना, मान्यताएं, उद्देश्य इत्यादि का भी प्रदर्शन करते हैं। अत: किसी संगठन में कर्मचारी प्रबंधन का अर्थ सिर्फ उनकी तकनीकी दक्षता का प्रबंधन ही नहीं बल्कि मानव संसाधन के अन्य तत्वों का भी प्रबंधन है।

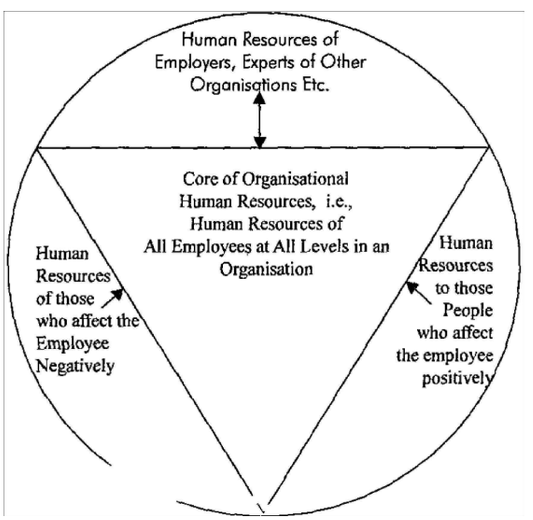

जटिल गतिशीलता

मनुष्य एक जटिल सत्ता है। अर्थात् वो एक जैविक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं नैतिक सत्ता है। किसी भी संगठन में ये मूलभूत मानव तत्त्व हैं। यद्यपि इनके अनुपात में हालात के अनुसार भिन्नता हो सकती है। संगठनात्मक प्रदर्शन एवं उत्पादकता के लिए मानव संसाधन के दैहिक एवं मानसिक विशेषताएं ही प्रासंगिक हैं। इसके अतिरिक्त इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि मानव संसाधन पर व्यक्ति की शिक्षा प्रशिक्षण विकास इत्यादि का प्रभाव पड़ता है। अत: मानव संसाधन का प्रबंधन अन्य सभी संसाधनों के प्रबन्धन से भिन्न है। किसी भी संगठन को चलाने के लिये मानव तत्त्वों का व्यवहार एक सक्रिय शक्ति को जन्म दे सकता है। अन्यथा यह निष्क्रिय एवं ध्वंसात्मक बन सकता है।

टिप्पणी

एक सामाजिक प्रक्रिया

प्रबंधन के क्षेत्र में मानव संसाधन प्रबंधन एक नई दिशा है। कार्मिक प्रबंधन का संबंध है मानव सम्पर्को से, उनके व्यवहार को संगठन की जरूरत के अनुसार ढालना। कार्मिक प्रबन्धक एक सामाजिक प्रक्रिया का संचालन करता है जिसमें वह निश्चित करता है कि कर्मचारियों को यथोचित रोज़गार के माध्यम से आर्थिक संतुष्टि एवं व्यक्तिगत रूप से काम करने के माध्यम से सामाजिक संतुष्टि एवं कार्य संतुष्टि मिले।

संगठन कई तरह के हो सकते हैं, जैसे वह कोई उत्पादक कंपनी हो सकती है या बैंक या फिर शैक्षणिक संगठन या अस्पताल, कोर्ट, धार्मिक संस्था या सामाजिक संगठन हो सकती है। कार्मिक प्रबंधन में व्यक्ति को एक व्यय केन्द्र नहीं बल्कि एक मुनाफे का केन्द्र माना गया है। इसके फलस्वरूप आधुनिक समय में कार्मिक प्रबंधन का दायित्व सिर्फ संगठन को उसके लक्ष्य की पूर्ति के लिए एक दक्ष एवं तत्पर कर्मचारी का प्रबन्ध करना ही नहीं होता है बल्कि उन्हें कर्मचारियों के आर्थिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक इच्छाओं की पूर्ति पर भी ध्यान रखना पड़ता है।

इसके अलावा, समाज के प्रति भी उन्हें दायित्त्व निभाना पड़ता है, जिसके अन्तर्गत सामाजार्थिक बुराइयों को कम करना एवं समाज में रहने वाले व्यक्तियों का, विशेषत: वंचित एवं कजमोर वर्ग का सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है। व्यक्ति की विभिन्न जरूरतों को सुनिश्चित कर उनकी पूर्ति करने में उन्हें सहायता करना भी कार्मिक प्रबन्धक के दायित्व के अन्तर्गत कर उनके काम में और अधिक विस्तार किया गया है।

एक चुनौतीपूर्ण कार्य

कार्मिक प्रबन्धक को संगठन एवं समाज की बदलती हुई जरूरतों की जानकारी रखनी पड़ती है। उन्हें कार्मिक, संगठनात्मक एवं सामाजिक लक्ष्य की पूर्ति उपलब्ध संसाधनों के द्वारा करने जैसे कुछ चूनौतीपूर्ण कार्य करने पड़ते हैं। श्रमिक संघ की बढ़ती हुई शक्ति एवं शिक्षा के मान में प्रगति से उनकी भूमिका में और अधिक जटिलता आती है। अत: वर्तमान कार्मिक प्रबन्धकों को अर्थशास्त्र, वाणिज्य, प्रबंधन, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, अभियान्त्रिकी, तकनीकी एवं कानून व्यवस्था इत्यादि विषय सम्बन्धी ज्ञान का होना आवश्यक है।

यह कहा गया है कि उपरोक्त विषय एवं मानव संसाधन प्रबंधन दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते है। कार्मिक प्रबन्धक के क्षेत्र में परिवर्तन एवं चुनौतीयों के फलस्वरूप 'कार्मिक प्रबंधन' शब्द के अर्थ में भी बदलाव आया है, क्योंकि श्रमिक प्रबंधन एवं मानव संसाधन प्रबंधन को भी इसकी परिधि के अन्तर्गत शामिल किया गया है।

मानव संसाधन प्रबंधन का क्षेत्र

मानव संसाधन प्रबंधन का क्षेत्र विस्तृत है। आधुनिक समय में व्यावहारिक विज्ञान का अनुसंधान, शिक्षित कर्मचारियों के प्रबंधन के नये तरीके एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में प्रगति ने मानव संसाधन के क्षेत्र को विस्तृत कर दिया है। भारतीय कार्मिक प्रबन्धक संस्थान ने मानव संसाधन प्रबंधन के क्षेत्र का स्पष्ट रूप से विवरण दिया है:

- **व्यक्तिगत पहलू:** इसका सम्बन्ध है जनशक्ति योजना, नियोग, चुनाव, स्थान, नियोजन, तबादला, पदोन्नति, प्रशिक्षण एवं विकास, निष्कासन, पारिश्रमिक, प्रेरणा, उत्पादकता इत्यादि से।

टिप्पणी

- **कल्याणकारी पहलू:** इसका सम्बन्ध है कर्मचारियों के काम करने की अवस्था एवं सुविधाएं जैसे कैन्टीन, क्रेश, रेस्ट, एवं लंच रूम, घर, परिवहन, चिकित्सा, शिक्षा, मनोरंजन की सुविधाएं इत्यादि से।
- **औद्योगिक सम्पर्क पहलू:** इसके अन्तर्गत यूनियन-प्रबंधन के बीच सम्पर्क, संयुक्त परामर्श, सम्मिलित सौदेबाजी, शिकायत एवं अनुशासन सम्बन्धी प्रक्रियाएं, वितर्कों का समझौता इत्यादि आते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. मानव संसाधन प्रबंधन शब्द की अर्थाभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त होने वाले शब्द है–

   (क) श्रमिक प्रबंधन (ख) कार्मिक प्रबंधन

   (ग) औद्योगिक संपर्क (घ) पूर्वोक्त सभी

4. इनमें से क्या मानव संसाधन प्रबंधन का क्षेत्र नहीं है?

   (क) व्यक्तिगत पहलू (ख) अलौकिक पहलू

   (ग) कल्याणकारी पहलू (घ) औद्योगिक संपर्क पहलू

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (घ)
4. (ख)

2.5 सारांश

मानव संसाधन प्रबंधन के व्यवहार करने वाले एवं उनके व्यवहार करने के उद्देश्य को रखते हुए इसे विभिन्न परिभाषाओं से परिभाषित किया गया है। कुछ इसे लोक प्रबंधन की दृष्टि से विचार करते हैं जिसमें विशिष्टता इस नीति की कोई गुंजाइश ही नहीं होती।

किसी भी संगठन में ये मूलभूत मानव तत्त्व हैं। यद्यपि इनके अनुपात में हालात के अनुसार भिन्नता हो सकती है। संगठनात्मक प्रदर्शन एवं उत्पादकता के लिए मानव संसाधन के दैहिक एवं मानसिक विशेषताएं ही प्रासंगिक हैं। इसके अतिरिक्त इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि मानव संसाधन पर व्यक्ति के शिक्षा प्रशिक्षण विकास इत्यादि का प्रभाव पड़ता है। अत: मानव संसाधन का प्रबंधन अन्य सभी संसाधनों के प्रबंधन से भिन्न है। किसी भी संगठन को चलाने के लिये मानव तत्त्वों का व्यवहार एक सक्रिय शक्ति को जन्म दे सकता है।

अर्नेटस्ट डेले (Earnest Dale) ने प्रबंधन को व्यक्ति के माध्यम से कार्य सम्पादन की प्रक्रिया बताया है। वास्तव में सभी प्रबंधन कार्मिक प्रबंधन ही हैं क्योंकि सभी प्रबंधन

मानव से संबंधित हैं। यद्यपि उनके कार्यक्षेत्र में अन्तर है एवं हरेक विभाग के लिये अलग अलग प्रबन्धक हैं जो अपने विभाग के कार्मिक का प्रबंधन करते हैं जिससे प्रभावकारी परिणाम मिल सके।

टिप्पणी

किसी उद्योग में भी कई कार्यों का एक समाहार होता है, जैसे, श्रम, अर्थ, मानव संसाधन, जो कि एक दूसरे के साथ संबंधित होकर कार्य करते हैं एवं इसका परिणाम मिलता है उत्पादन, सेवा एवं संतुष्टि से। पर इस परिणाम तक पहुंचने के लिए उद्योग में कई विभाग बनाए जाते हैं। इन्हे उप प्रणाली कहते हैं। प्रत्येक उपप्रणाली के अन्तर्गत कई अन्य उपप्रणालियां होती हैं। जैसे मानव संसाधन उपप्राणाली के अन्तर्गत आते हैं- प्रबन्ध, प्रशिक्षण, क्षतिपूर्ति, मूल्यांकन, पुरस्कार इत्यादि।

तकनीकी विकास, विश्वव्यापी प्रतिस्पर्धा, जनसांख्यिकीय परिवर्तन इत्यादि के कारण काफी परिवर्तन हुआ है।

2.6 मुख्य शब्दावली

- **चातुर्य** : कला–कौशल
- **औद्योगिक** : उद्योग–धंधों से संबंधित
- **सोपान** : स्तर संबंधी कड़ी, शृंखला
- **आदान–प्रदान** : लेन–देन
- **प्रणाली** : पद्धति, प्रक्रिया
- **अवैतनिक** : बिना वेतन के

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. प्रबंधन कला में मानवीय चातुर्य क्या है?
2. प्रबंधन का अभिप्रेरणा सिद्धांत क्या है?
3. मानव व्यवहार और सामाजिक प्रणाली में क्या अंतर है?
4. कार्मिक प्रबंधन और मानव संसाधन प्रबंधन में विभेद स्पष्ट कीजिए।
5. मानव संसाधन प्रबंधन के क्षेत्रों का नामोल्लेख कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. प्रबंधन की कला एवं वैज्ञानिकता का विश्लेषण कीजिए।
2. प्रबंधन की सैद्धांतिकता एवं उद्देश्यपरकता स्पष्ट कीजिए।
3. मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की अवधारणा स्पष्ट करते हुए इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
4. मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

5. मानव संसाधन प्रबंधन एवं विकास की प्रकृति रेखांकित करते हुए इसके विस्तार–क्षेत्र की विवेचना कीजिए।

टिप्पणी

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- *Managing for Value*, Hamilton, PHI
- *Management*, Stoner, PHI
- *Management Concepts and Practice*, Gupta, C.B. Sultan.
- *A Guide to Maintenance Management,* Roy, B.K., Jaico
- *Management Control Systems*, Ghosh , PHI
- *Compensation Management in Knowledge*, Henderson, Person
- *Knowledge Management*, Awad, Pearson
- *Knowledge for Competitive*, Chaudhary, Harish Excel.
- *Essentials of Management*, Dubrin, Andrew, Thomson
- *Brand Management Text and Case*, Moorthi, Vikas
- *Management: Principles & Practice*, Prag, Diwan, Excel.
- *Principles and Practice of Management*, Prasad, L.M., Sultan C.

इकाई 3 नियोजन एवं निर्णयन

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय

3.1 उद्देश्य

3.2 नियोजन : अवधारणा, उद्देश्य, तकनीक, रणनीतियां एवं परिचालन प्रतिमान

- 3.2.1 नियोजन की अवधारणा एवं परिभाषाएं
- 3.2.2 नियोजन के उद्देश्य
- 3.2.3 नियोजन तकनीक एवं रणनीतियां
- 3.2.4 नियोजन परिचालन प्रतिमान

3.3 निर्णयन : निर्णय लेने में समय और मानवीय संबंध, कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय, निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान

- 3.3.1 निर्णयन की अवधारणा एवं प्रकृति
- 3.3.2 निर्णयन के चरण में समय एवं मानवीय संबंध
- 3.3.3 निर्णयन के स्वरूप : कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय
- 3.3.4 निर्णयन के उपागम एवं महत्व
- 3.3.5 निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान

3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

3.5 सारांश

3.6 मुख्य शब्दावली

3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

व्यवसाय की सफलता में नियोजन का विशेष महत्व माना जाता है। जॉर्ज आर. टेरी के शब्दों में, ''नियोजन एक उपक्रम के सफलतापूर्वक कार्यों की आधारशिला है।'' प्रतिस्पर्धा बाजार में मांग के उतार–चढ़ाव, नई–नई वस्तुओं व उनके नए–नए उपयोगों की खोज तथा उत्पादन के साधनों की बढ़ती हुई कमी ने व्यापारी के लिए ऐसी परिस्थितियां पैदा कर दी हैं कि वह अपने साधनों का सर्वश्रेष्ठ (optimum) उपयोग किए बिना बाजार में एक दिन भी नहीं ठहर सकता। एक विद्वान के अनुसार, ''उस प्रबन्धक को जो बिना योजना के कार्य करना चाहे, लाभ के बिना जीवित रहने की आदत डाल लेनी चाहिए।''

सभी व्यवसायों के प्रत्येक क्षेत्र में निर्णयन की क्रिया का अपना विशेष महत्व होता है क्योंकि व्यवसाय के प्रत्येक क्षेत्र में निर्णय लेना आवश्यक होता है। इस संदर्भ में मैलविन टी. कोपलैंड का यह कथन उल्लेखनीय है कि ''प्रशासन मुख्य रूप में निर्णय लेने की प्रक्रिया है और निर्णय लेने का अधिकार और यह देखना कि उसके अनुसार कार्य हो रहा है या नहीं यह उत्तरदायित्व है। व्यावसायिक उपक्रम चाहे छोटा हो अथवा बड़ा हो, सब की स्थिति में परिवर्तन होता रहता है, कर्मचारियों में बदलाव होता रहता है और अनेक आकस्मिक घटनाएं भी घटित होती रहती हैं, लेकिन पहियों को चालू रखने और उसकी क्रियाओं को चालू रखने के लिए निर्णय लेना अनिवार्य होता है।

इस इकाई में हम नियोजन एवं निर्णयन से संबंधित सभी अहम पहलुओं का विवेचन करेंगे।

टिप्पणी

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- नियोजन की अवधारणा एवं परिभाषाओं से अवगत हो पाएंगे;
- नियोजन के उद्देश्य, इसकी तकनीक एवं रणनीतियों को समझ पाएंगे;
- निर्णयन की अवधारणा एवं प्रकृति का रेखांकन कर पाएंगे;
- कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय में अंतर कर पाएंगे;
- निर्णयन के राष्ट्रीय प्रतिमान से परिचित हो पाएंगे।

3.2 नियोजन : अवधारणा, उद्देश्य, तकनीक, रणनीतियां एवं परिचालन प्रतिमान

नियोजन की संकल्पना, उद्देश्यपरकता, इसकी तकनीक, रणनीतियों एवं प्रतिमान संबंधी तथ्यों को पृथक–पृथक इस प्रकार विवेचित किया जा सकता है–

3.2.1 नियोजन की अवधारणा एवं परिभाषाएं

नियोजन प्रबंधन का प्राथमिक कार्य है। इसकी प्रमुख अवधारणाएं निम्नलिखित हैं –

1. बौद्धिक प्रक्रिया अवधारणा (Intellectual Process Concept) – नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत प्रारंभ से लेकर अंत तक मानसिक चिंतन आवश्यक होता है – क्या कार्य करना है? क्यों करना? कैसे करना है? किसके द्वारा करना है? कब करना है? आदि के उचित स्तर नियोजन से प्राप्त करने पड़ते हैं।

2. चयन अवधारणा (Selection Concept) – नियोजन मूल रूप से चयन प्रक्रिया मानी जाती है। इसके अंतर्गत विभिन्न विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना होता है।

3. सार्वभौमिकता (University) – नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक विभाग के प्रत्येक स्तर पर होती है। जहां पर भी कार्यों का निष्पादन होता है, वहां नियोजन की आवश्यकता होती है।

4. निरंतर प्रक्रिया की अवधारणा (Continuous Process Concept) – नियोजन का कार्य निरंतर चलता रहता है। ज्यों–ज्यों संस्था का विकास होता जाता है, त्यों–त्यों नियोजन की प्रक्रिया भी बढ़ती जाती है।

5. दूरदर्शिता की अवधारणा (Concept of Foresight) – नियोजन के प्रत्येक स्तर एवं क्षेत्र में दूरदर्शिता की आवश्यकता होती है यदि दूरदर्शिता को हटा दिया जाए तो वह शक्तिहीन हो जाएगा।

6. पूर्वानुमान अवधारणा (Forecasting Concept) – नियोजन के अंतर्गत पूर्वानुमान लगाने का प्रयास किया जाता है, ताकि श्रेष्ठ निष्पादन हो सके। फेयोल के

अनुसार ''नियोजन विभिन्न प्रकार के पूर्वानुमानों का चाहे वे अल्पकालीन हों या दीर्घकालीन, सामान्य या विशिष्ट संश्लेषण है।''

7. लोच की अवधारणा (Concept of Flexibility) – नियोजन लोचपूर्ण हो ताकि परिस्थितियों के अनुसार इसमें भी परिवर्तन किए जा सकें।

टिप्पणी

8. उद्देश्यात्मक अवधारणा (Objectivity Concept) – नियोजन किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य न्यूनतम लागत एवं परिश्रम से अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है।

9. पारस्परिक निर्भरता (Mutual Dependecne) – नियोजन में पारस्परिक निर्भरता विद्यमान होती है। एक उपक्रम के कार्यक्रमों को कुछ विभागों में विभाजित किया जाता है। इनकी अलग–अलग योजनाएं होती हैं किंतु ये सभी सामूहिक योजना (master plan) का ही एक अंग होती हैं। विभागीय योजनाएं एक–दूसरे पर निर्भर होती हैं।

परिभाषाएं

1. **कून्ट्ज** तथा **ओ' डोनेल** के अनुसार, ''नियोजन का अर्थ पहले से ही यह तय करना है कि क्या करना है, कैसे करना है, कब करना है और किसको करना है। नियोजन 'हम जहां हैं' से लेकर 'हमें जहां जाना हैं' के बीच की दूरी को पाटता है। यह उन बातों को संभव बनाता है जो अन्यथा नहीं होती हैं।
2. **जॉर्ज आर. टैरी** के शब्दों में, ''नियोजन भविष्य में देखने की विधि या कला है। इसमें भविष्य की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान लगाया जाता है जिससे निर्धारित लक्ष्यों की दृष्टि से किए जाने वाले वर्तमान प्रयासों को उनके अनुरूप बनाया जा सके।
3. **हेनरी फेयोल** के अनुसार, "कार्य की योजना से अभिप्राय उन परिणामों से है जिनको प्राप्त करना है; कार्य की उस रूपरेखा से है जिसका पालन करना है, उन अवस्थाओं से है जिनसे होकर कार्य को गुजरना है तथा उन विधियों से है जिनका प्रयोग किया जाना है।"

   फेयोल के अनुसार योजना में एक साथ चार बातें स्पष्ट करनी आवश्यक हैं –

   (i) अपेक्षित परिणाम, जिन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किए जाएंगे,

   (ii) कार्यवाही की रूपरेखा, जो अपेक्षित परिणामों को प्राप्त करने की सर्वश्रेष्ठ योजना है।

   (iii) कार्यवाही की क्रमिक अवस्थाएं जिसमें योजना की कार्यविधि और इसकी अवस्थाओं का कार्यक्रम, समय तालिका, बजट आदि के रूप में विस्तार किया जाता है।

   (iv) कार्य करने के तरीके अर्थात नियम, कार्यविधि व सिद्धांत जो संगठन में एकता, समरसता तथा नियंत्रण रखने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।
4. **हेयन्स और मैसी** के अनुसार, ''नियोजन प्रबंधक का कार्य है जिसमें उसे इस बात का पूर्व निर्णय करना पड़ता है कि उसे क्या करना है। यह निर्णय की एक

विशेष क्रिया है। यह बौद्धिक कार्य है जिसके लिए सृजनात्मक विचार और कल्पना की आवश्यकता है।''

टिप्पणी

5. **एम.ई.हर्ले** के अनुसार, ''क्या करना चाहिए इसका पहले से ही निर्णय करना, योजना बनाना या नियोजन कहलाता है। इसके अंतर्गत विभिन्न वैकल्पिक उद्देश्यों, नीतियों, विधियों और कार्यक्रमों में से सर्वोत्तम का चुनाव किया जाता है।''

6. **एल. उर्विक** के अनुसार ''व्यावसायिक नियोजन मुख्य रूप से कार्यों को व्यवस्थित रूप से करने, कार्य करने से पूर्व उस पर मनन करने और अनुमानों की तुलना में कार्यों को तथ्यों के आधार पर करने का एक प्रकार का मानसिक चिंतन है।''

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर हम कह सकते हैं कि पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध साधनों की सहायता से भावी कार्यक्रम के संबंध में किए जाने वाले कार्यों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चुनाव करने का निर्णय होना ही नियोजन है।

डब्ल्यू.एच. न्यूमैन के अनुसार, ''सामान्यतया भविष्य में क्या करना है यह पूर्व में ही तय कर लेना नियोजन है। इस विचार से नियोजन मानवीय आचरण का अति विस्तृत रूप है।''

एलन के अनुसार, ''नियोजन भविष्य को पकड़ने के लिए बनाया गया पिंजरा होता है।''

हार्ट के अनुसार, ''क्या किया जाना है, इसका पूर्व निर्धारण ही नियोजन है।''

मेरी कुशिंग नाइल्स के अनुसार, ''नियोजन किसी उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु सर्वोत्तम कार्य–प्रक्रिया का चयन करने एवं विकसित करने की जागरूक प्रक्रिया है। यह भावी प्रबंधकीय कार्यों के उद्‌भव का आधार है।

क्लाड एल. जार्ज के अनुसार, ''नियोजन वर्तमान में भविष्य को प्रभावित करने वाले निर्णयों को लेने का एक बौद्धिक, आर्थिक एवं सुव्यवस्थित माध्यम है।''

3.2.2 नियोजन के उद्देश्य

नियोजन के बिना प्रबंधक का कार्य उद्देश्यहीन होता है जिससे समय, साधन और सामग्री सभी का अपव्यय होने की संभावना रहती है और भविष्य के बारे में सदैव अनिश्चितता का वातावरण बना रहता है। नियोजन प्रबंध के कार्यों में व्यवस्था को जन्म देता है। प्रबंधक इसके द्वारा उद्देश्यपूर्ण प्रयत्न कर सकते हैं। फलतः साधनों का उपयोग होता है, व्यवसाय की कुशलता बढ़ती है और भविष्य के बारे में विश्वास पैदा होता है। व्यवसाय में योजना बनाने के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. लक्ष्य प्राप्ति में सहायक बनना– सभी व्यावसायिक संस्थाओं के पूर्व–निर्धारित उद्देश्य होते हैं। नियोजन इन उद्देश्यों के लक्ष्यों पर प्रबंधकों का ध्यान केंद्रित करने और उन्हें उचित समय में उचित साधनों से प्राप्त करने में सहायक होता है। इतना ही नहीं, नियोजन उपक्रमों के लक्ष्यों के प्रति जागरूक एवं सजग रहता है तथा उन्हें प्राप्त करने का निरंतर प्रयास करता रहता है। प्रत्येक विभागाध्यक्ष अपने विभाग की नीतियों,

विधियों, उपक्रमों तथा मोर्चाबंदी आदि को अन्य विभागों का प्रतिद्वंद्वी न बनाकर पूरक बनाने का प्रयत्न करता है। इसके कारण लक्ष्यों को प्राप्त करना अपेक्षाकृत सरल हो जाता है।

टिप्पणी

2. अनिश्चितताओं एवं परिवर्तनों को कम करना – भविष्य तो सदा से ही अनिश्चित एवं परिवर्तनशील रहा है। इस अनिश्चितता एवं परिवर्तनशीलता का सामना करने के लिए नियोजन की आवश्यकता पड़ती है। व्यवसाय संबंधी कोई भी तत्व, जैसे–प्रतिस्पर्धा, रोकड़ की स्थिति, उत्पादन की मांग, उत्पादन क्षमता, लागत व्यय, राजकीय नीति, हड़ताल एवं तालाबंदी आदि निश्चित एवं अपरिवर्तनशील नहीं होता। इसके अतिरिक्त अन्य भौतिक जोखिमों की भी आशंका रहती है, जैसे–बाढ़ का आना, भूकंप का आना, अग्निकांड का होना तथा तूफान आना आदि। अतः प्रत्येक प्रबंधक इन अनिश्चितताओं एवं परिवर्तनों का पहले से ही अनुमान लगाकर तदानुसार योजना बना लेता है।

3. एकता एवं समन्वय स्थापना – उपक्रम द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न क्रियाएं संपन्न की जाती हैं। इन क्रियाओं के मध्य जब तक समन्वय स्थापित नहीं किया जाएगा, तब तक उद्देश्यों की प्राप्ति कठिन होगी। विभिन्न क्रियाओं के मध्य प्रभावी एकता एवं समन्वय स्थापित करने का यह कार्य नियोजन द्वारा संपन्न किया जाता है। योजना एक चुना हुआ मार्ग है, जिसके द्वारा प्रबंधक सामूहिक कार्यों में समन्वय करता है। नियोजन पृथक–पृथक विभागों के मध्य होने वाले व्यर्थ के संघर्ष को बचाता है क्योंकि समन्वय द्वारा सभी विभाग समान उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य करते हैं।

4. संगठन की प्रभावशीलता बढ़ाना – नियोजन संगठन को प्रभावी बनाता है और वांछित परिणामों को प्राप्त करने में लगने वाली अनावश्यक देरी तथा लालफीताशाही को समाप्त करके प्रबंधकीय कार्यों को गति प्रदान करता है। यह अव्यवस्थित, अर्थहीन तथा अनावश्यक क्रियाओं के स्थान पर सुव्यवस्थित, अर्थपूर्ण एवं अनावश्यक क्रियाओं को जन्म देता है। यह दोहरी क्रियाओं की समाप्ति करके संगठन में होने वाले अपव्यय पर रोक लगाता है। इस प्रकार कुशल नियोजन से संगठन प्रभावी बनता है तथा उसकी गति तीव्र हो जाती है।

5. प्रभावपूर्ण नियंत्रण – नियोजन के अंतर्गत प्रत्येक प्रबंधक अपने अधीनस्थों की क्रियाओं पर सर्वोत्तम ढंग से नियंत्रण स्थापित करने का प्रयत्न करता है। यह नित्रंण तब तक प्रभावी नहीं हो सकता, जब तक कि उनकी क्रियाओं को सही ढंग से माप न लिया जाए। नियोजन नियंत्रण का प्राण है। नियोजन यह निश्चित कर देता है कि किस विभाग को और किन व्यक्तियों को एक निर्धारित समय में और निर्धारित लागत से क्या–क्या लक्ष्य प्राप्त करने हैं। स्पष्ट है कि इसके फलस्वरूप नियंत्रण प्रभावपूर्ण हो जाता है क्योंकि अब नियंत्रण करने वाले प्रबंधक को प्रत्येक संबंधित विभाग और व्यक्ति की वास्तविक प्रगति को, नियोजित प्रगति की तुलना में, मापने का अवसर मिल जाता है। यदि वास्तविक प्रगति नियोजित प्रगति की तुलना में कम होती है तो प्रबंधक न केवल इसकी जिम्मेदारी निर्धारित कर सकते हैं, बल्कि इसके कारणों का विश्लेषण भी कर सकते हैं।

टिप्पणी

6. कार्यों को मितव्ययी बनाना – नियोजन के माध्यम से एक व्यवसायी सरलतापूर्वक आर्थिक मितव्ययता प्राप्त कर सकता है। सुविचारित नियोजन से संचालन एवं लागत व्यय में कमी आ जाती है क्योंकि नियोजन के द्वारा उपलब्ध वैकल्पिक कार्यपथों में से सर्वश्रेष्ठ का चयन किया जाता है और तत्पश्चात उसी का अनुसरण किया जाता है। इसके साथ ही प्रभावी नियोजन के माध्यम से अनुत्पादक एवं असंबंधित कार्यविधियों को समाप्त किया जा सकता है और उनमें तारतम्य एवं समन्वय स्थापित किया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन लागत कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त नियोजन द्वारा उपलब्ध साधनों का सदुपयोग करने से भी लागत में स्वतः कमी आ जाती है।

7. निर्णय लेने में सहायक बनना – प्रबंध एक लगातार निर्णय लेने की प्रक्रिया है। निर्णय लेना योजना की धुरी है। निर्णय लेने का अर्थ है, उपलब्ध कार्यविधियों में सबसे अधिक उपयुक्त कार्यविधि का चयन करना। योजना निर्णय लेने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाती है। यह विषय सामग्री के निरंतर संग्रह करने, मूल्यांकन करने और चयन करने से संबंध रखती है। सर्वोत्तम उपलब्ध कार्यविधि ही हमारी योजना बन जाती है। वास्तव में योजना सभी प्रकार के निर्णयों की पूर्वगामिनी होती है।

3.2.3 नियोजन तकनीक एवं रणनीतियां

प्रबंध के क्षेत्र में नियोजन लागू करने में टेलर प्रथम व्यक्ति थे। इन्होंने प्रबंधकों का ध्यान इस ओर दिलाया। नियोजन के अंतर्गत यह निर्णय लिया जाता है कि क्या करना है? कैसे करना है ? कब करना है ? और किसने करना है? हम कहां हैं और भविष्य में कहां पहुंचना चाहते हैं? यह सशक्त रूप से संकेत करता है कि केवल पूर्व निर्धारित बातों को ही नहीं अपनाना है बल्कि समझदारी के साथ अपने कार्य के अनुकूल परिवर्तन भी करना है । टेलर का कहना था कि प्रत्येक संस्था में एक पृथक योजना विभाग होना चाहिए और इस योजना विभाग को उपर्युक्त चारों प्रश्नों के उत्तर खोजने चाहिए। क्या किया जाए, इस संबध में उच्च प्रबंधकों तथा इंजीनियरिंग विभाग से सलाह अवश्य लेनी चाहिए क्योंकि जब उच्च प्रबंध से यह निर्देश मिल जाए कि क्या, कैसे और कितनी संख्या में उत्पादन किया जाना है और इस माल की सुपुर्दगी कब देना आवश्यक है, तब ही योजना विभाग आवश्यक योजना बनाएगा। एक वैज्ञानिक नियोजन में बहुत सी बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। टेलर का कहना था कि नियोजन बहुत सावधानी से और बहुत स्पष्ट विधि से किया जाना चाहिए।

एक सफल नियोजन में निम्नलिखित कार्यों का समावेश किया जाता है –

(अ) पूर्वानुमान लगाना (Forcasting)

(ब) उद्देश्यों का निर्धारण करना (Determination of Objectives)

(स) कार्यविधि का निर्धारण (Determination of Working Methods)

(द) कार्यक्रमों का निर्धारण करना (Determination of Programmes)

(य) बजट बनाना (Budgeting)

(र) नीति निर्धारण करना (Determination of Policies)

टिप्पणी

उपरोक्त कार्यों के साथ–साथ अनेक बातें भी ध्यान में रखनी पड़ती हैं, जैसे–उत्पादन का कार्यक्रम बनाते समय वस्तु की किस्म, मात्रा, डिजाइन, समय आदि। मशीनों, प्रक्रियाओं तथा कार्यवाहियों का क्रम निर्धारित करना पड़ता है । कौन–सी क्रिया कब प्रारंभ होगी और कब समाप्त होगी, इसकी उपयुक्त समय तालिका बनानी पड़ती है। योजना को कार्य रूप देने के लिए आवश्यक औजार, कच्चा माल, साजो–सामान आदि उपलब्ध कराना पड़ता है। कर्मचारियों को आवश्यक निर्देश देने पड़ते हैं, जिसके लिए विभिन्न रेखाचित्र, डिजाइन आदि का सहारा भी लिया जा सकता है। समय अध्ययन तथा गति अध्ययन के आधार पर समय प्रमाप निर्धारित करने पड़ते हैं। योजना में इस बात की व्यवस्था भी करनी पड़ती है कि परिस्थितियों के अनुसार उसमें आवश्यक परिवर्तन कर दिया जाए ।

ये सभी कार्यवाहियां उत्पादन प्रबंध का अंग मानी जाती हैं और इन कार्यवाहियों को उत्पादन नियोजन एवं नियंत्रण कहते हैं । सुविधा की दृष्टि से उत्पादन, नियोजन एवं नियंत्रण को चार भागों में बांटा जाता है–

(अ) मार्ग निर्धारण (Routing)
(ब) समय निर्धारण (Scheduling)
(स) प्रेषण (Despatching)
(द) अनुगमन (Follow-up)

ये निर्धारण के अंतर्गत यह निर्धारित किया जाता है कि उत्पादन में क्या–क्या सामग्री, मशीनें, प्रक्रियाएं और कार्यवाहियां निहित हैं। पूर्व–निर्धारित मात्रा में निश्चित किस्म एवं आकार का उत्पादन करने के लिए उत्पादन का सबसे छोटा और मितव्ययी कार्य–मार्ग क्या हो सकता है अर्थात कच्चा माल किन–किन प्रक्रियाओं से होकर उत्पादन का रूप धारण करेगा। समय निर्धारण के अंतर्गत प्रक्रियाओं के प्रारंभ एवं समाप्ति का समय निर्धारित कर लिया जाता है। इससे निश्चित समय पर उत्पादन करने में सहायता मिलती है। प्रेषण के अंतर्गत उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चा माल, मशीन, मजदूर, निर्देश, डिजाइन, नक्शे इत्यादि यथास्थान पहुंचाना शामिल हैं। अनुगमन में उत्पादन कार्यवाही की जांच–पड़ताल शामिल है। प्रगति रिपोर्ट बनाकर इनका योजना से मिलान किया जाता है एवं अंतर आने पर सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है।

(क) नियोजन तकनीक में प्रकृति संबंधी आधार

(अ) प्रशासकीय योजनाएं (Administrative plans) – दीर्घकालीन उद्देश्यों, संस्था की व्यापक रणनीति और इसके आधारभूत निर्णय पर आधारित योजनाएं जो व्यवसाय के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं को प्रभावित करती हैं, प्रशासकीय या कार्यनीति संबंधी योजनाएं कहलाती हैं। प्रशासकीय योजनाओं से संस्था की प्रकृति एवं स्वरूप के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त हो जाती है।

(ब) परिचालन या क्रियात्मक योजनाएं (Operational plans) – परिचालन योजनाएं संस्था की रणनीति संबंधी योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए चालू व्यावसायिक कार्यवाहियों को अल्पकालीन व्यावहारिक योजनाओं के ताने–बाने में बुनने के लिए मध्यस्तरीय एवं निम्नस्तरीय प्रबंधकों द्वारा बनाई जाती हैं। परिचालन योजनाएं वर्तमान बाजारों, वर्तमान क्रियाओं, वर्तमान उपभोक्ताओं एवं वर्तमान सुविधाओं के साथ भावी नियोजन होता है। उत्पादन, विपणन एवं वित्तीय विभागों के दैनिक कार्यों को पूरा करने के लिए परिचालन योजनाएं बनानी पड़ती हैं।

टिप्पणी

(ख) नियोजन तकनीक संबंधी प्रबंध स्तरीय आधार

(अ) उच्चस्तरीय योजना (Top level plans) – यह योजना उच्च प्रबंधकों द्वारा (जैसे–जनरल मैनेजर द्वारा) तैयार की जाती है। इसके अंतर्गत उपक्रम की सामान्य नीति, उद्देश्य, लक्ष्य, बजट आदि तैयार किए जाते हैं।

(ब) मध्यस्तरीय योजना (Middle level plans) – यह मध्यस्तरीय प्रबंधकों द्वारा तैयार की जाती हैं। ये योजनाएं युक्तियों के रूप में तैयार की जाती हैं, जिनके द्वारा उपक्रम के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति करना संभव होता है।

(स) निम्नस्तरीय योजना (Lower level plans) – यह योजना पर्यवेक्षकों द्वारा तैयार की जाती है तथा उपक्रम के कर्मचारियों द्वारा की जाने वाली क्रियाओं से संबंध रखती है।

(ग) नियोजन तकनीक संबंधी व्यापकता के आधार

(अ) समामेलित योजनाएं (Corporate plans) – जो किसी कंपनी के सभी विभागों के विकास एवं विस्तार के लिए उद्यमियों व उच्च प्रबंधकों द्वारा स्वयं दीर्घकालीन रणनीति को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं।

(ब) विभागीय योजनाएं (Departmental plans) – जो भिन्न–भिन्न विभागों, जैसे–उत्पादन, विपणन, वित्त कर्मचारी के द्वारा अपने तत्कालीन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बनाई जाती हैं। ये विस्तृत योजना के उद्देश्यों के अनुरूप तैयार की जाती हैं।

(घ) समयाधृत नियोजन तकनीक

(अ)दीर्घकालिक योजनाएं (Long-term Plans) – पीटर एफ. ड्रकर (Peter F. Drucker) के शब्दों में, ''दीर्घकालीन नियोजन व्यवस्थित ढंग से वर्तमान व्यावसायिक निर्णयों को (मुख्यतः जोखिम युक्त) उनके भविष्य के संबंध में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों द्वारा लेने, इन निर्णयों को क्रियांवित करने के लिए आवश्यक प्रयासों को व्यवस्थित ढंग से संगठित करने एवं इन निर्णयों के परिणामों के अनुमान की तुलना में व्यवस्थित संप्रेषण व्यवस्था द्वारा मापन करने की एक गतिशील प्रक्रिया है।''

दीर्घकालीन नियोजन प्रायः निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है –

(i) पूंजीगत संपत्तियों की व्यवस्था के लिए,
(ii) किसी नवीन पूंजीगत योजना को कार्यांवित करने के लिए,
(iii) विवेकीकरण या वैज्ञानिक प्रबंध की किसी योजना के लिए,
(iv) कुशल कर्मचारियों की व्यवस्था करने के लिए,
(v) नवीन इकाइयों में समन्वय के लिए,
(vi) स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा बनाए रखने के लिए,
(vii) जल्दबाजी में लिए गए निर्णयों पर रोक लागने के लिए,
(viii) उपक्रम के संपूर्ण कार्य निष्पादन के मापन के लिए तथा मापदंड प्रस्तुत करने के लिए।

(ब) अल्पकालीन योजनाएं (Short-term plans) – ये योजनाएं एक वर्ष या इससे कम अवधि के लिए तत्कालीन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मध्यस्तरीय तथा निम्नस्तरीय प्रबंधकों के द्वारा स्वयं बनाई जाती हैं। इन योजनाओं का भी दीर्घकालीन

योजनाओं की रूपरेखा के अनुसार होना आवश्यक है। एक वर्ष से तीन वर्ष तक की अवधि वाली योजनाओं को प्रायः मध्यावधि योजनाएं कहते हैं।

(ङ) उपयोग आधारित नीतिगत तकनीक

टिप्पणी

उपयोग के आधार पर योजनाएं निम्न दो प्रकार की होती हैं –

(1) स्थायी या निरंतर उपयोग की योजनाएं (Standing or repeated use plans) – जो योजनाएं किसी व्यावसायिक संस्था में स्थायी रूप से भिन्न–भिन्न स्तरों पर बनाई जाती हैं, अर्थात बार–बार उपयोग करने के लिए बनाई जाती हैं उन्हें स्थायी योजनाएं कहते हैं। इन योजनाओं का प्रयोग तब–तब किया जाता है जब–जब इनकी आवश्यकता पड़ती है। इन योजनाओं के प्रमुख उदाहरण में संस्था के उद्देश्य, नीतियां, कार्यविधि नियम और कार्यनीति उल्लेखनीय हैं।

(2) तदर्थ या एकल उपयोग की योजनाएं (Single Use Plans) – जब कोई योजना किसी विशेष परिस्थिति में किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बनाई जाती है, तब उसे तदर्थ या एकल उपयोग की योजना कहते हैं। इन योजनाओं का प्रयोग अनावर्तक कार्यों के लिए तथा तत्कालीन उपयोग के लिए किया जाता है। एकल उपयोग की योजना में कार्यक्रम, बजट और परियोजनाएं शामिल हैं। उद्देश्य की पूर्ति के पश्चात ये योजनाएं स्वतः ही समाप्त हो जाती हैं।

3.2.4 नियोजन परिचालन प्रतिमान

नियोजन के मुख्य परिचालन प्रतिमान निम्नांकित हैं–

1. संतुलित स्कोरबोर्ड
2. रणनीति मानचित्र
3. SWOT विश्लेषण
4. PEST प्रतिमान
5. गैप योजना
6. ब्लू ओशन स्ट्रेटेजी
7. पोर्टर के पांच बल
8. VRIO फ्रेमवर्क
9. बाल्ड्रिज फ्रेमवर्क
10. O.K.R.
11. होशिन योजना
12. मुद्दे आधारित रणनीतिक योजना
13. संरेखण सामरिक योजना प्रतिमान
14. सामरिक योजना के जैविक प्रतिमान
15. वास्तविक समय सामरिक योजना
16. लक्ष्य आधारित रणनीतिक योजना

टिप्पणी

1. **संतुलित स्कोरबोर्ड**– यह डी.आर.एस. द्वारा निर्मित किया गया एक रणनीति प्रबंधन ढांचा है। यह आपको यह समझने में सहायक होता है कि आप अपने उद्देश्य को रणनीतिक रूप से पूरा कर रहे हैं अथवा नहीं।
2. **रणनीति मानचित्र**– यह एक दृश्य उपकरण है जिसे एक रणनीतिक योजना को स्पष्ट रूप से संप्रेषित करने और उच्च स्तरीय व्यावसायिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निर्मित किया जाता है। यह संतुलित स्कोरबोर्ड का एक प्रमुख अंग है और सुगमता से संगठन में उच्चस्तरीय सूचना को प्रेषित करने का अद्भुत तरीका प्रदान करता है।
3. **SWOT विश्लेषण अथवा SWOT मैट्रिक्स**– यह एक उच्चस्तरीय प्रतिमान है जिसका उपयोग संगठन की रणनीतिक योजना के आरम्भ में किया जाता है। यह 'ताकत, कमजोरियों, अवसरों तथा खबरों' हेतु एक संक्षिप्त शब्द है। ताकत और कमजोरियों को आंतरिक तथा अवसर व खतरे बाहरी कारकों में सम्मिलित किया जाता है।
4. **PEST प्रतिमान**– SWOT की भांति, PEST (Political, Economic, Social and Technology) भी एक संक्षिप्त रूप है जिसका अर्थ 'राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और तकनीक' है। इनमें से प्रत्येक कारक का प्रयोग किसी उद्योग या व्यावसायिक वातावरण को देखने और यह निर्धारित करने के लिए किया जाता है कि किसी संगठन का संपूर्ण राष्ट्र पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।
5. **गैप योजना**– इसे 'आवश्यकता–अंतराल विश्लेषण', 'आकलन की आवश्यकता' या 'रणनीतिक योजना गैप' के रूप में भी जाना जाता है। इसका उपयोग मुख्यतः यह तुलना करने के लिए किया जाता है कि कोई संगठन अब कहां है। वह कहां होना चाहता है, और मध्य की खाई को कैसे समाप्त करना है। इसका उपयोग मुख्य रूप से विशिष्ट आंतरिक कमियों की पहचान करने के लिए किया जाता है।
6. **ब्लू ओशन स्ट्रेटेजी**– यह एक रणनीतिक योजना प्रतिमान है जो 2005 में 'ब्लू ओशन स्ट्रेटजी : हाउ टू क्रिएट अनकान्टेस्टेड मार्किट स्पेस एंड मेक कॉम्पिटिशन इर्रेलेवेंट' नामक एक पुस्तक में अंकित था।
7. **पोर्टर के पांच बल**– यह एक पुराना रणनीति निष्पादन ढांचा है जो किसी उद्योग या बाजार की लाभप्रदता को प्रभावित करने वाली शक्तियों के आसपास बनाया जाता है। यह निम्न पांच बलों की जांच करता है–
   - प्रवेश की धमकी
   - स्थानापन्न
   - उपभोक्ताओं की सौदेबाजी की शक्ति
   - आपूर्तिकर्ताओं की सौदेबाजी की शक्ति
   - मौजूदा फर्मों के मध्य प्रतिस्पर्धी प्रतिद्वंद्विता
8. **VRIO फ्रेमवर्क**– यह 'मूल्य, दुर्लभता, अनुकरण, संगठन' के लिए एक संक्षिप्त शब्द है। यह रणनीतिक योजना समग्र रणनीति की तुलना में विजन स्टेटमेंट से

अधिक सम्बन्धित है। VRIO प्रतिमान को लागू करने का प्रमुख लक्ष्य बाजार में प्रतिस्पर्धात्मक लाभ करना है।

टिप्पणी

9. **बाल्ड्रिज फ्रेमवर्क**– मैल्कम बॉल्ड्रिज राष्ट्रीय गुणवत्ता पुरस्कार 'प्रदर्शन उत्कृष्टता के लिए राष्ट्रीय मान्यता का उच्चतम स्तर है जो एक अमेरिकी संगठन प्राप्त कर सकता है।' 1987 में बनाया गया बाल्ड्रिज फ्रेमवर्क का लक्ष्य संगठन को उनके मिशन और विजन को प्राप्त करते हुए नवाचार और सुधार करने में सहायता करना है।
10. **ओ.के.आर. (उद्देश्य और मुख्य परिणाम)**– यह ढांचा, अधिक सरल रणनीतिक नियोजन उपकरण में से एक है। इसे मुख्य रूप से मापने योग्य लक्ष्यों के आस–पास संरेखण और जुड़ाव बनाने हेतु निर्मित किया गया है। यह प्रतिमान अपनी सादगी के कारण आंशिक रूप से प्रभावी है। यह एक 'विपरीत' पदानुक्रम को भी नियोजित करता है जो धरती से ऊपर तक खरीद और संरेखण प्राप्त करने का कार्य करता है।
11. **होशिन योजना**– होशिन योजना दृष्टिकोण आपके रणनीतिक लक्ष्यों को आपकी परियोजनाओं और कार्यों के साथ संरेखित करता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रयास समन्वित है। यह रणनीतिक प्रबंध प्रतिमान उपायों पर कम और लक्ष्यों व पहलों पर अधिक केन्द्रित है।
12. **मुद्दे आधारित रणनीतिक योजना**– यह वर्तमान में उन्मुख है और भविष्य में प्रोजेक्ट करता है। इसका उद्देश्य आपके संगठन के समक्ष आने वाली चुनौतियों की पहचान करना है।
13. **संरेखण सामरिक योजना प्रतिमान**– मुद्दा आधारित रणनीतिक योजना के समान, संरेखण प्रतिमान एक रणनीति विकसित करने के लिए पहले आंतरिक रूप से देखने पर केंद्रित है। यह प्रतिमान संगठन के आंतरिक संचालन को उसके रणनीतिक लक्ष्यों के साथ समन्वित करने के लिए डिजाइन किया गया है। यह विशेष रूप से तब उपयोगी होती है, जब किसी संगठन को अपने उद्देश्यों को परिष्कृत करने या प्रगति को अवरूद्ध करने वाली चुनौतियों या अक्षमताओं को दूर करने की आवश्यकता होती है।
14. **सामरिक योजना के जैविक प्रतिमान**– यह एक अपरंपरागत दृष्टिकोण ग्रहण करता है क्योंकि यह संगठन की दृष्टि और मूल्यों, बनाम योजनाओं और प्रक्रियाओं पर केन्द्रित है।
15. **वास्तविक समय सामरिक योजना**– जैविक प्रतिमान के समान, वास्तविक समय की रणनीतिक योजना एक तरल, गैर–परम्परागत प्रणाली है। यह मुख्य रूप से उन संगठनों द्वारा उपयोग किया जाता है जिन्हें अधिक प्रतिक्रियाशील होने और 'वास्तविक समय' में रणनीतिक योजना बनाने की आवश्यकता होती है।
16. **लक्ष्य आधारित रणनीतिक योजना**– यह योजना मुद्दे आधारित के विपरीत है। यह दृष्टिकोण भविष्य से वर्तमान तक पीछे की ओर कार्य करता है। यह संगठन के विजन से आरम्भ होता है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. नियोजन प्रबंधन का कौन सा कार्य है?

   (क) आरंभ का (ख) मध्य का

   (ग) अंत का (घ) आरंभ से अंत तक का

2. नियोजन को 'भविष्य पकड़ने हेतु बनाया गया पिंजरा' कहकर किसने परिभाषित किया है?

   (क) जार्ज आर. टेरी (ख) हेनरी फेयोल

   (ग) एलन (घ) एल. डर्विक

3.3 निर्णयन : निर्णय लेने में समय और मानवीय संबंध, कार्यक्रम और गैर कार्यक्रम निर्णय, निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान

प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण कार्य निर्णयन है। एक प्रबंधक को जाने या अनजाने में प्रतिदिन अनेक निर्णय लेने होते हैं। प्रबंधक को किसी समस्या का समाधान करते समय और भविष्य में उससे सतर्क रहने के लिए किसी निर्णय पर पहुंचने से पूर्व वैकल्पिक समाधानों को पर्याप्त महत्व देना पड़ता है। इस प्रकार निर्णयन का अर्थ वैकल्पिक समाधानों में से सर्वश्रेष्ठ का चुनाव करना है। प्रत्येक व्यावसायिक उपक्रम में, चाहे उसका आकार छोटा हो या बड़ा, प्रबंधकों को आरंभ से अंत तक अनेक निर्णय लेने पड़ते हैं। एक नया संगठन (चाहे वह सेना का हो या व्यवसाय का) मुख्यतः निर्णय पर आधारित होता है।

3.3.1 निर्णयन की अवधारणा एवं प्रकृति

एक प्रतिष्ठान में प्रबंधकों द्वारा किए जाने वाले सभी कार्य निर्णयन पर आधारित होते हैं, जैसे–उत्पादन की श्रेणी क्या होगी, किस स्तर का कच्चा माल प्रयोग किया जाएगा एवं कच्चा माल कहां से क्रय किया जाएगा, निर्माण की उत्तम विधि क्या होगी, श्रम–शक्ति की उपलब्धि कहां से और कब–कब होगी। अतः निर्णय लेना एक प्रक्रिया है, जिसमें किसी कार्य को करने के संभावित अनेक विकल्पों में से किसी एक सर्वश्रेष्ठ विकल्प को चुना जाता है।

सरल शब्दों में, किसी कार्य को करने के लिए अनेक उपलब्ध विकल्पों में से एक उपयुक्त विकल्प के चुनने के कार्य को निर्णय लेना कहते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि किसी भी एक कार्य को करने के लिए अनेक विकल्प, मार्ग, रास्ते या विधियां हो सकती हैं। अतः सर्वप्रथम इस बात की आवश्यकता है कि हम ज्ञात करें कि किसी भी कार्य को करने के लिए कितने संभव विकल्प हो सकते हैं और फिर उन विकल्पों में से अपने संगठन के लिए एक सर्वोत्तम विकल्प को चुनें। कौन–सा विकल्प

सर्वोत्तम होगा, इसका निर्णय करना संगठन की परिस्थिति, क्षमता तथा आवश्यकता पर निर्भर है।

टिप्पणी

निर्णयन की महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नलिखित हैं–

डी. ई. मैकफरलैंड के अनुसार, 'निर्णयन एक चयन क्रिया है, जिसके अंतर्गत एक अधिशासी, दी हुई परिस्थिति में क्या किया जाना चाहिए, के संबंध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है। निर्णय किसी व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है, जिसका चयन अनेक संभावित विकल्पों में से किया जाता है।'

जॉर्ज आर. टेरी के अनुसार, ''निर्णयन किसी मापदंड पर आधारित दो या अधिक संभावित विकल्पों में से किसी एक का चयन है।''

अर्नेस्ट डेल के अनुसार, ''प्रबंधकीय निर्णय वे होते हैं, जो सदैव सही प्रबंधन क्रियाओं, जैसे–नियोजन, संगठन, कर्मचारियों की भर्ती, निर्देशन, नियंत्रण, नव–प्रवर्तन और प्रतिनिधित्व में से किसी एक के दौरान लिए जाते हैं।''

कूट्ज तथा ओडोनेल के शब्दों में, ''निर्णय लेना किसी भी कार्य करने के लिए उपलब्ध तरीकों के विकल्पों में से एक का वास्तविक चुनाव करना है और यह नियोजन का केंद्र स्थल है। विवेकपूर्ण निर्णय का एक निश्चित लक्ष्य होता है, जैसे–कुछ सीमा तक लागत कम करना, समयानुसार उत्पादन करना, माल भेजने में शीघ्रता करना, अधिक माल के स्टॉक को कम करना, किन्हीं कार्यों के खतरों या कष्टों को दूर करना इत्यादि।''

आर. एस. डावर के अनुसार, ''निर्णयन को दो या दो से अधिक संभावित विकल्पों में से एक व्यावहारिक विकल्प को किसी आधार पर चयन करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। निर्णय लेने का अर्थ है 'समाप्त करना' या व्यावहारिक रूप में किसी निष्कर्ष कर पहुंचना।''

निर्णयन प्रक्रिया

निर्णयन प्रबंध विज्ञान का एक महत्वपूर्ण तत्व है। विभिन्न प्रबंध विशेषज्ञों ने निर्णयन के लिए एक तकनीक या विधि बताई है। हरवर्ट साइमन ने निर्णयन प्रक्रिया के निम्नलिखित तीन चरण बताए हैं–

1. **अन्वेषण**–इस चरण पर यह ज्ञात किया जाता है कि कब और कहां निर्णय की आवश्यकता है।
2. **डिजाइन**–इस चरण पर विभिन्न क्रियाविधियों का पता लगाया जाता है और उनका विकास किया जाता है।
3. **चुनाव**–इस चरण पर सर्वश्रेष्ठ क्रिया–विधि का चयन किया जाता है।

आर. एस. डावर ने निर्णय प्रक्रिया को पांच भागों में विभाजित किया है–

1. समस्या की व्याख्या करना।
2. समस्या से संबंधित तथ्यों को प्राप्त करना एवं उनका विश्लेषण करना।

टिप्पणी

3. वैकल्पिक समाधानों का विकास करना।
4. सर्वोत्तम समाधान का चयन करना या निर्णय लेना।
5. निर्णय को क्रियान्वित करना।

स्टनले वेंस ने निर्णयन प्रक्रिया को निम्न छः भागों में बांटा है–

1. **प्रत्यक्ष ज्ञान**–निर्णयन प्रक्रिया के इस कदम पर समस्या का आभास किया जाता है और एक राय उत्पन्न की जाती है।
2. **विचार या धारणा**–यह मस्तिष्क की वह शक्ति है, जो प्रत्यक्ष ज्ञान में से विचारों को विकसित करती है।
3. **विचार**–यह वह स्थिति है, जिसमें समस्या के सर्वोत्तम समाधान हेतु उपलब्ध विभिन्न विकल्पों पर विचार किया जाता है।
4. **चुनाव**–इस अवस्था में विभिन्न विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ का चयन किया जाता है अर्थात निर्णय लिया जाता है।
5. **अन्वेषण**–यह एक ऐसी अवस्था है, जिसमें समस्या के विभिन्न विकल्पों की खोज इस उद्देश्य के लिए की जाती है कि उनके लाभों एवं दोषों का अध्ययन किया जा सके।
6. **घोषणा**–इस चरण पर लिए गए निर्णय की घोषणा की जाती है ताकि संबंधित व्यक्तियों को निर्णय की जानकारी हो जाए।

निर्णयन की प्रकृति

निर्णयन आदेश, निर्देश, नीति अथवा नियम के रूप में व्यक्त किए जाते हैं। निर्णयन की प्रकृति में निम्नलिखित बातें सम्मिलित हैं–

1. **प्रबंधक का प्राथमिक कार्य**–प्रत्येक प्रबंधक को समय–समय पर आवश्यक निर्णय लेने पड़ते हैं। प्रबंध की सफलता व श्रेय बहुत कुछ सीमा तक प्रबंधकीय निर्णयों पर निर्भर करता है और इसे प्रबंधकीय कुशलता का मापदंड माना जाता है।
2. **वचनबद्धता**–निर्णय लेने वाला व्यक्ति किसी निर्णय से वचनबद्ध हो जाता है कि वह सभी कार्य अपने निर्णय के अनुसार ही करें। नियोजन के संपूर्ण कार्यों एवं अन्य व्यावसायिक क्रियाओं पर इस निर्णय का प्रभाव पड़ता है। एक प्रबंधक की कुशलता एवं ख्याति उसके द्वारा लिए गए निर्णयों की सफलता के आधार पर आंकी जाती है। अतः निर्णयकर्ता को निर्णय लेते समय बहुत सावधानी रखनी चाहिए और स्वयं के द्वारा लिए गए सभी निर्णयों के प्रति वचनबद्ध होना चाहिए।
3. **निरंतरता**–निर्णयन का कार्य किसी न किसी रूप में भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों से संबंधित होता है। एक समय कोई समस्या उत्पन्न होती है, दूसरे समय में उस समस्या के समाधान के लिए विचार–विमर्श किया जाता है अर्थात सर्वोत्तम विकल्प का निर्धारण किया जाता है और तीसरे समय में उसके आधार पर निर्णय लिया जाता है। अतः यह क्रम निरंतर चालू रहता है और एक निर्णय दूसरे को जन्म देता है।

टिप्पणी

4. **नया निर्णय लेना**–कभी–कभी पुराने निर्णय में सुधार करने और उसे कार्यरूप में परिणित करने के लिए नया निर्णय भी लेना पड़ता है। इस संदर्भ में यह कहना न्यायसंगत है कि नये निर्णय केवल सुधारात्मक रूप में ही लिए जाते हैं।
5. **निर्णयन नियोजन का अंग है**–इस संदर्भ में न्यूमैन तथा समर का यह कथन उल्लेखनीय है कि 'निर्णयन नियोजन का एक महत्वपूर्ण भाग है, जिसे हम नियोजन का पर्यायवाची भी कह सकते हैं।' अतः यही कारण है कि निर्णयन को नियोजन का महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।
6. **निर्णयन और निर्णय में अंतर है**–निर्णयन एक प्रक्रिया है, जिसके आधार पर निर्णय लिया जाता है और यह माना जाता है कि निर्णय इस प्रक्रिया का अंतिम परिणाम है।
7. **मानसिक एवं विवेकपूर्ण क्रिया**–निर्णयन की प्रक्रिया एक मानसिक एवं विवेकपूर्ण क्रिया है, जो केवल मनुष्य के द्वारा ही संपन्न की जा सकती है। यह आवश्यक नहीं है कि जो भी निर्णय लिया जाए वह शत–प्रतिशत सत्य हो लेकिन फिर भी तथ्यों पर आधारित सर्वोत्तम निर्णय होना चाहिए।

ड्रकर के अनुसार, निर्णय की प्रकृति निर्धारित करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है–

(1) निर्णय किस सीमा तक फलदायक या लाभदायक होगा।

(2) इसका दूसरे व्यवसायों एवं क्षेत्रों पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

(3) जो निर्णय लिया जा रहा है, वह सामयिक है अथवा कभी–कभी होने वाला है।

(4) इस निर्णय से संबंधित गुणात्मक घटकों की संख्या कितनी है।

3.3.2 निर्णयन के चरण में समय एवं मानवीय संबंध

निर्णय करने की प्रक्रिया में विविध चरण होते हैं, जिनमें समय एवं मानवीय संबंध की महत्वपूर्ण अवस्थिति होती है। इसे अग्रांकित बिंदुओं के तहत समझा जा सकता है–

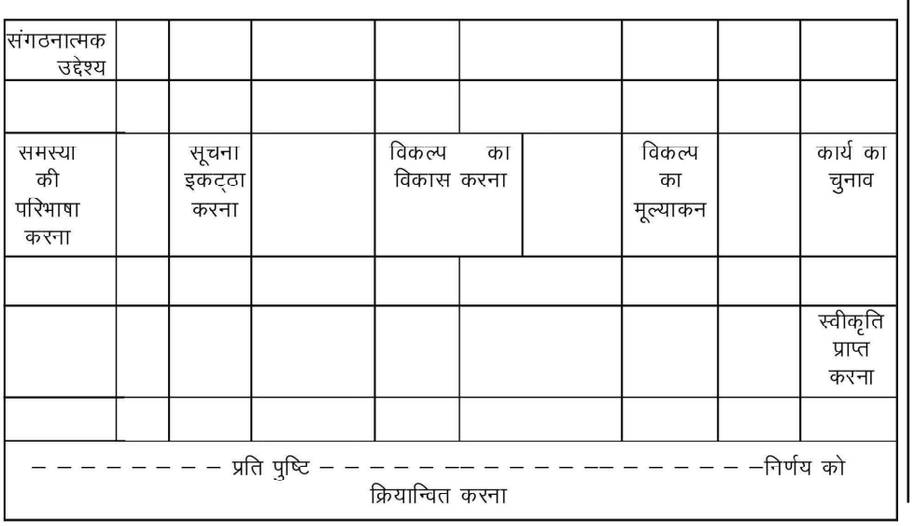

टिप्पणी

1. **समस्या का परिभाषीकरण**–कई बुरे निर्णय किए जाते हैं क्योंकि निर्णयकर्ता समस्या को अच्छी तरह से समझता नहीं है। अतः निर्णयकर्ता के लिए आवश्यक है कि निर्णय लेने से पहले उसे समस्या को प्राप्त करना और समझना चाहिए। समस्या की व्याख्या में पर्याप्त समय लगाना चाहिए और उसमें निहित मौलिक प्रश्नों और बाधाओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए। व्यावहारिक रूप से ऐसी कोई भी समस्या नहीं होती जिसका तुरंत निर्णय लिया जा सकता है। इसलिए समस्या को सही ढंग से परिभाषित करना आवश्यक है अन्यथा प्रबंधक गलत प्रश्न का उत्तर दे सकता है। समस्या की स्पष्ट परिभाषा बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि सही उत्तर सही प्रश्न के बारे में ही प्राप्त किया जा सकता है।

   समस्या की परिभाषा देने में प्रबंधक को बहुत से घटकों को ध्यान में रखना पड़ता है। व्यवसाय में स्थितीय घटक बहुत महत्वपूर्ण होता है। किसी दशा में कम कीमत के कारण लाभ कम हो सकता है, जबकि अन्य दशा में ऊंची लागत के कारण लाभ कम हो सकता है। इस प्रकार प्रबंधक को सही समस्या का पता लगाने के लिए स्थिति का व्यापक अवलोकन करना चाहिए।

2. **समस्या विश्लेषण एवं सूचना संग्रहण**–किसी समस्या के विश्लेषण में समस्या का वर्गीकरण करना सम्मिलित होता है। वर्गीकरण इसलिए आवश्यक है कि जिससे यह जाना जा सके कि निर्णय कौन करेगा और किससे परामर्श लेना है। बिना उचित वर्गीकरण के निर्णय की प्रभावशीलता खतरे में पड़ सकती है। समस्या का वर्गीकरण निम्न घटकों को ध्यान में रखकर करना चाहिए–

   (क) निर्णय समस्या की प्रकृति, अर्थात यह नैत्यिक है या बहुत ही महत्वपूर्ण।

   (ख) निर्णय का प्रभाव।

   (ग) निर्णय की अवधि।

   (घ) निर्णय का भविष्य।

   (ङ) निर्णय से संबंधित महत्वपूर्ण घटक।

   समस्या का वर्गीकरण करने के लिए बहुत–सी सूचनाओं की आवश्यकता पड़ती है। जब तक ये सूचनाएं प्राप्त नहीं हो जातीं, तब तक वर्गीकरण करना कठिन होता है। प्रबंधक को यह निर्णय करना पड़ता है कि किस प्रकार की सूचना कहां से प्राप्त होगी। तथ्यों के अभाव में विश्लेषण करना अंधेरे में छलांग लगाने के समान है। तथ्यों एवं आंकड़ों के संग्रह में निश्चित कुशलता की आवश्यकता होती है। यह महत्वपूर्ण है कि समस्याओं के विश्लेषण के लिए तथ्यों की आवश्यकता होती है, इसलिए वैकल्पिक उपायों के संबंध में पूर्ण सूचना प्राप्त होनी चाहिए। यदि सूचनाएं अच्छी हैं तो निर्णय भी अच्छा होगा।

3. **वैकल्पिक समाधान का विकास** – उद्देश्यों को निश्चित करने के बाद और नियोजन–परिसर को स्पष्ट करने के बाद किसी समस्या के लिए वैकल्पिक समाधानों का विकास करना पड़ता है। इसके बिना समाधान गलत भी हो सकता है। सभी समस्याओं के लिए आमतौर से विकल्प होता है। परंतु कभी–कभी

टिप्पणी

प्रबंधक एक समस्या के लिए एक ही विकल्प प्राप्त कर पाता है। ऐसी दशा में भी प्रबंधक को विकल्प ढूंढ़ना चाहिए। जब तक वह यह नहीं करता, तब तक वह यह नहीं समझ सकता कि उसका निर्णय ठीक है या नहीं। अतः यह स्पष्ट है कि उसे एक मुख्य नियोजन–सिद्धांत अपनाना चाहिए, जिसको विकल्प का सिद्धांत कहा जाता है। प्रत्येक समस्या में विकल्प विद्यमान होता है और प्रभावशाली नियोजन में विकल्पों का पता लगाया जाता है, जिससे वांछनीय उद्देश्य का चुनाव किया जा सके।

यह आवश्यक नहीं है कि वैकल्पिक समाधान में सदैव कोई क्रिया करने की आवश्यकता होती है। कोई क्रिया न करना भी एक निर्णय है। यह गर्भित है कि प्रत्येक संगठन में कार्य न करने का विकल्प भी ध्यान में रखा जाता है। उदाहरण के लिए, किसी संगठन में अनावश्यक पद हो सकता है और यह निर्णय लिया जा सकता है कि वह पद भरा नहीं जाएगा।

4. **सर्वोत्तम समाधान का चयन**–सर्वोत्तम विकल्प के चयन में उपलब्ध विकल्पों का मूल्यांकन किया जाता है। विकल्पों के मूल्यांकन के विभिन्न तरीके होते हैं। एक सामान्य तरीका अन्तःप्रज्ञा है, अर्थात ऐसे समाधान का चुनाव करना जो उस समय अच्छा है। इस प्रक्रिया में एक दोष यह है कि प्रबंधक की अन्तःप्रज्ञा कुछ परिस्थिति में गलत हो सकती है। दूसरा तरीका सभी विकल्पों की एक–दूसरे के साथ तुलना करना है। पीटर ड्रकर ने विभिन्न विकल्पों के परिणाम का मूल्यांकन करने में चार सिद्धांतों का निर्धारण किया है–

   (क) **जोखिम**–प्रबंधक को प्रत्येक विकल्प से होने वाले लाभ–हानि का मूल्यांकन करना चाहिए। ऐसी कोई भी स्थिति नहीं होती है, जिसमें जोखिम न हो इसलिए जोखिम नहीं, बल्कि किसी स्थिति में जोखिम की गहनता माप करनी चाहिए।

   (ख) **प्रपत्र की मितव्ययिता**–एक अच्छा प्रबंधक वह है, जो परिणाम की प्राप्ति के लिए साधनों को कम प्रयत्न और अव्यवस्था से प्राप्त करने में सफल होता है।

   (ग) **समय**–सर्वोत्तम समाधान के चुनाव में विशेष स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। यदि स्थिति में तीव्रता की आवश्यकता है तो चयन से संगठन पर तुरंत प्रभाव पड़ना चाहिए।

   (घ) **साधनों की सीमितता**–निर्णय करने की प्रक्रिया में सीमाकारक गुणक का भी प्रभाव पड़ता है। विकल्प में से चुनाव करते समय उन घटकों पर विचार किया जाता है, जो संबंधित निर्णय के लिए महत्वपूर्ण या सीमाकारक हैं। निर्णय के प्रत्येक क्षेत्र में कुछ घटक ऐसे होते हैं, जो उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं।

   सीमाकारक गुणक की खोज विकल्प में से चयन में निहित होता है। साधारणतया प्रत्येक समस्या का गवेषण करना संभव नहीं है। इसी प्रकार सीमाकारक गुणक की खोज कर लेना भी संभव नहीं होता इसलिए प्रबंधक

टिप्पणी

को यह निर्णय करना चाहिए कि किस क्षेत्र में और किस प्रकार के शोध की आवश्यकता होती है। चुने हुए कार्यपथ के लिए एक निश्चित योग्यता स्तर की आवश्यकता होती है, जो संगठन में उपलब्ध नहीं भी हो सकती है। अतः इसके लिए संगठन में व्यक्तियों को प्रशिक्षित करना चाहिए या कुशल कर्मचारियों को भाड़े पर रखना चाहिए।

5. **निर्णय का क्रियान्वयन**–निर्णय का तब तक कोई महत्व नहीं होता, जब तक कि उसको क्रियान्वित न किया जाए। प्रबंधक का निर्णय इस बात से संबंधित है कि अन्य लोगों को क्या करना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक है कि लोग निर्णय के प्रति निष्ठावान् हों। निर्णय को लोगों पर थोपना कठिन होता है इसलिए अच्छे निर्णय के संबंध में भी लोगों की इच्छाओं को ध्यान में रखा जाता है।

   निर्णय को प्रभावशाली बनाने के लिए यह आवश्यक है कि संबंधित व्यक्ति को यह समझना चाहिए कि निर्णय में क्या निहित है, उनसे क्या आशा की जाती है और उचित रूप से दूसरों से क्या आशा की जा सकती है। इसको पूरा करने के लिए, लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए धीमे एवं स्थिर सिद्धांत का पालन होना चाहिए। दूसरा सिद्धांत यह है कि प्रभावशाली संचार होना चाहिए। इस सिद्धांत का आशय यह है कि संबंधित व्यक्तियों को महत्वपूर्ण विचलन के बारे में बताना चाहिए, परंतु यह स्पष्ट शब्दों में होना चाहिए।

3.3.3 निर्णयन के स्वरूप : कार्यक्रम और गैर–कार्यक्रम निर्णय

निर्णयन के स्वरूपों को इस प्रकार समझा जा सकता है–

- **कार्यक्रमिक एवं गैर–कार्यक्रमिक निर्णय**–कार्यक्रमिक निर्णय वे होते हैं, जिन्हें लेने के लिए एक नियत एवं सुव्यवस्थित प्रणाली निर्धारित कर ली जाती है। ये नैत्यिक एवं पुनरावृत्ति प्रकृति के होते हैं।

  ऐसे निर्णयों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–(क) बीमार कर्मचारियों को नियमानुसार अवकाश व वेतन देना, इत्यादि (ख) गर्भवती महिला कर्मचारी को नियमानुसार अवकाश व अन्य सुविधाएं प्रदान करना, (ग) कार्यालयी सामग्री के लिए पुनः आदेश देना, (घ) आकस्मिक अवकाश पर जाने वाले कर्मचारी की छुट्टी नियमानुसार करना।

  गैर–कार्यक्रमिक निर्णय वे होते हैं, जो अनुपम, अनोखे या बेजोड़ प्रकृति के होते हैं। ऐसे निर्णय लेने के लिए कोई एक निश्चित प्रणाली नहीं होती, क्योंकि इनसे संबंधित समस्या या तो पहले कभी उत्पन्न ही नहीं हुई या जिसका अनुमान ही नहीं लगाया गया। अतः ऐसी समस्याओं का समाधान परंपरागत विधियों के आधार पर ही किया जाता है।

  इनके उदाहरण इस प्रकार हैं–(क) कुछ अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण कार्य बंद करना, (ख) विदेशों में सामान निर्यात करना या न करना, (ग) विदेशों में शाखा खोलना या न खोलना, इत्यादि।

टिप्पणी

- **व्यक्तिगत एवं सामूहिक निर्णय**– यह वर्गीकरण इस बात पर आधारित है कि निर्णय किसके द्वारा लिए जाते हैं। ऐसे निर्णय जो केवल एक व्यक्ति या एक अधिकारी द्वारा लिए जाएं एवं जिनमें अन्य अधीनस्थों को शामिल न किया जाए 'व्यक्तिगत निर्णय' कहालाएंगे। ऐसे निर्णयों में अधिकारी अपने अधीनस्थों को सम्मिलित नहीं करता। प्राचीन काल में जब व्यापार छोटे पैमाने पर किया जाता था और व्यापार में संचालन भी तुलनात्मक रूप में सरल था, तब अधिकांश निर्णय संबंधित व्यक्ति द्वारा ही लिए जाते थे। वर्तमान में भी छोटे आकार की संस्थाओं में व्यक्तिगत निर्णय ही अधिक लिए जाते हैं।

  ज्यों–ज्यों व्यवसाय के आकार में वृद्धि हुई और व्यावसायिक जटिलताएं बढ़ती गईं, त्यों–त्यों यह अनुभव किया जाने लगा कि एक उपक्रम के सभी महत्वपूर्ण निर्णय केवल एक व्यक्ति द्वारा नहीं लिए जाने चाहिए। जिन निर्णयों में अधीनस्थों या संपूर्ण समूह को शामिल किया जाए उन्हें 'समूह निर्णय' कहेंगे। समूह निर्णय एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा एक समूह जिसमें अनेक व्यक्ति होते हैं, मिलकर किसी निर्णय पर पहुंचते हैं।

- **नीति एवं संचालन संबंधी निर्णय**–प्रबंध के विभिन्न स्तरों पर लिए जाने वाले निर्णयों के दृष्टिकोण से निर्णय को नीति एवं संचालन संबंधी निर्णयों में विभक्त किया जा सकता है। जो निर्णय उच्च प्रबंध द्वारा कंपनी की आधारभूत नीतियों के संबंध में लिए जाते हैं और जो संपूर्ण संस्था को प्रभावित करते हैं उन्हें 'नीति विषयक' निर्णय कहते हैं, जैसे (क) लाभांश की दर निर्धारित करना (ख) कर्मचारियों को प्रशिक्षण प्रदान करना, (ग) कर्मचारियों को वित्तीय व अवित्तीय प्रेरणाएं प्रदान करना आदि।

  वे निर्णय जो निम्न स्तरीय प्रबंधकों द्वारा नीति संबंधी निर्णयों के क्रियान्वयन हेतु लिए जाते हैं, संचालन संबंधी निर्णय कहलाते हैं। उदाहरणार्थ, कार्य का विभाजन करना, अधिकारों का प्रत्यायोजन करना आदि। इस प्रकार संचालन संबंधी निर्णय सामान्यतः ऐसे निर्णय लेने वाले व्यक्तियों के स्वयं के कार्य और व्यवहार को ही प्रभावित करते हैं, जबकि नीति संबंधी निर्णय अधीनस्थों या सहायकों के कार्य एवं व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

- **संगठनात्मक एवं व्यक्तिगत निर्णय**–निर्णयों को संगठनात्मक एवं व्यक्तिगत दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। संगठनात्मक निर्णय वे होते हैं, जो एक अधिशासी आधिकारिक स्थिति में लेता है और जिन्हें अन्य व्यक्तियों को प्रत्यायोजित किया जा सकता है। ये निर्णय आवश्यक–सामग्री के क्रय–पद्धति, विक्रय–पद्धति, आदि के संबंध में हो सकते हैं।

  व्यक्तिगत निर्णय वे होते हैं, जो एक अधिकारी द्वारा एक संगठन के अधिकारी की स्थिति में न लिए जाकर अपनी व्यक्तिगत स्थिति में लिए जाते हैं और जिन्हें अन्य व्यक्तियों को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता। अतः संगठनात्मक

टिप्पणी

निर्णय संपूर्ण संगठन के हित के लिए, लिए जाते हैं, जबकि व्यक्तिगत निर्णय व्यक्ति के स्वयं के लिए, लिए जाते हैं।

- **नैत्यिक एवं आधारभूत निर्णय**–जब सामान्य मामलों के विषय में निर्णय लिए जाते हैं एवं जिनके विषय में अपेक्षाकृत कम सोचने विचारने की आवश्यकता पड़ती है, इन्हें 'नैत्यिक' अथवा 'सामान्य' निर्णय कहते हैं। ऐसे निर्णय व्यवसाय की सामान्य प्रकृति में बार–बार लिए जाते हैं। इनके प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं–(क) पत्र–व्यवहार करना, (ख) कागज–पेंसिल का क्रय करना, इत्यादि।

  आधारभूत निर्णय उपक्रम के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं। अतः ऐसे निर्णयों के गहन अध्ययन, पर्याप्त विवेक एवं दूरदृष्टि आदि की आवश्यकता होती है। यदि ऐसे निर्णयों को लेने में तनिक भी असावधानी हो जाए तो घातक परिणामों का सामना करना पड़ता है। ऐसे निर्णयों के लिए बौद्धिक प्रक्रिया द्वारा नवीन सिद्धांतों के प्रतिपादन की आवश्यकता होती है। मैकफरलैंड के अनुसार, ''आधारभूत निर्णयों में दीर्घकालीन लक्ष्य निर्धारण, दीर्घकालीन विनियोजन एवं महत्व की एक डिग्री, जैसे–थोड़ी–सी गलती होने पर समस्त व्यवसाय की सफलता का खतरे में पड़ जाना आदि सम्मिलित होते हैं।" आधारभूत निर्णयों की प्रकृति सामान्यतः दीर्घकालीन होती है। इन निर्णयों में संयंत्र अभिन्यास, उत्पाद की निर्माण प्रक्रिया में परिवर्तन और वितरण के माध्यमों का चयन आदि प्रमुख हैं।

अन्य प्रकार के निर्णय

उपरोक्त महत्वपूर्ण प्रकारों के अतिरिक्त निर्णयों को निम्नलिखित प्रकारों में भी वर्गीकृत किया गया है–

- जो निर्णय पूर्व निर्धारित योजना पर आधारित होते हैं, उन्हें 'नियोजित निर्णय' कहते हैं। ऐसे निर्णय एक व्यवस्थित व वैज्ञानिक विधि के अनुसार लिए जाते हैं तथा वे ठोस तथ्यों पर आधारित होते हैं।
- अनियोजित निर्णय से आशय उस निर्णय से है, जो विशिष्ट परिस्थिति में या अमुक अवसर पर लिया गया हो एवं जिसका आधार कोई पूर्व–निर्धारित योजना न हो।
- नीति निर्णय भावी लक्ष्य एवं सामान्य क्रियाविधि को निर्धारित करते हैं, जैसे–संस्था के पूंजी के कलेवर के संबंध में निर्णय, संगठन संरचना संबंधी निर्णय, विपणन नीति संबंधी निर्णय आदि।
- प्रशासकीय निर्णय वे निर्णय होते हैं, जो नीति निर्णय से कम महत्व के होते हैं और मध्य स्तरीय प्रबंधकों या संचालक मंडल के निम्न स्तर के अधिकारियों द्वारा लिए जाते हैं।

टिप्पणी

- ऐसे निर्णय, जो कार्य करने वाले कर्मचारियों द्वारा कार्य करते समय ही लिए जाते हैं, कार्यकारी निर्णय कहलाते हैं।
- ऐसे निर्णय जो उच्च अधिकारियों द्वारा लिए जाते हैं और संपूर्ण उपक्रम से संबंधित होते हैं, उपक्रम के निर्णय कहलाते हैं।
- अंतर–विभागीय निर्णय वे होते हैं, जो विभिन्न विभागों के अध्यक्षों द्वारा पर्याप्त विचार–विमर्श के पश्चात मिलकर लिए जाते हैं।
- किसी विभागाध्यक्ष द्वारा अपने अधिकारों की सीमा के भीतर अपने विभाग के कार्यकलापों के संबंध में लिए गए निर्णय, विभागीय निर्णय कहलाते हैं।

3.3.4 निर्णयन के उपागम एवं महत्व

निर्णय लेना इतना सरल कार्य नहीं है, जितना कि प्रायः समझा जाता है। वर्तमान जटिल एवं परिवर्तनशील परिस्थितियों ने इस कार्य को और जटिल बना दिया है। जो निर्णय लिए जाते हैं, वे सही एवं उचित होने चाहिए।

1. **समय का उपागम**–व्यवसाय में समय को धन माना जाता है अतः यह आवश्यक है कि प्रबंधक समस्त कार्य, जैसे–नियोजन, संगठन, स्टाफिंग, संचालन, नियंत्रण आदि, समय पर किए जाने चाहिए। इस प्रकार यदि किसी–किसी साधन विशेष की पूर्ति उपयुक्त समय पर नहीं की जाती तो उत्पादन का कार्य रुक सकता है। इसके साथ ही सभी साधनों का पूर्व संग्रह करना भी अलाभप्रद हो सकता है। ऐसा करने से केवल मुद्रा ही नहीं फंसती वरन् विविध साधनों को रखने की भी समस्या पैदा होती है। अतः निर्णयों में समयानुकूलता का सिद्धांत इस बात की चेतावनी देता है कि सही समय पर संस्था के पास सही अनुपात व मात्रा में सभी साधन उपलब्ध होने चाहिए।
2. **सीमित घटक का उपागम**–इस सिद्धांत के अनुसार, कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जिनका प्रभाव किसी समस्या पर सबसे अधिक पड़ता है। हमें किसी समस्या का हल करने के लिए उचित विकल्प का निर्णय लेने से पूर्व इन्हीं घटकों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। अन्यथा ये निर्णय अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में बाधक तत्व प्रमाणित हो सकते हैं।
3. **अनुपात का उपागम**–उत्पादन के साधन सीमित होते हैं। यह सिद्धांत इस बात की ओर संकेत करता है कि सीमित साधनों से अधिकतम परिणामों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध साधनों का आनुपातिक समायोजन किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उत्पादन के विभिन्न उपलब्ध साधनों का समायोजन इस अनुपात में करना चाहिए जिससे अधिकतम परिणामों की प्राप्ति हो सके। इस सिद्धांत के अनुकरण से संस्था के समस्त उपलब्ध साधनों में एक श्रेष्ठतम संयोजन की स्थापना की जा सकती है, साधनों के दुरुपयोग को रोका जा सकता है तथा

उत्पादकता एवं लाभदायकता को अधिकतम किया जा सकता है। यह सिद्धांत व्यावसायिक निर्णयों के क्षेत्र में सर्वोत्तम विकल्प के चयन में मार्गदर्शन का कार्य करता है।

टिप्पणी

4. **उचित व्यवहार का उपागम**–इस सिद्धांत का स्पष्ट आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति पहले मानव और उसके बाद कर्मचारी है। मानव होने के नाते वह सामान्यतः उचित प्रकार से व्यवहार करता है तथा यह आशा भी करता है कि व्यक्ति भी उसके साथ मानवता का व्यवहार करेंगे। यद्यपि मन चंचल होता है एवं मनोदशाएं भी परिवर्तनशील होती हैं, किंतु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य के सामान्य आचरण एवं उसकी क्रियाओं का आसानी से पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी योग्य व्यक्ति का पदावनयन कर दिया जाए, तो क्या प्रतिक्रिया होगी। यदि किसी गर्भवती महिला कर्मचारी का अवकाश स्वीकार न किया जाए तो उस पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा आदि प्रबंधकों को निर्णय लेते समय मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाकर समस्या का समाधान इस प्रकार करना चाहिए, जिससे कि उसके द्वारा लिए गए निर्णय की कोई भयंकर प्रतिक्रिया न हो अतः उसके समस्त उचित व्यवहार के सिद्धांत पर आधारित होने चाहिए।

5. **गतिशीलता का उपागम**–'परिवर्तन' प्रकृति का नियम है, आर्थिक, सामाजिक राजनैतिक सभी क्षेत्रों में निरंतर परिवर्तन होते आए हैं और होते रहेंगे। फलतः एक विशेष परिस्थिति एवं काल में लिया गया निर्णय, सदैव उसी रूप में लागू नहीं हो सकता। एक उपक्रम के लक्ष्यों में परिवर्तन, कर्मचारियों की मनोवृत्ति, आंतरिक परिस्थितियों एवं श्रम–संघों की मनोवृत्ति में परिवर्तन, राजकीय नीति में परिवर्तन, बाह्य परिस्थितियों में सम्मिलित होता है। गतिशीलता का सिद्धांत प्रबंधकों का ध्यान उन परिवर्तनों की ओर आकर्षित करता है तथा यह चेतावनी भी देता है कि उनके अनुरूप निर्णयों को समायोजित करते रहना चाहिए जिससे कि संस्था की भावी विकास योजनाएं विपरीत रूप से प्रभावित न हों।

6. **व्यक्तिगत हित का उपागम**–इस सिद्धांत के अनुसार, निर्णय लेते समय हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निर्णय से कर्मचारियों के व्यक्तिगत स्वार्थ, उद्देश्य या हितों पर इसका बुरा प्रभाव न पड़े। प्रत्येक व्यक्ति के उद्देश्यों को आर्थिक एवं अनार्थिक दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। कुछ व्यक्ति आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति को सर्वाधिक महत्व देते हैं तो कुछ अनार्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति को। व्यक्ति इन दोनों उद्देश्यों में से सर्वप्रथम उस उद्देश्य की पूर्ति चाहता है, जिससे उसे अधिकतम संतुष्टि प्राप्त होती है। इस बात को ध्यान में रखकर ही निर्णय लिए जाने चाहिए।

निर्णयन का महत्व

निर्णय लेना सभी प्रबंधकीय कार्यों में लागू होता है और यह व्यवसाय के सभी क्षेत्रों को सम्मिलित करता है। प्रबंध को तब कई निर्णय लेने पड़ते हैं, जब वह नियोजन, संगठन,

कर्मचारी वर्ग, निदेश एवं नियंत्रण संबंधी कार्य करता है। निर्णय–क्रिया में विचार करना और कार्य करने के पहले निर्णय लेना होता है। वास्तव में उद्देश्यों, नीतियों, कार्यक्रम, विधियों इत्यादि का निर्धारण निर्णय–प्रक्रिया है।

टिप्पणी

पीटर ड्रकर का कहना है कि प्रबंधक जो भी करता है, वह निर्णय लेने कि क्रिया द्वारा करता है। निर्णय करना प्रबंध–प्रक्रिया में निहित है। यह प्रबंधक का एक प्रमुख कार्य है। प्रबंध को कार्य करने से पहले निर्णय लेना पड़ता है। प्रत्येक प्रबंधक निर्णय–क्रिया में व्यस्त है, अर्थात यह निश्चित किया जाता है कि क्या करना है? किस प्रकार करना है? किसे करना है? और कब करना है? कुछ निर्णय दैनिक प्रकृति के होते हैं। अन्य निर्णय महत्वपूर्ण प्रकृति के होते हैं, जिनमें अत्यधिक वैज्ञानिक विश्लेषण की आवश्यकता होती है। जो भी स्थिति हो, यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि प्रबंध सदैव निर्णय लेने की एक प्रक्रिया है।

किसी उपक्रम के प्रबंध को प्रत्येक दिन विभिन्न निर्णय लेना पड़ता है। उदाहरण के लिए, एक कपड़ा मिल, कमीज के कपड़े का उत्पादन का निर्णय कर सकती है परंतु इस निर्णय के साथ अन्य निर्णय संबंधित हैं, जैसे–कपड़े का डिजाइन, आकार, वजन, रंग क्या होगा? किन पदार्थों का प्रयोग करना है? कहां से कब पदार्थ खरीदना है? उत्पादन–प्रक्रिया कब प्रारंभ होगी? अंतिम उत्पाद को किस प्रकार स्टोर किया जाएगा? विक्रय–कीमत क्या होगी? ये सभी निर्णय कमीज के कपड़े के उत्पादन के निर्णय से संबंधित हैं। उपर्युक्त निर्णय के अतिरिक्त, प्रबंध अपने निर्णय में समस्याओं का सामना कर सकता है और उसके बाद ही उपभोक्ता को काल के विपणन किया जा सकता है।

निर्णय करना प्रबंध का एक व्यापक कार्य है। यह कार्य प्रबंधकों द्वारा सभी स्तरों पर किया जाता है, यद्यपि निर्णय की प्रकृति विभिन्न स्तरों पर विभिन्न होती है। मैकडोनाल्ड के अनुसार, ''व्यावसायिक कार्यकारी पेशे के रूप में एक निर्णयकर्ता होता है। अनिश्चितता उसका शत्रु है, उसको दूर करना ही उसका लक्ष्य है। फल भाग्य या बुद्धिमत्ता का परिणाम हो सकता है। निर्णय का समय कार्यकारी के जीवन में एक रचनात्मक घटना है। प्रबंध आवश्यक रूप से एक निर्णय करने की प्रक्रिया है।''

3.3.5 निर्णय लेने के राष्ट्रीय प्रतिमान

निर्णय लेने के मुख्य तीन प्रतिमान हैं–

1. लिंडब्लॉम का वृद्धिशील प्रतिमान (Incremental Model of Lindblom)
2. एत्जीयोनी का मिश्रित स्कैनिंग प्रतिमान (Mixed Scanning Model)
3. ड्रोर का दृष्टतम प्रतिमान (Dror's Optimal Model of Decision-Making)

1. **लिंडब्लॉम का वृद्धिशील प्रतिमान (Incremental Model of Lindblom)**– 'दि साइंस ऑफ मॉडलिंग थ्रू' (1959) नामक लेख में चार्ल्स लिंडब्लॉम ने 'निर्णय का वृद्धिशील प्रतिमान' दिया जो साइमन के 'तार्किक प्रतिमान' का बिल्कुल

विपरीत है। इसे 'शाखा–तकनीक' 'क्रमिक सीमित' तुलनाओं का प्रतिमान 'सीढ़ी दर सीढ़ी निर्णय निर्माण' और 'निर्णय निर्माण में सुधार सिद्धान्त' भी कहते हैं।

टिप्पणी

इस प्रतिमान की मान्यताएं हैं–

- निर्णय निर्माण में सिद्धान्त और व्यवहार में अंतर होता है।
- निर्णय में सीमित तार्किकता के स्थान पर वृद्धिशील तार्किकता पायी जाती है।
- प्रशासनिक निर्णयों की नियम सीमाएं होती हैं जो धन, समय, सूचना, राजनीति जैसे अनेक मुद्दों और कारकों से उत्पन्न होती है।
- प्रशासकगण भावी निर्णय लेने के लिए पुरानी गतिविधियों, अनुभव आदि का उपयोग करते हैं।
- निर्णयकर्ता वर्तमान कार्यों, नीतियों को ही सुधारकर, उसमें जोड़कर नयी नीतियों के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार लिंडब्लॉम के अनुसार, निर्णय मात्र वृद्धिशीलता है।

लिंडब्लॉम समीकरण

निर्णय = पुरानी या वर्तमान + नीति सुधार (नया तत्व जोड़ना या घटाना)

इस प्रकार यह यथास्थितिवादी के स्थान पर प्रगतिशीलता का पोषक है।

वास्तविक निर्णय निर्माण

लिंडब्लॉम ने वास्तविक निर्णय निर्माण की व्याख्या के लिए दो अवधारणाओं का प्रयोग किया है–

- सीमांतीय वृद्धिशीलता (Marginal Inctementalism)
- पक्षधर परस्पर व्यवस्थापन (Partisan Mutual Adjustment)

2. **एत्जीयोनी का मिश्रित स्कैनिंग प्रतिमान (Mixed Scanning Model)**– एत्जीयोनी ने साइमन के तार्किक व्यवहारिक प्रतिमान और लिंडब्लॉम के 'वृद्धिशील' प्रतिमान दोनों को समन्वित कर ऐसा प्रतिमान दिया है जिसमें दोनों प्रतिमानों की विशेषताओं को समन्वित करने तथा दोनों की कमियों को दूर करने का प्रयास दिखायी देता है। इसलिए एत्जीयोनी ने अपने लेख 'मिक्सड स्केनिंग : थर्ड एप्रोच टू डिसिजन मेकिंग' (1967) में अपने प्रतिमान को मिक्सड स्कैनिंग प्रतिमान कहा है। एत्जीयोनी ने साइमन प्रतिमान की उन्हीं कमियों को बताया है जो लिंडब्लॉम ने बताई। लेकिन एत्जीयोनी ने लिंडब्लॉम प्रतिमान की भी दो कमियां बताई हैं जो इस प्रकार हैं–

- यह सामाजिक रचनात्मकता को हतोत्साहित करता है और इस प्रकार यह अपने तरीके में पक्षपाती है।
- यह मूलभूत निर्णयों पर लागू नहीं हो सकता है।

एत्जीयोनी का मिक्सड स्कैनिंग प्रतिमान तार्किकता, व्यावहारिकता, परिस्थिति, मूल्य तथा तथ्य जैसे तत्वों को समाहित करता है।

3. ड्रोर का दृष्टतम प्रतिमान (Dror's Optimal Model of Decision Making)

'पब्लिक पालिसी मेकिंग–री एक्जामिड' नामक अपनी पुस्तक में प्रसिद्ध नीति विश्लेषक जकोल ड्रोर ने यह निर्णय प्रतिमान प्रस्तुत किया। इसके दो मुख्य तत्व हैं–

टिप्पणी

- नीति निर्माण
- नीति विश्लेषण

ड्रोर के अनुसार प्रत्येक नीति का निर्माण ही निर्णय है। नीति निर्माण का एक भाग नीति विश्लेषण होता है।

ड्रोर के दृष्टतम प्रतिमान की विशेषताएं

ड्रोर के अनुसार यह आर्थिक आधार पर तार्किक और तार्किकेतर दोनों प्रतिमानों का मिश्रण है।

इसकी पांच मुख्य विशेषताएं हैं :

- इसमें तार्किकता और अति तार्किकता दोनों तत्वों को स्थान दिया जाता है।
- यह गुणात्मक है, मात्रात्मक नहीं। अर्थात् इसमें मात्रा के स्थान पर गुणों पर बल दिया जाता है।
- यह आर्थिक तर्क के लिए आधारभूत तर्क है। अर्थात् इसमें आधारभूत तार्किकता से आर्थिक तार्किकता की ओर प्रेरणा है।
- इसका सम्बन्ध पश्चनीति निर्माण (Mata Policy Making) है। अर्थात् वास्तविक नीति निर्माण के अतिरिक्त अन्य नीतियों पर विचार करता है।
- इसमें प्रतिपुष्टि (Feedback) की व्यवस्था है। नीतियों पर प्रतिक्रिया जानकर उनमें तदनुरूप संशोधन किया जाता है।

ड्रोर ने अपने प्रतिमान के तीन चरण बताये हैं–

(i) पश्च नीति निर्माण (Meta Policy Making)

(ii) नीति निर्माण (Policy Making)

(iii) उत्तर नीति निर्माण (Post Policy Making)

ड्रोर का संपूर्ण दर्शन 'नीति' पर केन्द्रित है। वे नीति को श्रेष्ठ स्तर पर देखना चाहते हैं और इसलिए 'नीति–विज्ञान' के तीव्र विकास की आवश्यकता प्रतिपादित करते हैं। ड्रोर के अनुसार समाज गंभीर समस्याओं से ग्रसित है, उनका समाधान नीति विज्ञान में ही निहित है।

ड्रोर के अनुसार नीति विज्ञान वह विषय है जो नीति ज्ञान की खोज करता है तथा नीति ज्ञान के अन्तर्गत दो प्रमुख तत्व आते हैं :

- नीति मुद्दे का ज्ञान अर्थात् नीति विशेष से सम्बन्धित ज्ञान।
- नीति निर्माण का ज्ञान अर्थात् नीति निर्माण की संपूर्ण व्यवस्था की जानकारी।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

3. निर्णयन किसी मापदंड पर आधारित दो या अधिक संभावित विकल्पों में से किसी एक का चयन है– यह परिभाषा किसकी है?

   (क) अर्नेस्ट डेल (ख) जॉर्ज. आर. टेरी

   (ग) स्टनले बेंस (घ) कूट्ज तथा ओडोनेल

4. इनमें से क्या हरवर्ट साइमन द्वारा बताई गई नियोजन प्रक्रिया में शामिल नहीं है?

   (क) अन्वेषण (ख) घोषणा

   (ग) डिजाइन (घ) चुनाव

3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ग)
3. (ख)
4. (ख)

3.5 सारांश

नियोजन का अर्थ पहले से ही यह तय करना है कि क्या करना है, कैसे करना है, कब करना है और किसको करना है। नियोजन 'हम जहां हैं' से लेकर 'हमें जहां जाना हैं' के बीच की दूरी को पाटता है। यह उन बातों को संभव बनाता है जो अन्यथा नहीं होती हैं।

पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध साधनों की सहायता से भावी कार्यक्रम के संबंध में किए जाने वाले कार्यों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चुनाव करने का निर्णय होना ही नियोजन है।

नियोजन के अंतर्गत यह निर्णय लिया जाता है कि क्या करना है? कैसे करना है ? कब करना है ? और किसने करना है? हम कहां हैं और भविष्य में कहां पहुंचना चाहते हैं? यह सशक्त रूप से संकेत करता है कि केवल पूर्व निर्धारित बातों को ही नहीं अपनाना है बल्कि समझदारी के साथ अपने कार्य के अनुकूल परिवर्तन भी करना है । टेलर का कहना था कि प्रत्येक संस्था में एक पृथक योजना विभाग होना चाहिए और इस योजना विभाग को उपर्युक्त चारों प्रश्नों के उत्तर खोजने चाहिए। क्या किया जाए, इस संबध में उच्च प्रबंधकों तथा इंजीनियरिंग विभाग से सलाह अवश्य लेनी चाहिए क्योंकि जब उच्च प्रबंध से यह निर्देश मिल जाए कि क्या, कैसे और कितनी संख्या में उत्पादन किया जाना है और इस माल की सुपुर्दगी कब देना आवश्यक है, तब ही योजना विभाग आवश्यक योजना बनाएगा। एक वैज्ञानिक नियोजन में बहुत सी बातों

को ध्यान में रखना पड़ता है। टेलर का कहना था कि नियोजन बहुत सावधानी से और बहुत स्पष्ट विधि से किया जाना चाहिए।

किसी कार्य को करने के लिए अनेक उपलब्ध विकल्पों में से एक उपयुक्त विकल्प के चुनने के कार्य को निर्णय लेना कहते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि किसी भी एक कार्य को करने के लिए अनेक विकल्प, मार्ग, रास्ते या विधियां हो सकती हैं।

टिप्पणी

निर्णय करना प्रबंध का एक व्यापक कार्य है। यह कार्य प्रबंधकों द्वारा सभी स्तरों पर किया जाता है, यद्यपि निर्णय की प्रकृति विभिन्न स्तरों पर विभिन्न होती है। मैकडोनाल्ड के अनुसार, ''व्यावसायिक कार्यकारी पेशे के रूप में एक निर्णयकर्ता होता है। अनिश्चितता उसका शत्रु है, उसको दूर करना ही उसका लक्ष्य है। फल भाग्य या बुद्धिमत्ता का परिणाम हो सकता है। निर्णय का समय कार्यकारी के जीवन में एक रचनात्मक घटना है। प्रबंध आवश्यक रूप से एक निर्णय करने की प्रक्रिया है।''

3.6 मुख्य शब्दावली

- **सुपुर्दगी** : सौंपना
- **प्रेषण** : भेजना
- **डिजाइन** : प्रारूप
- **लोच** : लचीलापन
- **जोखिमों** : खतरों
- **दीर्घकालिक** : लंबे समय से संबंधित
- **गैर–कार्यक्रमिक** : जो कार्यक्रम में शामिल नहीं हो।

3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. नियोजन से क्या आशय है?
2. नियोजन लक्ष्य प्राप्ति में सहायक कैसे बनता है?
3. अल्पकालीन योजनाएं क्या होती हैं?
4. नियोजन किसे कहते हैं?
5. नीति एवं संचालन संबंधी निर्णय का क्या तात्पर्य है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. नियोजन की अवधारणा स्पष्ट करते हुए विविध विद्वानों द्वारा दी गई इसकी परिभाषाओं का उल्लेख कीजिए।
2. नियोजन की तकनीक एवं रणनीतियों का रेखांकन कीजिए।
3. नियोजन परिचालन प्रतिमानों की विवेचना कीजिए।

4. निर्णयन की अवधारणा एवं प्रकृति पर प्रकाश डालिए।
5. निर्णयन के राष्ट्रीय प्रतिमान क्या हैं? समझाकर लिखिए।

टिप्पणी

3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- *Managing for Value*, Hamilton, PHI
- *Management*, Stoner, PHI
- *Management Concepts and Practice*, Gupta, C.B. Sultan.
- *A Guide to Maintenance Management,* Roy, B.K., Jaico
- *Management Control Systems*, Ghosh , PHI
- *Compensation Management in Knowledge*, Henderson, Person
- *Knowledge Management*, Awad, Pearson
- *Knowledge for Competitive*, Chaudhary, Harish Excel.
- *Essentials of Management*, Dubrin, Andrew, Thomson
- *Brand Management Text and Case*, Moorthi, Vikas
- *Management: Principles & Practice*, Prag, Diwan, Excel.
- *Principles and Practice of Management*, Prasad, L.M., Sultan C.

इकाई 4 संगठन एवं नेतृत्व

टिप्पणी

संरचना

4.0 परिचय

4.1 उद्देश्य

4.2 संगठन : अवधारणा, संगठन के निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण

- 4.2.1 संगठन की संकल्पनाएं
- 4.2.2 संगठन के निर्माण खंड एवं प्रकार
- 4.2.3 अधिकार (सत्ता) की शक्ति और वितरण

4.3 नेतृत्व : अभिप्रेरणा, संगठन में टीम और टीम वर्क

- 4.3.1 नेतृत्व के विविध स्वरूप
- 4.3.2 नेतृत्व के विविध सिद्धांत
- 4.3.3 अभिप्रेरणा
- 4.3.4 संगठन में टीम एवं टीमवर्क

4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

4.5 सारांश

4.6 मुख्य शब्दावली

4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

संगठन प्रबंध की एक ऐसी प्रक्रिया है जो सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भिन्न–भिन्न प्रतिभाओं व योग्यताओं के धनी व्यक्तियों को आपस में मिलाती है और उन्हें सुनिश्चित संबंधों, समन्वय तथा संप्रेषण के द्वारा एक संगठन में बांधती है। प्रक्रिया के रूप में, संगठन एक गतिशील तत्व है क्योंकि इसमें कार्यों का निर्धारण तथा वर्गीकरण, अधिकारों व दायित्वों का बंटवारा तथा पारस्परिक संबंधों का निर्धारण संगठन के आंतरिक व बाह्य वातावरण तथा संगठनकर्ताओं के अनुभव और ज्ञान के अनुसार निरंतर बदलता रहता है।

संगठन को व्यक्तियों के एक समूह या ढांचे के रूप में परिभाषित किया जाता है। मैकफरलैण्ड (Macfarland) के शब्दों में, ''संगठन की सर्वोत्तम परिभाषा काम करने की एक विशिष्ट स्थिति में व्यक्तियों और पदों के संबंधों के ढांचे या ताने–बाने तथा इस ढांचे के बनाने, कायम रखने तथा उपयोग करने की प्रक्रियाओं के रूप में दी जाती है।'' उनके अनुसार संगठन का ढांचा, अर्थात 'भिन्न–भिन्न व्यक्तियों, पदों और कार्यों के बीच विशिष्ट संबंधों का ताना–बाना', एक स्थैतिक विचार है, जबकि इसकी प्रक्रिया अर्थात संगठन के बनाने; कायम रखने और प्रयोग करने की प्रबंधकीय क्रिया एक गतिशील विचार।

प्रत्येक समूह को, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, एक विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने सदस्यों के कार्यकलापों के पथ–प्रदर्शन, अभिप्रेरणा और निर्देशन के लिए एक प्रभावशाली नेतृत्व की आवश्यकता होती है। व्यवसाय के क्षेत्र में भी नेतृत्व की एक प्रमुख भूमिका है। किसी भी औद्योगिक संस्था की सफलता के लिए अन्य कोई वस्तु

इतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितनी कि संस्था के सम्बद्ध लोगों से सामूहिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु हार्दिक सहयोग प्राप्त करने के लिए नेतृत्व। नेतृत्व प्रबंध कला का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

टिप्पणी

इस इकाई में हम संगठन की अवधारणा, इसके निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण का अवलोकन करते हुए नेतृत्व, अभिप्रेरणा, संगठन में टीम और टीमवर्क का अध्ययन करेंगे।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- संगठन की अवधारणा एवं इसके निर्माण खंड को समझ पाएंगे;
- अधिकार और शक्ति वितरण की विवेचना कर पाएंगे;
- नेतृत्व के अंतर्गत प्रेरणा एवं टीमवर्क से परिचित हो पाएंगे।

4.2 संगठन : अवधारणा, संगठन के निर्माण खंड, अधिकार की शक्ति और वितरण

संगठन की संकल्पना, इसके निर्माण खंड, अधिकार एवं शक्ति वितरण को क्रमशः इस प्रकार समझा जा सकता है–

4.2.1 संगठन की संकल्पनाएं

व्यवसाय प्रबंध में संगठन की दो प्रचलित अवधारणाएं सामने आती हैं (क) संगठन एक प्रक्रिया (process) के रूप में, तथा (ख) संगठन संबंधों के एक ढांचे (structure) के रूप में।

(क) संगठन एक प्रक्रिया के रूप में (Organization as a Process)

प्रक्रिया के रूप में संगठन की निम्न परिभाषाएं महत्वपूर्ण हैं–

(1) ऐलन के शब्दों में, ''उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में संलग्न व्यक्तियों को अपना–अपना काम अधिक से अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से मिलकर करने में सहायता देने के लिए, संपन्न किए जाने वाले आवश्यक कामों को तय करके श्रेणीबद्ध करने, दायित्वों और अधिकारों को परिभाषित करने व सौंपने तथा आपसी संबंधों की व्याख्या करने की प्रक्रिया को संगठन कहते हैं।''

(2) जी.ई. मिलवर्ड के शब्दों में, ''संगठन एक इस प्रकार की प्रक्रिया है जिसमें संपूर्ण कार्य को कुछ निश्चित दायित्वों में विभक्त किया जाता है; दायित्वों को भिन्न–भिन्न पदों में वर्गीकृत किया जाता है; सभी पदों को उचित अधिकार दिए जाते हैं और पदों के अनुसार ही उचित योग्यता के कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है जिससे पूर्वनियोजित कार्य उचित समय पर किया जा सकें।''

(3) थियो हेमैन के शब्दों में, ''संगठन एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत व्यवसाय के कार्यों को परिभाषित एवं वर्गीकृत किया जाता है और उन्हें विभिन्न व्यक्तियों को सौंपकर उनके अधिकार संबंधों को सुनिश्चित किया जाता है।

टिप्पणी

एक प्रक्रिया के रूप में संगठन की निम्न विशेषताएं (characteristics) महत्वपूर्ण हैं –

1. आवश्यक कार्यों को पहचानना एवं परिभाषित करना (Identifying and defining essential tasks) – सबसे पहले संगठनकर्ता को संस्था के उद्देश्य प्राप्त करने के लिए सामूहिक रूप से विभिन्न–कार्य उपकार्य तथा सहायक कार्य करने पड़ेंगे। ई.एफ.एल. ब्रैच (E.F.L. Brech) के अनुसार, ''सर्वप्रथम संस्था द्वारा किए जाने वाले समस्त कार्यों को परिभाषित किया जाता है। कार्यों को परिभाषित करते समय संस्था के उद्देश्यों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। प्रत्येक कार्य को उपकार्यों में विभाजित किया जाता है जिससे कि उसे कर्मचारियों में बांटा जा सके और उनका दायित्व निर्धारित किया जा सके।"

2. क्रियाओं का समूहीकरण (Grouping of Activities) – क्रियाओं की पहचान एवं परिभाषित करने के बाद क्रियाओं का समूहीकरण किया जाता है। एक ओर विशिष्टीकरण का लाभ उठाने तथा समन्वय व नियंत्रण को सरल बनाने के लिए तथा दूसरी ओर, मानवीय तथा भौतिक साधनों का सर्वश्रेष्ठ उपयोग करने के लिए इन कार्यों का समानता के किसी भी आधार पर (जैसे–कार्यों की समानता, बाजार की समानता या निर्मित वस्तुओं की समानता) अलग–अलग क्रिया समूहों में बांटा जा सकता है।

3. कर्मचारियों में कार्य का विभाजन (Allocation of Work amongst the Employees) – क्रियाओं को श्रेणीबद्ध करने के उपरांत अलग चरण है, कार्यों का कर्मचारियों के मध्य विभाजन करना। कार्य विभाजन में कर्मचारियों की रुचि, शारीरिक क्षमता, शैक्षणिक योग्यता, कार्य अनुभव आदि को ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

4. अधिकारों एवं दायित्वों की व्याख्या (Definition of Authority and Responsibility) – उपयुक्त व्यक्तियों को उपयुक्त काम सौंप देने के बाद उन्हें अपना अपना काम सही ढंग से करने में सहायता देने के लिए काम से संबंधित अधिकार सौंपे जाते हैं तथा अपने–अपने काम के लिए जिम्मेदार बनाया जाता है।

5. समन्वय (Co-ordination) – यह संगठन संरचना की अन्तिम प्रक्रिया है। विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय स्थापित करना, जिससे कि उपक्रम के समस्त विभाग एकजुट होकर संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति अन्तिम कड़ी होती है।

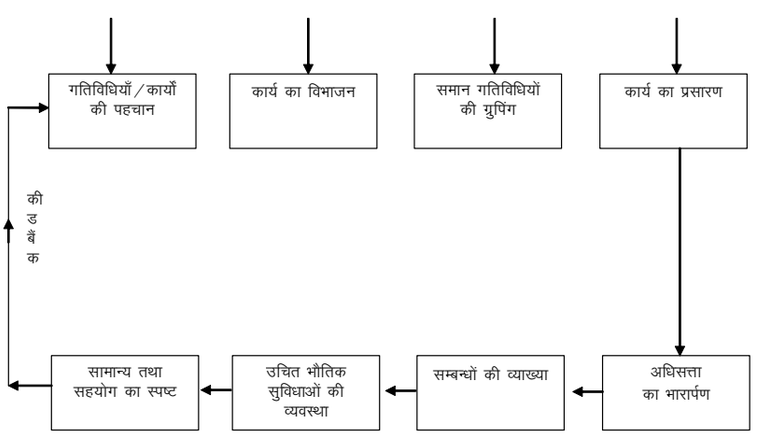

चित्र : संगठनात्मक प्रक्रिया मॉडल

टिप्पणी

(ख) संगठन संबंधों के एक ढांचे (structure) के रूप में

संगठन को व्यक्तियों के एक समूह या ढांचे के रूप में परिभाषित किया जाता है। मैकफरलैण्ड (Macfarland) के शब्दों में ''संगठन की सर्वोत्तम परिभाषा काम करने की एक विशिष्ट स्थिति में व्यक्तियों और पदों के संबंधों के ढांचे या ताने–बाने तथा इस ढांचे के बनाने, कायम रखने तथा उपयोग करने की प्रक्रियाओं के रूप में दी जाती है।'' उनके अनुसार संगठन का ढांचा, अर्थात 'भिन्न–भिन्न व्यक्तियों, पदों और कार्यों के बीच विशिष्ट संबंधों का ताना–बाना', एक स्थैतिक विचार है, जबकि इसकी प्रक्रिया अर्थात संगठन के बनाने; कायम रखने और प्रयोग करने की प्रबंधकीय क्रिया एक गतिशील विचार। संगठन के ढांचे को परिभाषित करने से, एक ओर, इसमें समन्वय तथा सन्तुलन बनाया जा सकता है और दूसरी ओर इसमें शामिल भिन्न–भिन्न व्यक्तियों के व्यवहार की पुर्वानुमेयता (predictability of behaviour) को बढ़ाया जा सकता है। साथ ही, संगठन में संलग्न व्यक्तियों के कार्यों पर प्रभावशील नियंत्रण भी रखा जा सकता है, क्योंकि किसी भी व्यक्ति की लापरवाही या अक्षमता अलग से जानी जा सकती है।

(1) **कून्टज एवं ओ'डोनेल** के अनुसार, ''संगठन पारस्परिक संबंधों का एक ऐसा ढांचा है जिसके द्वारा व्यवसाय को एकरूपता प्रदान की जाती है और व्यक्तियों के प्रयास को समन्वित किया जाता है।''

(2) **हेने** के अनुसार, ''किसी सामान्य उद्देश्य अथवा उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न अंगों के मैत्रीपूर्ण संयोजन को संगठन कहते हैं।''

(3) **ई.एफ.एल. ब्रेच** के अनुसार, ''संगठन प्रबंध की संरचना है क्योंकि वह अधिक सार्थक कार्य सम्पादन के लिए कुल उत्तरदायित्व को उचित भागों में विभक्त या वितरित करता है।''

एक ढांचे के रूप में संगठन की निम्न विशेषताएं हैं –

1. संगठन पद–स्थितियों तथा कार्य–भूमिकाओं का एक सुविचरित ढांचा होता है, जिसके फलस्वरूप विभिन्न इकाइयां ऊपर से नीचे और दाएं से बाएं एकाकार होकर संगठन की शक्ति को बढ़ाती हैं।

2. संगठन की आवश्यकता एवं कुशलता को ध्यान में रखकर इसे परस्पर अवलम्बित स्वतन्त्र इकाइयों व उपकार्यों में बांटा जाता है।

3. प्रत्येक इकाई व उप–इकाई के उद्देश्य, अधिकार व उत्तरदायित्वों की स्पष्ट व्याख्या होती है, जिससे उत्तरदायित्व केंद्र स्थापित किए जा सके तथा समन्वय व सन्तुलन में सरलता रहे। संगठन संरचना के रूप में औपचारिक भी हो सकता है और अनौपचारिक भी हो सकता है।

संगठन के सिद्धांत (Principles of Organization)

एक सफल संगठन के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सफल हो। जो संगठन अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो पाता, उसे असफल संगठन कहते हैं। क्योंकि उसमें कहीं न कहीं, कोई न कोई दोष अवश्य होता है। संगठन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि संगठन के अपने कुछ निश्चित और स्पष्ट सिद्धांत होने चाहिए। इस संबंध में एल. उर्विक का कथन उल्लेखनीय है कि ''यदि संगठन संरचना सिद्धांतों पर आधारित नहीं है तो संगठन का निर्देशन करने वाले

व्यक्ति केवल अपने व्यक्तित्व का निर्माण ही कर सकते हैं। सिद्धांतहीन संगठनकर्ता संगठन से अपने व्यक्तिगत लाभों की पूर्ति ही करते रहते हैं।''

टिप्पणी

कर्नल लिण्डाल उर्विक (Col. Lyndol Urwick) ने संगठन के निम्नलिखित सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है जो सर्वमान्य एवं सार्वभौमिक माने जाते हैं–

(1) व्याख्या का सिद्धांत (Principle of Explanation) – कर्मचारियों के सुचारू रूप से कार्य संचालन के लिए आवश्यक है कि उनके कर्तव्य, दायित्व और अधिकार स्पष्ट होने चाहिए जिससे उन्हें अपने कार्यक्षेत्र का पूरा–पूरा ज्ञान हो जाए। अतः इन सबकी स्पष्ट व्याख्या होना आवश्यक है।

(2) उद्देश्य का सिद्धांत (Principle of Objective) – संगठन के निश्चित उद्देश्य होने चाहिए और उसकी सभी क्रियाएं इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए ही की जानी चाहिए। अतः कर्मचारियों को अपने उद्देश्यों के विषय में लेशमात्र भी संदेह नहीं होना चाहिए अर्थात कर्मचारियों को उद्देश्य बिल्कुल स्पष्ट कर दिए जाने चाहिए।

(3) नियंत्रण के क्षेत्र में सिद्धांत (Principle of Span of Control) – एक बड़े अधिकारी के नियंत्रण का क्षेत्र उतना ही होगा चाहिए जितने क्षेत्र पर वह कुशलतापूर्वक एवं प्रभावपूर्ण तरीके से नियंत्रण कर सके। अतः एक अधिकारी के अधीन इतने अधिक कर्मचारी नहीं होने चाहिए, जिन पर वह अच्छी तरह नियंत्रण न कर सके अर्थात नियंत्रण का क्षेत्र सीमित होना चाहिए।

(4) अधिकार का सिद्धांत (Principle of Authority) – जब किसी व्यक्ति को कोई उत्तरदायित्व दिया जाए, तो उसे पूरा करने के लिए उस व्यक्ति को कुछ अधिकार भी दिए जाने चाहिए। अधिकार और दायित्व एक दूसरे पर निर्भर हैं और दोनों साथ–साथ चलते हैं। (Authority must go together with responsibility) अतः दायित्वों को पूरा करने के लिए अधिकार आवश्यक हैं।

(5) विशिष्टीकरण का सिद्धांत (Principle of Specialization) – संगठन में विशिष्टीकरण का सिद्धांत एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। इस सिद्धांत के आधार पर जो व्यक्ति जिस काम को करने के लिए सबसे अधिक योग्य होता है, उसे वही काम सुपुर्द किया जाता है। यह सिद्धांत समय, साधन और माल की बर्बादी को रोकने में सहायक सिद्ध होता है।

(6) लोच का सिद्धांत (Principle of Frexibility) – संगठन लोचपूर्ण होना चाहिए जिससे उसे आवश्यकता के समय बिना कठिनाई के घटाया–बढ़ाया जा सके, संगठन को कागजी नियंत्रण और लालफीताशाही से बचाने का पूरा–पूरा प्रबंध करना चाहिए।

(7) आदेश का सौपानिक सिद्धांत (The scaler principle) – संगठन की दृष्टि से संस्था के सभी अधिकारी ऊपर से नीचे की ओर एक–दूसरे से संबंधित होने चाहिए। सभी कर्मचारी एवं छोटे अधिकारियों को अपने से बड़े अधिकारियों की आज्ञा का पालन करना चाहिए।

(8) उत्तरदायित्व का सिद्धांत (Principle of Responsibility or Unit of Command) – सभी बड़े अधिकारियों को अपने अधीन काम करने वाले कर्मचारियों के कार्य के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए।

टिप्पणी

(9) निरंतरता का सिद्धांत (Principle of Continuity) – संगठन की विधि को व्यवसाय में निरंतर चालू रखना आवश्यक है। संगठन की क्रियाओं का निर्धारण करते समय हमें वर्तमान आवश्यकताओं के साथ–साथ भविष्य की आवश्यकताओं का भी पूरा–पूरा ध्यान रखना चाहिए।

(10) संतुलन का सिद्धांत (Principle of Balance) – विभिन्न अधिकारी एवं कर्मचारियों के सिद्धांत संतुलित होने चाहिए जिससे किसी भी समय उनके कार्यों में टकराव होने की स्थिति पैदा न हो जाए और साथ–साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि कार्य का दोहरीकरण भी न हो पाए।

(11) समन्वय का सिद्धांत (Principle of Co-ordination) – किसी व्यावसायिक संस्था के विभिन्न कार्यों, साधनों और व्यक्तियों की क्रियाओं में समन्वय करना संगठन की क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य है।

यद्यपि ये सिद्धांत सार्वभौमिक सिद्धांत हैं। फिर भी कुछ प्रबंधशास्त्री एल, उर्विक के सिद्धांतों को परंपरागत सिद्धांत मानते हैं। आधुनिक प्रबंधशास्त्रियों ने संगठन के निम्नलिखित सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है –

(1) सहभागिता का सिद्धांत (Principle of Joint Decision) – व्यावसायिक संस्था से संबंधित सभी समस्याओं का समाधान करने के लिए सभी प्रबंधकों को आपस में बैठकर विचार–विमर्श करना चाहिए और उनका हल ढूंढ़ना चाहिए।

(2) कार्यक्षमता का सिद्धांत (Principle of Efficiency) – संगठन का उद्देश्य न्यूनतम साधनों से अधिकतम संतुष्टि एवं कार्यकुशलता प्राप्त करना होना चाहिए, अतः सभी साधनों का पूर्ण, सार्थक और मितव्ययतापूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए। कर्मचारी, समाज और संस्था तीनों की दृष्टि से कार्यक्षमता का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

(3) नेतृत्व का सिद्धांत (Principle of Leadership) – व्यावसायिक संस्थान की सभी क्रियाओं का नेतृत्व संगठन के द्वारा किया जाना चाहिए। अतः प्रबंधकों का यह कर्तव्य है कि वे अपने व्यवसाय को सच्ची लगन, उत्साह और प्रेरणात्मक साधनों से आगे बढ़ाएं।

(4) अपवाद का सिद्धांत (Principle of Exception) – प्रत्येक कर्मचारी को कुछ कार्यों को करने की पूर्ण स्वतंतत्रा होनी चाहिए, जिनमें वह अपनी शक्ति और योग्यता का प्रदर्शन कर सके, और प्रकाश में आ सके। अतः कुछ ही कार्य ऐसे होने चाहिए जिनमें उसे अपने से बड़े अधिकारियों से परामर्श लेना आवश्यक है।

(5) अधिकार अंतरण का सिद्धांत (Principle of Delegation) – संगठन की सफलता के लिए अधिकार अंतरण के सिद्धांत का भी पूरा–पूरा उपयोग किया जाना चाहिए, क्योंकि जिन व्यक्तियों को कर्तव्य और दायित्व दिए जाते हैं, उन्हें उनसे संबंधित आवश्यक अधिकार भी दिए जाने चाहिए।

संगठन की विचारधाराएं (Theories of Organization)

संगठन की प्रमुख विचारधाराएं निम्न प्रकार हैं –

1. परंपरावादी या प्रतिष्ठित विचारधारा (Classical Theory) –किसी भी विचारधारा के उद्‌गम और विकास में उसके प्रवर्तकों एवं अनुयायियों का दृष्टिकोण

टिप्पणी

महत्वपूर्ण होता है। इस विचारधारा का जन्म एडम स्मिथ के श्रम विभाजन सिद्धांत से माना जाता है। लेकिन इस विचारधारा को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करने वाले विद्वान मूने एवं रैले माने जाते हैं। जिन्होंने 1931 में अपनी पुस्तक 'ऑनवर्ड इंडस्ट्री' का प्रकाशन किया था। इस विचारधारा को समुन्नत करने का श्रेय टेलर, फेयोल, उर्विक ऐलन, ई.एफ.एल ब्रेच आदि को भी दिया जाता है। इस विचारधारा के समर्थकों के अनुसार किसी भी संगठन की नींव चार स्तंभों पर निर्भर रहती है –

1. श्रम–विभाजन (Division of labour)
2. सौपानिक एवं क्रियात्मक प्रक्रिया (Scaler & Functional Process)
3. संरचना (Structure)
4. नियंत्रण का विस्तार (Span of control)

परंपरावादी विचारधारा के समर्थक औपचारिक संगठन को मान्यता प्रदान करते हैं, जिसमें श्रम विभाजन को उसका सबसे बड़ा महत्वपूर्ण आधार माना जाता है। संगठन की क्रियाओं को इस प्रकार से विभाजित किया जाता है कि इसका अध्ययन शीर्ष से प्रारंभ होता है। लेकिन विभागीकरण करते समय क्रियात्मक पहलू का भी ध्यान रखा जाता है। टेलर इस विचारधारा के जन्मदाता माने जाते हैं। परंपरावादी विचारधारा के समर्थक केवल दो ही संरचना प्रमुख मानते हैं– रेखा संगठन तथा रेखा एवं कर्मचारी संगठन। लेकिन अन्य संगठन संरचनाओं को भी इसमें शामिल कर लिया जाता है। इस विचारधारा में इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि एक प्रबंधक कितने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्य का प्रभावशाली ढंग से निरीक्षण कर सकता है। उपरोक्त चार बातें इस विचारधारा के स्तम्भ का आधार मानी जाती हैं। इस विचारधारा की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

परंपरावादी संगठन की विचारधारा में औपचारिक संगठन को मान्यता दी जाती है। यह विचारधारा श्रम–विभाजन, उद्देश्य एवं क्रिया तथा उनके मानवीय प्रयासों पर आधारित है। केंद्रीयकरण पर इस विचारधारा में विशेष बल दिया जाता है। इस विचारधारा में कार्य निष्पादन के लिए उत्तरदायित्व एवं जवाबदेही को माना जाता है। इस विचारधारा की संगठन संरचना व्यक्ति की तुलना में कार्य पर अधिक बल देती है।

इस विचारधारा के समर्थकों ने विभिन्न सिद्धांतों का भी विकास किया है। प्रमुख सिद्धांतों की गणना अर्नेस्ट डेल ने निम्न प्रकार की है –

1. उद्देश्य का सिद्धांत (Principle of objective)
2. समन्वय का सिद्धांत (Principle of Co-ordination)
3. विशिष्टीकरण का सिद्धांत (Principle of specialization)
4. निर्देशन की एकता का सिद्धांत (Principle of unity of direction)
5. आदेश की एकता का सिद्धांत (Principle of unity of command)
6. अधिकार एवं दायित्व का सिद्धांत (Principle of authority and responsibility)
7. प्रत्यायोजन का सिद्धांत (Principle of delegation)
8. नियंत्रण के विस्तार का सिद्धांत (Principle of span of control)
9. संतुलन का सिद्धांत (Principle of balance) आदि।

टिप्पणी

2. नव–प्रतिष्ठित विचारधारा (Neo-Classical Theory) – परंपरावादी विचारधारा की आलोचना करने वाले विभिन्न विद्वानों ने अपनी नई विचारधारा प्रस्तुत की जिसे नव प्रतिष्ठित या नवीन परंपरावादी विचारधारा कहा जाता है। इस विचारधारा के अंतर्गत मानवीय उत्तरदायित्व पर विशेष बल दिया गया है। एल्टन मायो ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर ''वेस्टर्न इलैक्ट्रिक कंपनी'' की ''हॉथोर्न प्रयोगशाला'' में अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षण किए थे। जिनके आधार पर मानवीय तत्व को प्रकाश में लाकर उन्होंने संगठन को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया। एल्टन मायो के अतिरिक्त अन्य विद्वानों ने भी इस विचारधारा के विकास में योगदान दिया है जिनमें से आर्गीर्निस, बके, लिकर्ट मैकग्रेगर आदि विद्वानों के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इस विचारधारा ने जो प्रमुख योगदान दिया, उसमें एक है मानवीय पहलुओं का महत्व तथा दूसरा है अनौपचारिक संगठन की ओर ध्यान। इस विचारधारा के विद्वानों ने श्रम विभाजन, अभिप्रेरण, समन्वय, नेतृत्व आदि के क्षेत्र में मानवीय समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया; रेखा अधिकारी तथा कर्मचारियों के बीच होने वाले संघर्ष को दूर करने की दृष्टि से नए विचार प्रस्तुत किए तथा यह स्पष्ट किया कि अनौपचारिक संगठन भी व्यवसायिक संगठन की कुशलता एवं उत्पादकता को प्रभावित करता है। इस विचारधारा की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. व्यक्ति ही समस्त संगठन का आधार है तथा संगठन एक सामाजिक प्रणाली है।
2. कोई भी कर्मचारी पहले मानव है बाद में श्रमिक या प्रबंधक, अतः उसके साथ मानवीय व्यवहार किया जाना चाहिए।
3. इसने अनौपचारिक संगठन को मान्यता दी।
4. इसके अनुसार प्रबंध में संचार प्रक्रिया द्विमार्गी होनी चाहिए।
5. योजना के निर्माण व निर्णयन में कर्मचारियों की साझेदारी को प्रोत्साहित किया गया है।
6. व्यक्तिगत एवं संस्था के लक्ष्यों में समन्वय होना चाहिए, संघर्ष नहीं।
7. प्रत्येक कर्मचारी औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों प्रकार के संगठनों से प्रभावित होता है।
8. इसने स्थिति एवं भूमिका (status & role) की संकल्पना को मान्यता दी।
9. यह विचारधारा व्यापक दृष्टिकोण (macro approach) प्रस्तुत करती है।

3. आधुनिक विचारधारा (Modern Theory of Organization) – संगठन की आधुनिक विचारधारा का महत्वपूर्ण आधार सैद्धांतिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण है। इस विचारधारा की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

1. इसका सैद्धांतिक विश्लेषणात्मक आधार है।
2. यह परिमाणात्मक विज्ञानों पर अपना ध्यान केंद्रित करती है।
3. यह संगठन को प्रणाली मानकर उसके विविध अंगों को विकसित करने का प्रयास करती है।
4. यह संगठन को संपूर्ण इकाई मानती है तथा सूक्ष्म दृष्टि (micro approach) से उसका अध्ययन करती है।

5. यह संगठन की भीतरी व बाहरी सभी समस्याओं को अध्ययन करने का प्रयास करती है।

6. यह व्यावहारिक अनुसंधान के निष्कर्षों को अपना आधार मानती है।

टिप्पणी

संगठन की आधुनिक एवं परंपरावादी विचारधारा में अंतर (Difference between Modern Theory and Classical Theory of Organization)

1. **क्षेत्र**–संगठन की आधुनिक विचारधारा का क्षेत्र अधिक व्यापक है क्योंकि यह संगठन की आंतरिक एवं बाहरी समस्याओं के समाधान प्रस्तुत करती है जबकि परंपरावादी विचारधारा का क्षेत्र संकुचित है क्योंकि यह संठन की केवल आंतरिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करती है।

2. **दृष्टिकोण**–आधुनिक विचारधारा का समष्टि दृष्टिकोण (macro view) होता है जबकि परंपरावादी विचारधारा का व्यष्टि दृष्टिकोण (micro view) होता है।

3. **आधार**–आधुनिक विचारधारा का आधार वैज्ञानिक प्रयोग, अनुसंधान एव आंकड़े हैं जबकि परंपरावादी विचारधारा का आधार सामान्य सूझबूझ एवं विवेक ही है।

4. **विवरणात्मकता**–आधुनिक विचारधारा विवरणात्मक है। इससे इस बात का ज्ञान होता है कि प्रबंधकों को क्या करना चाहिए जबकि परंपरावादी विचारधारा विवरणात्मक नहीं है, इससे इस बात का ज्ञान होता है कि प्रबंधकों को क्या करना चाहिए।

5. **स्पष्टता**–आधुनिक विचारधारा आधुनिक मान्यताओं के संबंध में अधिक स्पष्ट है कि जबकि परंपरावादी विचारधारा के प्रतिपादक आधारभूत मान्यताओं के परीक्षण तथा निर्देशानुसार निष्कर्ष पर पहुंचने में अक्षम रहे। अतः इसकी मान्यताएं अस्पष्ट हैं।

6. **परीक्षण**–आधुनिक विचारधारा अधिक तर्कसंगत होने के कारण बड़ी सफलता से तर्क की कसौटी पर परीक्षा संभव है जबकि परंपरावादी विचारधारा में तर्क के अभाव के कारण परीक्षण करना कठिन होता है।

7. **विचारक या प्रतिपादक**–आधुनिक विचारधारा के प्रतिपादक मुख्य रूप से समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक एवं गणितज्ञ हैं जबकि परंपरावादी विचारधारा के प्रतिपादक मुख्य रूप से प्राचीन अर्थशास्त्री व्यवसायी, मनोवैज्ञानिक एवं इंजीनियर आदि हैं।

समालोचना (Criticism)–संगठन की आधुनिक विचारधारा ने कोई निश्चित एकीकृत सिद्धांत प्रस्तुत नहीं किए हैं। इसके अतिरिक्त यह विचारधारा भी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुई, लेकिन यह कहा जा सकता है कि आधुनिक विचारधारा ने वैज्ञानिक विश्लेषण को मान्यता प्रदान की है।

- **अन्य विचारधाराएं** (Other Theories)

1. **व्यवहारवादी विचारधारा** (Behavioural theory) – यह विचारधारा इस तथ्य पर आधारित है कि अन्य व्यक्तियों के 'साथ' और उनके 'द्वारा' काम कराना ही प्रबंध है। अतः प्रबंध में परस्पर व्यक्तिगत संबंधों का केन्द्रीय स्थान होना चाहिए। इस दृष्टि को 'मानवीय संबंध', 'नेतृत्व' अथवा 'व्यावहारिक विज्ञान' दृष्टिकोण

कहा गया है। इस विचारधारा के समर्थक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान में विशेष रुचि लेते हैं।

टिप्पणी

2. **निर्णयन विचारधारा** (Decision theory) – इसका प्रतिपादन हरबर्ट साइमन ने किया। उनके अनुसार निर्णय करने वाले व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों को ही संगठन कहते हैं। यह विचारधारा अत्यंत संकुचित है, क्योंकि यह संगठन के समस्त दर्शन पर प्रकाश न डालकर केवल उसके एक अंग (निर्णय–प्रक्रिया) पर ही प्रकाश डालती है।

4.2.2 संगठन के निर्माण खंड एवं प्रकार

संगठन निर्माण के आवश्यक पहलू निम्नांकित हैं–

(1) **कार्य विभाजन** (Division of Labour) – जब कोई कार्य कुछ व्यक्तियों द्वारा मिलकर किया जाता है तब यह आवश्यक हो जाता है कि उसे प्रभावशाली ढंग से पूरा करने के लिए निश्चित सिद्धान्तों के अनुसार उनके कार्य का विभाजन करने के लिए एक निश्चित योजना तैयार की जाए और उनमें उस योजना के आधार पर कार्य का विभाजन किया जाए। इसके लिए पहले उपकार्य निश्चित किए जाते हैं और फिर उपकार्यों को करने के योग्य व्यक्तियों का चयन कर उनको सौंप दिया जाता है। उदाहरण के लिए, एक उत्पादक संस्था उत्पादक विभाग, धन–प्रबंध विभाग, विपणन विभाग और कर्मचारी विभाग बनाए जा सकते हैं और इन्हें पुनः आवश्यकतानुसार अनेक उपविभागों में भी विभक्त किया जा सकता है। विशिष्टीकरण से उत्पादन की मात्रा और गुण दोनों में वृद्धि होती है और इसके साथ–साथ समय की भी बचत होती है जबकि कोई अतिरिक्त पूंजी नहीं लगानी पड़ती।

(2) **उद्देश्य** (Objectives) – संस्था के उद्देश्य निश्चित होने चाहिए और सभी के सभी विभागों के उद्देश्य इस प्रकार निश्चित किए जाने चाहिए ताकि वे मुख्य रूप से संस्था के मूल उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकें। एक योग्य प्रबंधक विभागीय उद्देश्य को संस्था के उद्देश्यों में परिवर्तित कर सकता है।

(3) **समन्वय** (Co-ordination) – संस्था के विभिन्न कार्यों की सुविधा के लिए समन्वय बनाए जाते हैं जबकि सबका उद्देश्य एक ही होता है, इसलिए सभी विभागों के कार्यों में पूर्ण ताल–मेल होना आवश्यक है। जहां तक संभव हो सके प्रत्येक स्तर पर समन्वय का होना आवश्यक होता है जैसे–(i) एक कर्मचारी और उसका कार्य, (ii) एक कर्मचारी और दूसरे कर्मचारियों के कार्य, और (iii) एक विभाग एवं दूसरे विभाग के कार्य।

(4) **अधिकार एवं दायित्वों का संबंध** (Authority and Responsibility Relationship) – सभी अधिकारियों के अधिकार उनके पद के अनुसार होने चाहिए अर्थात समान पदों पर कार्यरत अधिकारियों के अधिकारों में अन्तर होना चाहिए। उदाहरण के लिए सभी विभागीय प्रबंधकों के अधिकार एक समान होने चाहिए और वे सब केंद्रीय प्रबंधक के अधीन होने चाहिए।

(5) **संदेशवाहन** (Communication) – प्रबंधक का कार्य दूसरे व्यक्तियों से कार्य करवाना है, इसके लिए समय–समय पर आवश्यक आदेश एवं निर्देश देने पड़ते हैं और उनके कार्य पर नियंत्रण रखना पड़ता है, इसलिए संस्था से प्रभावी संदेशवाहन की व्यवस्था का होना आवश्यक नहीं वरन अनिवार्य है।

संगठनों के प्रकार (Types of Organizations)

टिप्पणी

संगठनों के निम्न प्रकार हैं–

1. अनौपचारिक संगठन (Informal organization) – अनौपचारिक संगठन, संगठन की महत्वपूर्ण विचारधारा है। अनौपचारिक संगठनों में लोगों में औपचारिक श्रृंखलाओं से हटकर चलने की तथा संगठन के अन्य भागों के साथ अनौपचारिक तौर से संप्रेषण करने की प्रवृति होती है। लोग समूह के मानदंडों तथा सामाजिक परम्पराओं द्वारा अभिप्रेरित होने की प्रवृति दिखाते हैं। इसमें औपचारिक संबंधों तथा अधिसत्ता की विद्यमानता नहीं होती।

वास्तव में अनौपचारिक संगठनों से व्यक्तिगत रुझान, मनोभावों, पसंदों तथा नापसंदों पर आधारित संगठन के लोगों के बीच संबंधों का संदर्भ लिया जाता है। ये अनौपचारिक ग्रुप सामान्य रुचियों, भाषा, संस्कृति, सोच तथा नजरियों को अपना आधार बनाते हैं। ये बिल्कुल भी पूर्व नियोजित नहीं होते (not preplanned) वरन संगठन के भीतर तथा बाहर एकाएक विकसित हो जाते हैं। कोई भी औपचारिक तंत्र व्यवस्था इनके लिए काम नहीं करती। जहां भी लोग एक साथ काम करते हैं ऐसे ग्रुपों का बनना स्वाभाविक–सा हो जाता है। वास्तव में यह औपचारिक संगठन की तरह का उत्तरदायित्व संबंध न होकर एक मित्रता का संबंध है। अनौपचारिक संगठन श्रमिकों को एक–दूसरे के करीब आने एवं आपस में सहयोग तथा समन्वय की अनुभूति विकसित करने के अवसर प्रदान करते हैं।

प्रो. कीथ डेविस के अनुसार, ''अनौपचारिक संगठन व्यक्तिगत एवं सामाजिक संबंधों का ऐसा जाल है जिसे स्थापित करने के लिए किसी औपचारिक संगठन की स्थापना की आवश्यकता नहीं होती है।''

बर्नार्ड के अनुसार, ''वह संगठन अनौपचारिक है जिससे आपसी संबंध अज्ञानवश संयुक्त उद्देश्य के लिए बनते हैं।

जोसेफ एल. मेसी के अनुसार, ''अनौपचारिक संगठन मानवीय अंतर्क्रियाओं का वह समूह है जो स्वतः स्वाभाविक रूप से दीर्घकाल तक साथ रहने से उत्पन्न हो जाता है।''

अर्ल पी. स्ट्रांग के अनुसार, ''अनौपचारिक संगठन वह सामाजिक ढांचा है जिसका निर्माण व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु होता है। इस प्रकार अनौपचारिक संगठन सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।"

2. औपचारिक संगठन (Formal Organization) – औपचारिक संगठन एक सुव्यस्थित, स्पष्टतः अभिव्यक्त तथा उचित रूप से अभिकल्पित संगठन है। इसमें उत्पादन के विभिन्न घटकों तथा श्रमिकों के बीच पूर्ण समन्वय तथा सहयोग होता है। इससे प्रत्येक कर्मचारी के स्पष्टतः परिभाषित कार्यों तथा उत्तरदायित्वों के साथ पदस्थिति तथा कार्य की संरचना का बोध होता है।

रोथेलिसबर्गर तथा डिक्सन के अनुसार, ''औपचारिक संगठन से आशय मानवीय अंतर्संबंधों के एक तरीके से है जिसकी व्याख्या प्रणालियों, नियमों, नीतियों तथा अर्थव्यवस्था के संबंधों द्वारा की जाती है।''

टिप्पणी

एच.ए. हरबर्ट साइमन के अनुसार, ''औपचारिक संगठन में अमूर्त एवं बहुत कुछ स्थायी नियमों का समावेश रहता है जो प्रत्येक सहभागी के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।''

चेस्टर आई. बर्नार्ड के अनुसार, ''जब किसी संगठन के दो या दो से अधिक व्यक्तियों की क्रियाओं को किसी निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सावधानीपूर्वक समन्वित किया जाता है तो ऐसा संगठन औपचारिक संगठन कहलाता है।''

औपचारिक संगठन सदस्यों के बीच अधिसत्ता संबंध द्वारा बंधा होता है। साथ ही इसमें संचार व्यवस्था एक निर्दिष्ट पूर्व निर्धारित पैटर्न तथा मार्ग का अनुसरण करती है। सुपरिभाषित तथा सुस्थापित संबंधों के साथ–साथ संचार की स्पष्ट शृंखलाएं होती हैं।

4.2.3 अधिकार (सत्ता) की शक्ति और वितरण

प्रबंधकीय कार्यों के निष्पादन के लिए प्रबंधक को अधिकारों की आवश्यकता होती है। इसके आधार पर ही वह अपने अधीनस्थों को कार्य का निष्पादन करने का आदेश देता है। अधिकार से आशय विशिष्ट स्वत्व (rights), शक्ति अथवा अनुमति से लगाया जाता है। यदि अधिकार न हो, तो वह प्रबंधक ही नहीं है। अधिकार से आशय किसी व्यक्ति को प्राप्त उस शक्ति से होता है जिसके आधार पर वह अधीनस्थों को कार्य के निष्पादन के संबंध में आदेश देता है तथा उनसे कार्य लेता है। संगठन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संगठन के अंतर्गत कार्य करने की गतिविधियों का मार्गदर्शन करने तथा उससे कार्य लेने के आदेश देने हेतु प्राप्त शक्ति अधिकार होती है। थियो हैमन के शब्दों में, ''अधिकार वह उचित शक्ति है जिसे धारण करने वाला व्यक्ति अधीनस्थ व्यक्ति से कुछ करने अथवा करने से विरत रहने के लिए कह सकता है और यदि वह इन निर्देशों का अनुसरण न करे, तो प्रबंधक इस स्थिति में होता है कि आवश्यकता होने पर अनुशासन की कार्यवाही कर पाए। यहां तक कि अधीनस्थ व्यक्ति को नौकरी से पृथक कर सके ... अधिकार के बिना केवल अस्त–व्यस्तता ही बढ़ेगी।'' अधिकार एक वैधानिक सही शक्ति है अर्थात यह आदेश देने अथवा कार्य कराने का अधिकार है। प्रबंधक के क्षेत्र में अधिकार शब्द का उपयोग करने पर इसका आशय इस प्रकार है– '' अधिकार दूसरों को आदेश देने की शक्ति है। यह उपक्रम अथवा विभागीय लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, शक्ति प्राप्तकर्ता के निर्देशों के अनुरूप कार्य करने अथवा न करने का आदेश है।'' शक्ति में आदेशों का पालन निहित होता है। आदेशों का यह पालन मंजूरी, शक्ति, प्रार्थना, उत्पीड़न, डांट–डपट, आग्रह, आर्थिक या अनार्थिक दंड अथवा प्रतिबंधों द्वारा कराया जा सकता है।

अधिकार की परिभाषाएं

प्रबंध साहित्य में अधिकार या सत्ता शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता है। इसका कारण अधिकार के विभिन्न स्रोतों का होना है। विभिन्न विद्वानों ने सत्ता को अलग–अलग प्रकार से परिभाषित किया है। यहां कुछ प्रमुख परिभाषाओं का उल्लेख किया गया है –

टिप्पणी

- **ऐलन** (Allen) के अनुसार, ''सत्ता उन समस्त अधिकारों एवं शक्ति का योग है जो किसी व्यक्ति को प्रत्यायोजित कार्यों के निष्पादन को संभव बनाने के लिए सौंपे जाते हैं।''
- **हेनरी फेयोल** (Henry Fayol) के अनुसार, ''आदेश प्रदान करने का अधिकार तथा आज्ञा पालन के लिए बाध्य करने की शक्ति को सत्ता कहते हैं।''
- **एच.ए. साइमन** (H.A. Simon) के अनुसार, ''अधिकार सत्ता निर्णय लेने एवं अन्य व्यक्तियों की क्रियाओं को मार्गदर्शित करने की शक्ति है। यह दो व्यक्तियों के मध्य उच्चाधिकारी एवं अधीनस्थ का संबंध है। उच्च अधिकारी निर्णय लेते हैं एवं इस आशा एवं विश्वास के साथ उनका संवहन करते हैं कि अधीनस्थ उनका पालन करेंगे। अधीनस्थों के क्रियाकलाप ऐसे निर्णयों से ही निर्धारित होते हैं।''
- **कूण्टज एवं ओ' डोनेल** (Koontz and O' Donnell) के अनुसार, ''अधिकार तात्पर्य वैधानिक या स्वत्वाधिकार से संबंधी शक्ति से होता है। दूसरे शब्दों में, आदेश देने या कार्य करने का स्वत्व ही अधिकार है।''
- **थियो हैमेन** (Theo Haimann) के अनुसार, ''अधिकार वह उचित कानूनी शक्ति है जिसे धारण करने वाला अपने अधीन व्यक्ति को कुछ करने या न करने का आदेश दे सकता है और यदि वह इन निर्देशों का अनुसरण न करे तो प्रबंधक इस स्थिति में होता है कि आवश्यक होने पर अनुशासन की कार्यवाही कर सके, यहां तक कि अधीन व्यक्ति को नौकरी से अलग कर दे–अधिकार के बिना केवल अस्त–व्यस्तता ही बढ़ेगी।''

अधिकार के स्रोत (Sources of Authority)

अधिकार अपने कार्यक्षेत्र में स्वतंत्र निर्णय लेने के अधिकार से लेकर अपना कार्य कुशलतापूर्वक करने के लिए निश्चित धनराशि खर्च करने, संस्था को अपने वचन से वचनबद्ध करने के अधिकार तक, कुछ भी हो सकता है। प्रबंध के क्षेत्र में यह अधिकार, सहायक लोगों को आदेश देने तथा उनसे आदेश पूर्ति प्राप्त करने से संबंध रखता है। अधिकार के उपयोग का मुख्य उद्देश्य अधीनस्थों के व्यवहार को इस प्रकार प्रभावित करना है कि वे संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सही समय पर सही काम कर सकें। अधिकार सामान्यतः ऊपर से प्राप्त किए जाते हैं क्योंकि किसी भी संगठन के संस्थापक उस संगठन के अधिकार स्रोत कहलाते हैं, लेकिन कुछ परिस्थितियों में ये नीचे से या बराबर के स्रोत से भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

1. औपचारिक अधिकार–सत्ता का दृष्टिकोण – इस विचारधारा के अनुसार प्रत्येक अधिकारी को सत्ता अपने से उच्च अधिकारी से प्राप्त होती है और इस दृष्टि से मुख्य प्रबंधक सत्ता का स्रोत होता है। यदि सत्ता स्रोत की खोज आगे भी जारी रखी जाए तो हम पाएंगे कि मुख्य प्रबंधक को, कंपनी के सभापति (chairman) को संचालक मंडल और संचालक मंडल को संस्थान के अंशधारियों अथवा स्वामियों से सत्ता प्राप्त होती है। अतः संस्थान के स्वामियों में सत्ता का अंतिम निवास माना जा

टिप्पणी

सकता है, लेकिन सत्ता स्रोत की खोज को सत्ता कहां से प्राप्त होती है? स्वामियों को सत्ता देश के विधान के अंतर्गत प्राप्त होती है। जबकि संविधान देश के सभी विधान का मूल स्रोत माना जा सकता है। संविधान का निर्माण, संशोधन एवं परिवर्तन, देशवासियों द्वारा किया जा सकता है और इस प्रकार किसी भी प्रजातांत्रिक देश में सर्वोच्च सत्ता देशवासियों के हाथों में रहती है। इस प्रकार सत्ता सामाजिक स्वीकृति पर निर्भर करती है। एक बड़ी संस्था में सत्ता का विवरण ऊपर से नीचे की ओर किया जाता है। संगठन की सर्वोच्च सत्ता इसके संस्थापकों के हाथों में मानी जाती है जो इसे सर्वोच्च प्रबंधकों के हाथ में सौंप देते हैं। सर्वोच्च प्रबंधक क्योंकि सारा काम स्वयं नहीं कर पाते, अपनी सहायता के लिए सहायक अधिकारी नियुक्त करते हैं और उन्हें उनकी निपुणता व उत्तरदायित्व के अनुरूप कुछ काम सौंप देते हैं। ये सहायक प्रबंधक भी अपनी पारी में अपनी जिम्मेदारी बढ़ जाने पर आगे कुछ सहायक नियुक्त करते हैं और उन्हें सौंपे गए कार्यों के अनुरूप कुछ अधिकार सौंप देते हैं। प्रबंधकों की यह क्रमिक नियुक्ति एक ओर संगठन के औपचारिक ढांचे को जन्म देती है और दूसरी ओर संगठन को भरने वाले अधिकारियों को तरह–तरह के अधिकारियों से युक्त कर देती है।

2. स्वीकृति का दृष्टिकोण – साइमन तथा बर्नार्ड इस सिद्धांत के प्रवर्तक माने जाते हैं। इन विद्वानों के मतानुसार किसी भी प्रबंधक के अधिकारों का अस्तित्व केवल उसी दशा में होता है जबकि अधीनस्थ कर्मचारी उन्हें स्वीकार करें। औपचारिक सत्ता एक नाममात्र की सत्ता है। यह सत्ता उसी समय प्रभावशाली बन पाती है, जबकि अधीनस्थ (subordinates) इस सत्ता को स्वीकार कर लें। इस प्रकार सत्ता का वास्तविक स्रोत उन व्यक्तियों में निहित होता है जिन पर सत्ता का प्रयोग किया जाना है और इस प्रकार के प्रयोग को स्वीकृति प्रदान करते हैं। टैननबाम (Tannenbaum) के अनुसार, किसी व्यक्ति के पास औपचारिक सत्ता हो सकती है लेकिन यह सत्ता उस समय तक व्यर्थ ही होगी, जब तक कि उसका प्रभावशाली ढंग से प्रयोग न किया जा सके। सत्ता के प्रभावशाली प्रयोग के लिए अधीनस्थों की स्वीकृति आवश्यक है। अधीनस्थ आदेश की सत्ता को उस समय 'स्वीकार' करेगा जबकि वह उन आदेशों को समझता हो तथा उसे विश्वास हो कि आदेश संगठन के उद्देश्यों के अनुरूप है तथा उसके स्वयं के हितों के विरुद्ध नहीं है और वह उन्हें शारीरिक तथा मानसिक रूप से पूरा करने के लिए सक्षम है।

3. क्षमता का दृष्टिकोण – कभी–कभी प्रभावशाली व्यक्तित्व भी अधिकार के स्रोत का कार्य करता है। उदाहरण के लिए, ऐसे भी व्यक्ति होते हैं जिन्हें यद्यपि औपचारिक रूप से कुछ भी अधिकार प्राप्त नहीं होते, किंतु प्रभावी व्यक्तित्व तथा विशिष्ट तकनीकी योग्यता के कारण उन्हें विशेष मान्यता दी जाती है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ऐसे ही प्रभावशाली व्यक्तियों में से थे, जिनसे अनेक व्यक्ति आदेश प्राप्त करते थे। अनेक कुशल इंजीनियर तथा विद्वान अर्थशास्त्री भी इसी श्रेणी में सम्मिलित किए जा सकते हैं। इसी प्रकार धार्मिक संस्थाओं के प्रबंधकों के अधिकार प्रायः समाज के मूलभूत आदर्शों तथा व्यक्तियों के आचरणों द्वारा निर्धारित होते हैं एवं उनमें परिवर्तन होने पर प्रबंधकों के अधिकारों में भी परिवर्तन हो जाता है। इस विचारधारा के अनुयायी उच्च अधिकारी अपने क्षेत्र में स्वीकृति, योग्यता व निपुणता को उसके अधिकार और सत्ता का स्रोत मानते हैं। उदाहरण के लिए, औद्योगिक संगठन में एक औद्योगिक

टिप्पणी

मनोवैज्ञानिक से इसलिए सलाह ली जाती है क्योंकि वह संस्था में लगे कर्मचारियों के मनोविज्ञान के बारे में एक साधारण प्रबंधक से कहीं अधिक जानता है और इसलिए कर्मचारी प्रबंधक को कार्य करने के लिए अच्छा वातावरण तैयार करने में, उनके लिए सही प्रेरणात्मक पारिश्रमिक नीति तय करने में, तथा औद्योगिक संबंधों को अधिक मधुर बनाने की दशा में कहीं अधिक अच्छा परामर्श दे सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "किसी सामान्य उद्देश्य/उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न अंगों के मैत्रीपूर्ण संयोजन को संगठन कहते हैं।" यह परिभाषा किसकी है?
   (क) मैकफरलैण्ड (ख) ऐलन
   (ग) हेमे (घ) हेमैन
2. संगठन की नींव इनमें से किस पर निर्भर नहीं करती?
   (क) श्रम–विभाजन (ख) संरचना
   (ग) नियंत्रण विस्तार (घ) विघटन

4.3 नेतृत्व : अभिप्रेरणा, संगठन में टीम और टीम वर्क

वास्तव में, प्रभावी नेतृत्व की योग्यता प्रभावी प्रबंधक बनने की एक कुंजी है तथा यह भी स्पष्ट हो जाना चाहिए कि प्रबंध के अन्य अनिवार्य कार्य करने तथा संपूर्ण प्रबंधकीय कार्य निभाने में, एक प्रबंधक प्रभावी नेता होगा।

4.3.1 नेतृत्व के विविध स्वरूप

प्रत्येक नेता या प्रबंधक अपने अधीनस्थों से काम लेने के लिए विभिन्न प्रकार के चरणों एवं सिद्धांतों का प्रयोग करता है। अलग–अलग नेताओं के द्वारा अलग–अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है। उनके नेतृत्व की शैली अलग अलग होती है। नेतृत्व की शैलियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से कई भागों में विभक्त किया जा सकता है। अधिकारों के प्रयोग के आधार पर नेतृत्व की शैली को मूलतः तीन भागों में बांटा जा सकता है – तानाशाही नेतृत्व, जनतांत्रिक नेतृत्व तथा स्वतंत्रात्मक नेतृत्व। परिणामों की दृष्टि से नेतृत्व को दो भागों में बांटा जा सकता है – उत्पादन या कार्य प्रेरित नेतृत्व तथा मानवीय संबंध प्रेरित नेतृत्व।

1. **तानाशाही नेतृत्व** (Autocratic Leadership) – तानाशाही नेतृत्व के अंतर्गत नेता सभी अधिकार अपने हाथ में रखता है और कर्मचारियों को सभी काम उसी प्रकार से करने पड़ते हैं जैसे कि वह आदेश दे। यदि कोई कर्मचारी इन आदेशों का पालन नहीं करता या अपने काम में लापरवाही करता है तो उसे दंडित किया जा सकता है और यहां तक कि नौकरी से भी हटाया जा सकता है। एक तानाशाह नेता के द्वारा सभी निर्णय स्वयं लिए जाते हैं और उन सभी की जिम्मेदारी भी वह स्वयं उठाता है। अपने अधीनस्थों से कार्य लेने के लिए वह दंड तथा धमकी का प्रयोग करता है। अपने कार्य में कर्मचारियों की ओर से कोई सुझाव, सलाह या हस्तक्षेप उसे बिल्कुल पसंद नहीं होता।

टिप्पणी

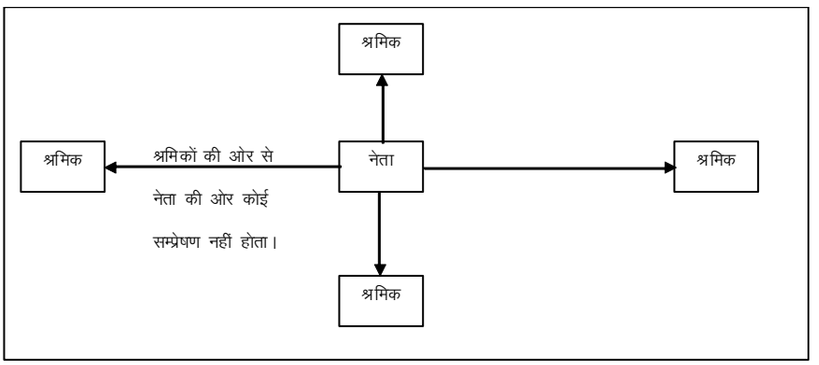

एक तानाशाही नेतृत्व की विशेषताएं संक्षेप में निम्न प्रकार हैं –

1. नेतृत्व की इस शैली में प्रबंधक यह मानकर चलते हैं कि कर्मचारी स्वभावतः आलसी व कामचोर होते हैं, केवल दबाव में काम करते हैं, धन और नौकरी की सुरक्षा चाहते हैं, तथा निरंतर व कठोर नियंत्रण में काम करते हैं।
2. नेतृत्व की इस प्रणाली में प्रत्येक प्रबंधक अपने पद और अधिकार की सीमा में समस्त निर्णय स्वयं अपनी इच्छा से और बिना किसी अन्य व्यक्ति की सलाह से लेता है।
3. इस प्रकार के नेतृत्व में प्रबंधक अपनी सत्ता औपचारिक संगठन ढांचे से प्राप्त करता है और इसे किसी के साथ बांटने के लिए तैयार नहीं होता।
4. इस प्रकार के नेतृत्व में प्रबंधक और कर्मचारियों के संबंध औपचारिकता से बंधे रहते हैं। सभी लोग केवल अपने–अपने काम से मतलब रखते हैं।
5. कर्मचारियों के बारे में गलत धारणाओं के कारण इस नेतृत्व में धमकी और सजा या आर्थिक लाभ दो ही अभिप्रेरणाएं प्रयोग की जाती हैं।
6. साधारणतया इस शैली में कर्मचारियों का व्यवहार तत्काल आज्ञाकारिता तथा नियमपरायणता का होता है।
7. नेतृत्व की इस शैली में अधीनस्थों की कार्य प्रगति पर निरंतर कड़ी निगरानी रखी जाती है जिसमें उत्पादन के लक्ष्यों को बिना किसी संदेह के प्राप्त किया जा सके।
8. इस प्रणाली में सूचनाओं का आदान–प्रदान केवल ऊपर से नीचे की ओर ही चलता है क्योंकि अधीनस्थों के सुझावों व विचारों को तो सुना ही नहीं जाता।

• तानाशाही नेतृत्व के प्रकार (Types of Autocratic Leadership)

1. **कठिन तानाशाही नेतृत्व** (Tough Autocratic Leadership) – यह अत्यंत कठोर होता है। नेता केवल अधीनस्थों को आदेश देता है तथा कर्मचारियों को आदेश मानने होते हैं। आदेश न मानने वाले को सजा दी जाती है। ऐसा नेतृत्व निम्नांकित दशाओं में चल सकता है –
   (i) जब कर्मचारी नये हों,
   (ii) शीघ्र निर्णय लेना हो,

(iii) कार्य करना अत्यंत आवश्यक हो,

(iv) जब कार्य करने का ढंग उपयुक्त न हो।

2. हितपूर्ण तानाशाही नेतृत्व (Benevolent Autocratic Leadership) – यह नेता अपने अधीनस्थों के साथ अच्छा व्यवहार करता है। यह अधीनस्थों की प्रशंसा करता है। इसे पैतृक नेता भी कहा जा सकता है।

टिप्पणी

- **तानाशाही नेतृत्व के लाभ** (Advantages of Autocratic Leadership) –

1. निर्णय एक ही व्यक्ति के द्वारा स्वयं अपनी समझ से लिए जाते हैं। ये निर्णय अधिक शीघ्रता और स्पष्टता के साथ लिए जा सकते हैं।
2. कम योग्य प्रबंधकों से भी पूरा और सही काम लिया जा सकता है क्योंकि उन्हें कोई अलग से नियोजन, संगठन, निर्णयन नहीं करना होता।
3. इस नेतृत्व में कर्मचारियों के काम पर कड़ा नियंत्रण रखा जा सकता है और कोई भी कर्मचारी अपने काम में लापरवाही नहीं कर सकता।
4. प्रबंधकों को अपने कार्य से अधिक संतोष मिलता है क्योंकि वे अपना कार्य अपनी इच्छा एवं रुचि के अनुसार करवा सकते हैं और कर्मचारी उनके आदेश को कर्तव्य समझकर पूरा करते हैं।
5. ऐसे व्यक्तियों के लिए जिनका लालन–पालन, शिक्षा व विकास अलग–अलग प्रबंधकों की कठोर देख रेख में हुआ है, यही नेतृत्व अधिक अच्छा माना जाता है।

- **तानाशाही नेतृत्व के दोष** (Disadvantages of Autocratic Leadership)

1. नेतृत्व की इस शैली में निर्णय के सभी अधिकार केवल एक या कुछ हाथों में केंद्रित रहते हैं। अतः नेता खुलकर अपनी मनमानी करता है।
2. इस प्रणाली में कर्मचारियों का मनोबल गिरा रहता है क्योंकि उन्हें डर और धमकी दी जाती है और उन्हें इसी वातावरण में कार्य करना पड़ता है।
3. कर्मचारी इस नेतृत्व में पूरे जोश और मन से कार्य नहीं करते क्योंकि न तो उनकी सलाह ली जाती है और न ही उन्हें अपने कार्य के बारे में कोई स्वतंत्रता दी जाती है। फलस्वरूप उनकी उत्पादकता सीमित रहती है।
4. तानाशाही नेतृत्व किसी एक नेता के व्यक्तित्व के चारों ओर घूमता है और इसके साये में कोई दूसरा शक्तिशाली व्यक्तित्व नहीं उभरता। फलस्वरूप जब यह व्यक्तित्व नहीं रहता तो प्रबंध की संपूर्ण व्यवस्था चरमरा जाती है।

2. जनतांत्रिक नेतृत्व (Democratic Leadership) – जनतांत्रिक नेतृत्व के अंतर्गत नेता के द्वारा अधिकारों का विकेंद्रीकरण किया जाता है। यह प्रबंधक के विभिन्न कार्यों में अपने अधीनस्थों से सलाह–मशवरा करता है। अधीनस्थों को अपनी पहल क्षमता तथा योग्यता को दिखाने का अवसर प्रदान करता है और अभिप्रेरण के लिए दंड और धमकी के स्थान पर विभिन्न सुविधाओं तथा प्रार्थनाओं का प्रयोग करता है। जनतांत्रिक नेतृत्व की प्रमुख विशेषताएं संक्षिप्त में निम्नलिखित हैं –

1. इस प्रणाली में अधीनस्थों को अपने स्तर के निर्णय स्वयं लेने के अधिकार दिए जाते हैं। प्रबंधक उनके पथ प्रदर्शन के लिए सामान्य नीतियां ही बनाते हैं।

टिप्पणी

2. वे विश्वास करते हैं कि कर्मचारी स्वभाव से कार्य करना चाहते हैं, अपने कार्य में रुचि रखते हैं, उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं और स्वयं पहल करके, दिए गए कार्य को अधिक अच्छे ढंग से करने की योग्यता व इच्छा रखते हैं।
3. नेतृत्व की इस प्रणाली में प्रबंधकों तथा कर्मचारियों के संबंध कम तनावपूर्ण होते हैं क्योंकि उनके बीच विचारों का आदान–प्रदान निरंतर चलता रहता है और वे एक–दूसरे के साथ सहयोग करते हैं।
4. जनतांत्रिक नेतृत्व में प्रबंधकों और कर्मचारियों के बीच विचारों व सुझावों का खुला आदान–प्रदान होता है।
5. इस प्रणाली में कर्मचारी प्रबंधों के साझेदार बन जाते हैं और उनके नेतृत्व में अधिक उत्साह तथा योग्यता के साथ काम करते हैं।
6. इस नेतृत्व में प्रबंधक उन्हें अपने काम के लिए स्वयं उत्तरदायित्व स्वीकार करना सिखाते हैं। वे उनसे आशा करते हैं कि जहा तक हो सके, वे अपने लक्ष्य अपने– आप तय करें इसकी पूर्ति की रिपोर्ट स्वयं बनाएं तथा अपनी प्रगति को उत्तम बनाने के लिए प्रबंधकों को स्वयं सुझाव दें।
7. इस प्रणाली में कर्मचारियों को आर्थिक अभिप्रेरण, जैसे– ऊंचा वेतन भी देते हैं और आत्मिक अभिप्रेरण, जैसे अधिक स्वतंत्रता व अधिकार, अधिक मान व सम्मान आदि दिया जाता है।

जनतांत्रिक नेतृत्व को भी कई भागों में बांटा जा सकता है। लिकर्ट ने इसे दो भागों में विभाजित किया है–परामर्शात्मक नेतृत्व तथा भागीदारी नेतृत्व। परामर्शात्मक नेतृत्व में कर्मचारियों से सुझाव आमंत्रित किए जाते हैं। सही पाने पर उनको प्रयोग में भी लाया जाता है। विचारों का आदान–प्रदान ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर दोनों ओर होता है। कर्मचारी प्रबंध के कार्य में आंशिक रूप से भाग लेते हैं तथा कर्मचारियों को प्रेरित करने के लिए दंड, धमकी, निवेदन तथा सुविधाएं दोनों प्रकार के तरीकों का प्रयोग किया जाता है। भागीदारी नेतृत्व में नेता अपने कर्मचारियों की योग्यता पर जिम्मेदारी और पूर्ण विश्वास रखते है। सभी विषयों में उनसे राय लेते हैं तथा मिलकर निर्णय करते हैं। अभिप्रेरण के लिए आर्थिक तथा अनार्थिक पुरस्कारों का प्रयोग किया जाता है। विचारों का आदान–प्रदान अनौपचारिक भी होता है। कर्मचारियों को प्रबंध के कार्य में भाग लेने का पूरा–पूरा अवसर दिया जाता है।

- **जनतांत्रिक नेतृत्व के लाभ** (Advantages of Democratic Leadership)

1. इस प्रणाली में प्रबंधकों तथा कर्मचारियों दोनों का उत्साह ऊंचा होता है क्योंकि दोनों एक–दूसरे का सहयोग करते हैं और दोनों को ही अपने–अपने कार्य से अधिक संतोष मिलता है।
2. इसमें कुशलता अधिक होती है क्योंकि कर्मचारी प्रबंधकों के निर्देशों तथा उद्देश्यों को अधिक अच्छे ढंग से समझ जाते हैं और उन्हें अधिक उत्साह के साथ पूरा भी करते हैं।
3. जनतांत्रिक नेतृत्व में कर्मचारियों के सक्रिय सहयोग और अधिकारों के व्यापक वितरण के कारण उच्च प्रबंधकों का कार्य भार हल्का हो जाता है और वे अपनी बची हुई शक्ति को संस्था के विकास और विस्तार में लगा सकते हैं।

टिप्पणी

4. प्रबंध के कार्य में सक्रिय रूप से सहायक होने के कारण ये कर्मचारी प्रबंध की जटिलताओं को अधिक निकट से समझ लेते हैं। कर्मचारियों में इन प्रतिभाओं के विकास के कारण, संस्था में स्थिरता बढ़ती है क्योंकि किसी एक शक्तिशाली नेता के चले जाने से संस्था पंगु नहीं बनती।
5. एक संस्था में समय–समय पर तकनीकी, व्यावसायिक या बाजार संबंधी परिवर्तनों के कारण उत्पादन तथा बिक्री की नीतियों, प्रणालियों व कार्यविधियों में कई परिवर्तन करने पड़ते हैं जिन्हें कर्मचारी आसानी से स्वीकार नहीं करते क्योंकि वे उन्हें शक की निगाह से देखते हैं लेकिन जनतांत्रिक नेतृत्व में ऐसा नहीं होता क्योंकि कर्मचारी और प्रबंधक एक–दूसरे की मजबूरियों तथा भावनाओं को अच्छी तरह समझते हैं।

- **जनतांत्रिक नेतृत्व के दोष** (Disadvantages of Democratic Leadership)
  - कई बार जनतांत्रिक नेतृत्व में निर्णय शीघ्रता से नहीं लिए जा सकते क्योंकि अधीनस्थों की सलाह लेना आवश्यक है और वे स्पष्ट नहीं होते या एक मत नहीं होते।
  - प्रबंधक अधीनस्थों को कठिन निर्णयों में शामिल करके अपनी जिम्मेदारी से यह कहकर बचने लगते है कि ये निर्णय अधीनस्थों के निर्णय थे उनके नहीं।
  - कई बार अनेक अधीनस्थ चाहते हैं कि उन्हें सभी आदेश स्पष्ट रूप से दिए जाएं और उन पर कुछ नहीं छोड़ा जाए जिससे वे अपनी जिम्मेदारी से बच सकें। ऐसी स्थिति में जनतांत्रिक नेतृत्व संभव नहीं।
  - जनतांत्रिक नेतृत्व के लिए आवश्यक है कि अधीनस्थ अत्यंत समझदार हो और अपने उत्तरदायित्व को समझें क्योंकि तभी वे प्रबंध की समस्याओं के हल में अपना योगदान दे सकेंगे।

3. स्वतंत्रात्मक नेतृत्व – नेतृत्व की इस प्रणाली के अंतर्गत नेता प्रबंधक के द्वारा अपने उद्देश्यों की व्याख्या अधीनस्थों को करा दी जाती है और उसके बाद अधीनस्थों को बिल्कुल स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है। अधीनस्थ अपने विचार के अनुसार योजना बनाते हैं और उसे लागू करते हैं। प्रबंधक उनको सभी साधन प्रदान करा देता है, उनकी प्रगति की जानकारी रखता है तथा विभिन्न कर्मचारियों के कार्य में आवश्यक तालमेल और समन्वय स्थापित करता है, लेकिन अधीनस्थ निर्णय स्वयं लेते हैं और स्वयं ही क्रियान्वित करते हैं। स्वतंत्रात्मक नेतृत्व की मुख्य विशेषताएं संक्षेप में निम्नलिखित हैं –

1. इस नेतृत्व में प्रबंधक संपूर्ण संगठन में अधिकारों का व्यापक वितरण कर देते हैं जिससे प्रत्येक व्यक्ति को अपने अपने क्षेत्र में अपने लक्ष्य चुनने, उन्हें पूरा करने की योजना बनाने और इस योजना को क्रियान्वित करने के व्यापक अधिकार मिल जाते हैं।
2. प्रबंधक इस पद्धति में अपने अधीनस्थों को पूर्णतया योग्य, सक्रिय साहसी तथा उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति समझते हैं और उसमें पूरा विश्वास रखते हैं।
3. नेतृत्व की इस शैली में प्रबंधक अधीनस्थों को बराबर के साझेदार समझते हैं जिन्हें पूरे अधिकार तथा दायित्व सौंपे जाएं।

टिप्पणी

4. इस प्रणाली में प्रबंधक से संबंधित निर्णय अधीनस्थों के द्वारा स्वयं एक–दूसरे की सलाह से लिए जाते हैं। प्रबंधक केवल इसमें सलाह देते हैं।
5. उच्च प्रबंधक केवल समन्वय, निर्देशन तथा सामान्य नियंत्रण का काम करते हैं।
6. नेतृत्व की इस प्रणाली में अधीनस्थ कर्मचारियों का पर्यवेक्षण व नियंत्रण प्रबंधकों के द्वारा नहीं बल्कि कर्मचारियों के द्वारा स्वयं किया जाता है।
7. इस नेतृत्व में अधीनस्थ अपनी–अपनी जिम्मेदारी को कुशलता के साथ पूरा करने के लिए आपस में निरंतर विचार विनिमय बनाए रखते हैं। यही नहीं, प्रबंधकों तथा अधीनस्थों के बीच विचारों का आदान–प्रदान खुले रूप में चलता रहता है।

- **उपयुक्तता** (Suitability) – स्वतंत्र नेतृत्व निम्नलिखित दशाओं में उपयुक्त माना जाता है –
  1. जब अधिकारों का पर्याप्त प्रत्यायोजन हो गया हो,
  2. कर्मचारी कार्यों से अधिकतम संतुष्ट हों,
  3. कर्मचारी प्रशिक्षित व बुद्धिमान हों,
  4. जहां कर्मचारी अपने दायित्वों को समझते हों,
  5. जहां पर्याप्त अभिप्रेरणा हो।
- **स्वतंत्रात्मक नेतृत्व के लाभ** (Advantages)
  1. उच्च स्तर के प्रबंधकों तथा पेशेवर लोगों का अभिप्रेरण करने में यह प्रणाली बहुत सहायक सिद्ध होती है क्योंकि उन्हें रुचिकर काम भी मिलता है और इस काम को इच्छा के अनुसार बढ़िया करने की स्वतंत्रता भी होती है।
  2. इस नेतृत्व में भी संस्था के विकास और विस्तार की अनेक संभावनाएं बन जाती हैं क्योंकि प्रबंधक अधीनस्थों की चिंता से मुक्त होकर अपना अधिक से अधिक समय इन्हीं कामों में लगा सकते हैं।
  3. स्वतंत्र नेतृत्व में अधीनस्थ कर्मचारी अपना काम स्वयं नियोजित व संगठित करते हैं। फलस्वरूप प्रबंधकों पर उनकी निर्भरता बहुत कम हो जाती है।
- **स्वतंत्रात्मक नेतृत्व के दोष** (Disadvantages)
  1. अधीनस्थों के स्वतंत्र हो जाने पर प्रबंधकों को इनके कामों में तालमेल बैठाना बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि कभी–कभी ये व्यक्ति लक्ष्यों की सफल पूर्ति के लिए दूसरे व्यक्तियों की लक्ष्य पूर्ति में बाधक बन जाते हैं।
  2. इस प्रणाली में प्रबंधक की स्थिति बेमानी हो जाती है क्योंकि न तो वह योजना बनाता है और न ही कोई नियंत्रण करता है। उनका काम तो केवल अधीनस्थों की पुकार पर उनका सहायक बनकर खड़े हो जाना है।
  3. नेतृत्व की यह शैली उच्च स्तर के प्रबंधकों या पेशेवर लोगों के नेतृत्व में तो प्रभावशाली सिद्ध होती है, निम्न स्तर के कर्मचारियों के नेतृत्व में नहीं।

4. नौकरशाही या शासन केंद्रित नेतृत्व (Bureaucratic or Rules Centred Leadership) – नेता का व्यवहार नियमों और प्रक्रियाओं पर विश्वास से प्रभावित होता है। इसमें प्रशासन का कार्य अनिवार्य बनकर रह जाता है। नियमों से विचलित होने

टिप्पणी

की संभावना नहीं होती है तथा अधिकारियों और कर्मचारियों की कोई भागीदारी नहीं होती। कार्य में नये विचारों, शोध और विकास की कोई जगह नहीं होती।

नियमों और औपचारिकताओं पर अति निर्भरता से लाल फीताशाही बनी रहती है। कागजी कार्य ज्यादा होता है। कर्मचारी अपना कार्य भागीदारी की भावना के बिना करते हैं।

5. दक्षतापूर्ण नेतृत्व (Manipulative leadership) – इसमें लक्ष्यों में प्राप्ति के लिए अधिकारियों को कर्मचारियों से दक्षता की प्रवृत्ति से कार्य करवाना होता है। कर्मचारियों की इच्छाओं और अपेक्षाओं का उपयोग किया जाता है। दक्ष नेता अपने कर्मचारियों की इच्छाओं के बारे में संवेदनशील होता है और उनकी जरूरतों को निष्पादन के लिए प्रयोग करता है।

उपयुक्तता (Suitability) – यह अग्र दशाओं में उपयुक्त रहता है –

1. उन संगठनों में जहां समन्वय आवश्यक है और पूर्व का नेता समूह को उचित ढंग से प्रेरित करने में असफल रहा हो।
2. यदि उच्च प्रेरित कर्मचारियों की आवश्यकता परियोजनाओं के लिए हो।
3. यदि अस्थायी लाभांश दिए जाएं और पुरस्कारों का भ्रम हो तथा कर्मचारी लघुकाल के लिए प्रेरित हों।

6. पैतृक नेतृत्व (Paternalistic Leadership) – पैतृक नेतृत्व शैली में नेता कर्मचारियों के पिता के समान हैं। वह कर्मचारियों की एक पिता के समान देखभाल करता है। वह अपने कर्मचारियों को रास्ते दिखाता है। खतरों से रक्षा करता तथा सहायता करता है।

कन्ट्री क्लब प्रबंध (Country Club Management) – यह नेतृत्व अच्छा माना जाता है क्योंकि इसमें कार्मिक वर्ग की आवश्यकतायें एवं उनकी सलाह को उत्पादन से अधिक महत्व दिया जाता है। यह नेतृत्व 10 प्रतिशत उत्पाद के लिए तथा 90 प्रतिशत लोगों के लिए है। प्रबंध यह मानता है कि यदि कर्मचारियों को उचित अवसर एवं प्रेरणा दी जाए तो वे कार्य करने एवं उत्तरदायित्व लेने में समर्थ होते हैं। कर्मचारियों की गलतियों को गंभीरता से नहीं लिया जाता। कर्मचारी द्वारा संगठन को एक क्लब की भांति माना जाता है। कर्मचारियों की निर्णयन में अधिक भागीदारी के कारण वे अधिक संतुष्ट रहते हैं तथा उच्च परिणाम देते हैं।

7. उत्पादन प्रेरित नेतृत्व (Production Oriented Leadership) – उत्पादन प्रेरित नेतृत्व की प्रणाली फीडलर ने प्रस्तुत की। इस प्रणाली के अंतर्गत काम तथा उत्पादन को अधिक महत्व दिया जाता है। उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से सभी आवश्यक कार्य किए जाते हैं। यद्यपि इस प्रणाली में कर्मचारियों को कुछ सुविधायें भी दी जाती हैं, लेकिन उनका उद्देश्य उत्पादकता एवं उत्पादन बढ़ाना होता है। उत्पादन प्रेरित नेतृत्व की मुख्य विशेषतायें संक्षेप में निम्नलिखित हैं –

1. नेतृत्व की इस शैली में प्रबंधकों तथा कर्मचारियों के संबंध संगठन के ढांचे में ढले संबंधों तक सीमित रहते हैं। विचारों व आदेशों का आदान–प्रदान भी उसी श्रृंखला (Chain) में किया जाता है और काम को करने के नियम भी पहले से तय होते हैं।

टिप्पणी

2. उत्पादन की विधि को सरल तथा प्रमापित बनाया जाता है, काम करने के निश्चित मापदंड स्थापित किए जाते हैं, काम करने की दशाओं में सुधार किया जाता है और कर्मचारियों को अधिक उत्साह के साथ काम करने के लिए अधिक पारिश्रमिक का लालच भी दिया जाता है।

3. कर्मचारियों की उत्पादकता ऊंची होती है लेकिन उनका मनोबल इतना ऊंचा नहीं होता क्योंकि वे अपने आपको न तो उपक्रम के साथ जोड़ पाते हैं और न प्रबंधक के साथ।

8. मानवीय संबंध प्रेरित नेतृत्व (Human Relations Oriented leadership) – मानवीय संबंध प्रेरित नेतृत्व की प्रणाली के अंतर्गत प्रबंधक अधीनस्थों का नेतृत्व और निर्देशन करते हैं, उसकी सुविधाओं का पूरा ध्यान रखते हैं उनके सुझावों और विचारों को भी सुना जाता है तथा उनकी प्रतिभाओं के विकास के लिए प्रयास किया जाता है। इस नेतृत्व की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

(अ) इस प्रणाली में कर्मचारियों को न केवल वर्तमान कार्य को अधिक से अधिक कुशलता के साथ करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है बल्कि उनकी विशिष्ट प्रतिभाओं को समझकर उन्हें चमकने का अवसर भी दिया जाता है।

(ब) इस शैली में प्रबंधक अपने अधीनस्थों को पुरस्कार के लालच से अभिप्रेरित करता है दंड के भय से नहीं। अतः इस प्रणाली में दंड का भय नहीं होता बल्कि पुरस्कार का लालच अवश्य होता है। साथ ही कर्मचारियों के उत्साह और सहयोग को अधिक बनाने के लिए प्रबंधक उन्हें प्रबंध संबंधी निर्णयों में सलाहकार भी बनाता है और उनके सुझावों तथा विचारों को ध्यान से सुनता है।

(स) इस प्रणाली में कर्मचारियों के साथ मानवोचित व्यवहार करने का सुझाव दिया जाता है। इसमें कर्मचारियों की व्यक्तिगत भिन्नताओं को भी समझा जाता है और उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर भी ध्यान दिया जाता है।

9. अव्यक्तिगत नेतृत्व (Impersonal Leadership) – इस नेतृत्व की स्थापना प्रत्यक्ष रूप से नेताओं व उपनेताओं के अधीन कर्मचारियों के माध्यम से होती है। इसमें लिखित बातें, जैसे–समस्त निर्देश, आदेश, योजनाएं आदि होती हैं।

10. व्यक्तिगत नेतृत्व (Personal Leadership) – इसकी स्थापना व्यक्तिगत संबंधों के आधार पर होती है। ऐसा नेता किसी कार्य के निष्पादन के संबंध में निर्देश व्यक्तिगत रूप में देता है। यह नेता अधिक प्रभावी होता है इसमें नेता के बौद्धिक ज्ञान का विशेष महत्व होता है।

11. संस्थात्मक नेतृत्व (Institutional Leadership) – इस नेता को अपने पद के प्रभाव से उच्च स्थिति प्राप्त होती है। वह अपने अनुयायियों को प्रभावित करने की स्थिति में होता है। उदाहरण के लिए, उच्च पदों पर स्थित लगभग सभी अधिकारियों का अपने अनुयायियों का एक विशिष्ट समूह होता है जिसे वे हर संभव तरीकों से सहयोग प्रदान करते हैं।

12. देशी नेतृत्व (Indigenous Leadership) – इसका उद्‌गम औपचारिक सामाजिक समूहों द्वारा होता है। वे व्यक्तियों के कार्यों में समन्वय स्थापित करते हैं।

नेता तथा शक्ति की राजनीति (Leader and Power Politics)

टिप्पणी

अपनी प्रकृति से एक नेता शक्ति तथा राजनीति से व्यवहार करता है। शक्ति (power) अन्य लोगों तथा घटनाओं को प्रभावित करने की योग्यता है। यही वह तरीका है जिसमें एक नेता दूसरों पर अपना प्रभाव स्थापित करता है। यह अधिसत्ता (Authority) से भिन्न होती है। अधिसत्ता का संगठन में वरिष्ठ से कनिष्ठ को भारार्पण होता है। लेकिन दूसरी ओर शक्ति अपने व्यक्तित्व, गतिविधियों तथा उस परिस्थिति के आधार पर एक नेता द्वारा अर्जित तथा प्राप्त की जाती है जिसमें वह काम करता है।

राजनीति उन तरीकों से संबंधित होती है जिसमें एक नेता शक्ति पाता है तथा उसको काम लाता है। यह राजनीति के ही कारण संभव होता है कि एक नेता घटनाओं तथा लोगों पर नियंत्रण पाने में समर्थ हो पाता है। राजनीति शक्ति के संतुलनों (balances of power), समझौतों (Compromises) तथा अनेक प्रकार की दूसरी गतिविधियों से संबंधित होती है।

नेता की शक्ति के स्रोत (Sources of leader's power)– राजनीति में आम व्यक्तियों या ग्रुपों पर किसी न किसी प्रकार के दबाव या शक्ति के उपयोग का समावेश होता है। नेता शक्ति के निम्न स्रोतों का उपयोग करते हैं–

1. **व्यक्तिगत शक्ति** (Personal Power) – इसको संदर्भ शक्ति (referent power), अद्‌भुत शक्ति (charismatic power) तथा व्यक्तित्व की शक्ति (power of personality) भी कहा जाता है तथा यह स्वयं लीडर से ही आती है। यह अपने व्यक्तित्व की ताकत पर अनुयायी (Followers) विकसित करने के लिए लीडर की योग्यता होती है। महात्मा गांधी में प्रचुर व्यक्तिगत ताकत थी जिसके कारण भारत की आजादी पाने के लिए करोड़ों लोग उनके पीछे–पीछे आ गए थे यहां तक कि बापू के शहीद होने के पचासों साल बाद भी लोग उनके आदर्शों का पालन करते हैं।

2. **वास्तविक शक्ति** (Legitimate Power) – यह पदस्थिति की ताकत (position power) तथा औपचारिक शक्ति (official or formal power) भी कहलाती है। यह संगठन में अधिसत्ता की पदस्थिति धारण करने पर आधारित होती है। उच्च पदस्थिति के कारण अधिकारीगण अधीनस्थों से अपने आदेशों की तामील करा पाते हैं। वास्तविक ताकत लीडर को संसाधनों पर नियंत्रण पाने तथा दूसरों को पुरस्कृत या दंडित करने की व्यवस्था करती है। अधीनस्थ इस शक्ति को स्वीकार कर लेते हैं क्योंकि उनको विश्वास होता है कि यह संगठन में व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक तथा वांछनीय हैं।

3. **विशेषज्ञ शक्ति** (Expert Power) – यह दक्षता या ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्र से उभरती है। अतः इसको ज्ञान की अधिसत्ता (authority of knowledge) भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए एक डॉक्टर की अपने मरीजों पर विशेषज्ञ शक्ति होती है। इस शक्ति का उपयोग इस विश्वास पर आधारित होता है कि प्रभावधारक जैसे डॉक्टर के पास एक ऐसी दक्षता है जिसकी प्रभावगृहीता जैसे मरीज को जरूरत है। यह शिक्षा, प्रशिक्षण तथा अनुभव पर निर्भर करती है।

4. **राजनैतिक शक्ति (**Political Power**)** – यह एक ग्रुप के समर्थन से आती है। यह अपनी संबद्धता तथा समर्थन पाने के लिए सामाजिक तंत्र तथा लोगों के साथ काम करते लीडर की योग्यता से उभरती है जब संगठनात्मक वातावरण अनिश्चित होते

टिप्पणी

हैं। राजनैतिक शक्ति पाने के लिए अनेक हथकंडे अपनाये जाते हैं, जैसे–सामाजिक आदान–प्रदान या ट्रेड आफ्स, सूचनाओं का नियंत्रण, गठजोड़ (Alliance), नेटवर्क, सहयोग, दबाव आदि। विशेषतः प्रभावशाली लोगों के साथ मजबूत अंतः व्यैक्तिक संबंध एक राजनैतिक आधार बनाने के लिए जरूरी होते हैं। लीडर को अपने प्रभाव के क्षेत्र तथा स्तर को बढ़ाने के लिए शक्ति के सभी आधारों का प्रयोग करना चाहिए।

4.3.2 नेतृत्व के विविध सिद्धांत

नेतृत्व के महत्व को ध्यान में रखते हुए इस पर अनेक शोध हुए हैं। सभी शोध विचारों को प्रस्तुत करना असंभव है। हम यहां महत्वपूर्ण नेतृत्व दृष्टिकोणों का वर्णन कर रहे हैं–

नेतृत्व का गुणमूलक सिद्धांत (Trait Theory of Leadership)

1949 ई. से पूर्व नेतृत्व के सभी अध्ययन बड़ी मात्रा में उन चातुर्यों को पहचानने के प्रयास मात्र रहे जो एक नेता में होते हैं। महान व्यक्ति की विचारधारा (नेता जन्मजात होते हैं, उनको बनाया नहीं जाता) से प्रेरित होकर, प्राचीन ग्रीक एवं रोमन व्यक्तियों ने भूतकाल में यह विश्वास विकसित किया तथा विभिन्न नेताओं की शारीरिक, मानसिक एवं व्यक्तित्व संबंधी विशेष गुणों के बारे में जांच–पड़ताल की तथा यह ''महान व्यक्ति'' की विचारधारा का सिद्धांत, मनोविज्ञान की व्यवहारात्मक शाखा के प्रभाव के बढ़ने के साथ–साथ अपनी मान्यता खो बैठा। व्यवहारात्मक शाखा इस बात पर बल देती थी कि व्यक्ति जन्मजात प्रतिभा के धनी नहीं होते, उनको उत्तराधिकार में केवल शारीरिक गुण या अच्छे स्वास्थ्य की प्रवृत्तियां ही मिल पाती हैं। इस सिद्धांत के अनुसार नेतृत्व में सफलता प्राप्त करने के लिए एक नेता में अनेक व्यक्तिगत गुणों का होना आवश्यक है और जिस व्यक्ति में ये गुण होंगे, वह सदैव एक सफल नेता सिद्ध होगा। आर्डवे टीड (Ordway Tead) तथा चेस्टर बर्नार्ड (Chestar Bernard) इस सिद्धांत के प्रमुख प्रवर्तक रहे हैं। इन विद्वानों के मतानुसार नेतृत्व वास्तव में एक कला है और एक नेता के रूप में सफलता, कुछ गुण एवं विशेषताएं रखने का परिणाम है। उदाहरणार्थ, टीड के मतानुसार नेता वही व्यक्ति हो सकता है जिसमें निम्न दस लक्षण हैं–

1. शारीरिक शक्ति, 2. उद्देश्य के प्रति निष्ठा, 3. अपूर्व साहस व लगन, 4. स्नेह व मैत्रीपूर्ण व्यवहार, 5. व्यक्तित्व, 6. तकनीकी दक्षता, 7. शीघ्र निर्णय करने की दक्षता, 8. योग्यता, 9. सिखाने की क्षमता, और 10. विश्वास।

चेस्टर बर्नार्ड ने एक सफल नेता में निम्न गुण बताए हैं –

(1) निर्णायकता (Decisiveness),

(2) उत्तरदायित्व (Responsibility),

(3) अनुभूति (Persuasiveness),

(4) बौद्धिक क्षमता (Intellectual Capacity),

(5) स्फूर्ति एवं सहनशीलता (Vitality and Endurance),

(6) सामाजिक चेतना (Social Consciousness),

(7) अच्छा व्यक्तित्व (Good Personality)।

टिप्पणी

पीटरसन तथा प्लाउमैन (Peterson and Plowman) ने नेतृत्व के गुणों को बड़े ही सुंदर ढंग से निम्न तीन भागों में विभाजित किया है –

(1) शारीरिक गुण (Physical Qualities)

(2) बौद्धिक गुण (Intellectual Qualities)

(3) मनोवैज्ञानिक गुण (Psychological Qualities)

आधुनिक काल में भी इस प्रकार के अध्ययन किए गए हैं। स्टोगडिल (Stogdil) ने पाया कि नेतृत्व संबंधी पांच शारीरिक गुण, जैसे–शक्ति, व्यक्तित्व एवं कद काठी, बुद्धिमानी एवं योग्यता के चार गुण, व्यक्तित्व संबंधी 6 गुण, जैसे–ग्राह्यता, आक्रामकतापूर्ण रुख, उत्साहपूर्णता तथा आत्मसंयम, कार्य संबंधित 6 लक्ष्य, जैसे–प्राप्ति की चाह, निरंतरता एवं पहल करने की भावना तथा 9 सामाजिक लक्ष्य, जैसे, सहयोगिता, अंतः व्यक्तिगत चातुर्य तथा प्रशासनीय योग्यता आदि का विभिन्न शोध परिचय कराते हैं।

आलोचना (Criticism) – सामान्यतः नेतृत्व की विवेचना में नेता के व्यक्तिगत गुणों का अध्ययन विशेष उपयोगी सिद्ध नहीं हुआ है। सभी नेता सभी गुणों एवं चातुर्य के धनी नहीं होते तथा अनेक व्यक्ति नेता गुणों से विहीन होते हैं। गुण मूलक नेतृत्व का सिद्धांत न तो नेतृत्व के गुणों की कोई पूर्ण और अधिकृत सूची प्रदान करता है क्योंकि भिन्न–भिन्न लेखक भिन्न–भिन्न गुणों का वर्णन करते हैं और न ही उनके आधार को वैज्ञानिक मान्यता प्रदान करता है, क्योंकि नेतृत्व के गुणों की पहचान के लिए भिन्न–भिन्न लेखकों ने भिन्न–भिन्न नेताओं का आधार चुना है और उनके गुणों का अपनी बुद्धि से मनमाना विश्लेषण किया है। यह आवश्यक नहीं है कि नेतृत्व के गुण केवल नेता में ही पाए जाएं। यह भी संभव है कि बहुत से दूसरे व्यक्ति भी इन गुणों के समान रूप से धनी हों लेकिन अवसर के अभाव में नेता न बन पाए हों। यदि एक बार को मान भी लिया जाए कि नेतृत्व की सफलता के लिए कुछ व्यक्तिगत गुण अनिवार्य हैं तो नेतृत्व का यह सिद्धांत यह स्पष्ट नहीं करता कि नेतृत्व में सफलता के लिए एक नेता में ये गुण किस–किस मात्रा में उपलब्ध होने चाहिए।

नेतृत्व का व्यवहारात्मक सिद्धांत

नेतृत्व की इस विचारधारा के प्रवर्तक रे ए. किलियन (Ray A. Killian) हैं। उनके अनुसार, एक नेता मूल रूप से चाहे निर्णय लेने वाला हो, समस्याओं का समाधान करने वाला हो, परामर्शदाता हो, सूचना प्रदान करने वाला हो या नियोजक हो उसे अपने अनुयायियों के समक्ष आदर्श आचारण प्रस्तुत करना चाहिए। आदर्श आचरण अर्थात अच्छे व्यवहार के अभाव में वह कभी भी सफल नेता नहीं बन सकता। इस प्रकार यह विचारधारा नेता के आचरण या व्यवहार को सबसे अधिक महत्व देती है। यदि नेता स्वयं अनुशासन में नहीं रहता और वह अपने अनुयायियों से अनुशासन में रहने की आशा करता है तो उसकी यह आशा व्यर्थ है। उदाहरणार्थ, यदि एक व्यक्ति स्वयं शराबी है और वह अपने अनुयायियों से यह आशा करे कि वे शराब का सेवा न करें तो उसकी यह आशा निराधार होगी। अतः किसी नेता की सफलता का मूल्यांकन उसके व्यवहार का विश्लेषण करके किया जा सकता है।

टिप्पणी

नेतृत्व की व्यवहारात्मक विचारधारा निम्न मान्यताओं पर आधारित है :

(1) नेता जन्म नहीं लेते अपितु विकसित किए जाते हैं।

(2) नेतृत्व नेता के व्यवहार एवं कार्यों का परिणाम है।

(3) ये विचारधाराएं नेता क्या करते हैं 'को अधिक महत्व देती हैं' 'नेता क्या है' को नहीं।

(4) यह विचारधारा 'व्यवहार सीखा हुआ होता है' की धारणा पर आधारित है।

(5) यह विचारधारा नेता के परिचयांकन (Identification) अभिमुखता (Orientation) एवं मनोवृति (Attitude) पर ध्यान देती है।

(6) नेतृत्व की सफलता के लिए विशेष प्रकार का व्यवहार होना अनिवार्य है।

(7) प्रभावी नेतृत्व बहुआयामी होता है तथा उसका व्यवहार स्थिति के अनुसार बदलता है।

(8) इस विचारधारा के अनुसार नेता का कार्य चार तत्वों से प्रभावित होता है। (अ) नेता (ब) अनुयायी (स) लक्ष्य, और (द) वातावरण। ये चारों तत्व एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए नेता के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

नेतृत्व की प्रमुख व्यवहारात्मक विचारधाराएं निम्नलिखित हैं–

1. ओहियो स्टेट नेतृत्व अध्ययन (Ohio State Leadership Studies) – 1945 में अमेरिका के ओहियो स्टेट विश्वविद्यालय के 'ब्यूरो ऑफ बिजनेस रिसर्च' ने नेतृत्व पर अनेक अध्ययन किए थे। विभिन्न प्रकार के समूहों तथा स्थितियों में नेतृत्व के अध्ययन हेतु 'नेता व्यवहार विवरण प्रश्नावली' का प्रयोग किया गया था। ओहियो स्टेट नेतृत्व अध्ययन का मुख्य विषय 'समूह लक्ष्यों की ओर दूसरों के प्रयासों को निर्देशित करने में नेता का व्यवहार' था। पर्याप्त अध्ययनों के बाद नेता व्यवहार के निम्न दो आयाम स्पष्ट हुए–

(1) **संरचना प्रवर्तन** (Initiating Structure) – यह वह स्थिति है जिसमें नेता लक्ष्यों, संगठन प्रारूप, कार्य शैलियों, संचार–श्रृंखला, भूमिकाओं और कार्यविधियों का निर्धारण व स्पष्टीकरण करते हैं। वे कार्य संरचना का निर्माण भी करते हैं।

(2) **हित या संबंध** (Consideration) – यह वह स्थिति है जिसमें नेता अपने अधीनस्थों के साथ हितकारी संबंध बनाने की ओर ध्यान केन्द्रित करते हैं। ये संबंध पारस्परिक विश्वास, सम्मान व भावनाओं के प्रति निष्ठा पर निर्भर करते हैं। इसमें नेता कार्य की तुलना में सौहार्दपूर्ण संबंधों व मनोभावों पर विशेष ध्यान देता है।

ओहियो स्टेट विश्वविद्यालय के शोध केन्द्र के अनुसार नेतृत्व चार परिस्थिति संबंधी तत्वों पर निर्भर करता है–

1. **सांस्कृतिक वातावरण** (Cultural Environment) – अर्थात समुदाय में काम करने वाले लोगों के द्वारा स्वीकार किए गए सामाजिक व सामान्य विश्वास, मूल्य तथा विचार जो तार्किक विचारों को अव्यावहारिक बना दें।

2. **भिन्न–भिन्न व्यक्तियों के बीच अंतर** (Differences between Individulas) – भिन्न–भिन्न उन्मुखताएं (aptitudes), व्यक्तित्व संबंधी विशेषताएं, शारीरिक विशेषताएं,

रुचियां और अभिप्रेरणाएं, शिक्षा, अनुभव व प्रशिक्षण आदि भिन्न–भिन्न किस्म के व्यक्ति नेतृत्व की मांग कर सकते हैं।

टिप्पणी

3. **कार्यों की विभिन्नता** (Differences between Jobs) – मानसिक स्तर, दायित्व, भूमिका प्रशिक्षण तथा भिन्न–भिन्न कार्यों की दशाएं नेतृत्व की भिन्न–भिन्न शैलियों की मांग करती हैं।

4. **संगठनों की विभिन्नता** (Differences between Organizations) – संगठन अपने आकार, प्रकार, स्वरूप, उद्देश्य, प्रबंध प्रणाली के अनुसार भिन्न–भिन्न हो सकते हैं और उनमें भिन्न–भिन्न प्रकार के नेतृत्व की आवश्यकता पाई जा सकती है, जैसे– एक सैनिक या सरकारी संगठन में व्यावसायिक संगठन से भिन्न प्रकार का नेतृत्व आवश्यक होता है।

फीडलर का नेतृत्व – आकस्मिकता सिद्धांत

नेतृत्व के परिस्थितिमूलक सिद्धांत से यह निष्कर्ष निकलता है कि नेतृत्व में कोई भी शैली (style) सभी परिस्थितियों में सफल नहीं हो सकती। इस दृष्टिकोण के आधार पर फीडलर (Feidler) ने आकस्मिकता की विचारधारा का सुझाव दिया। फीडलर के अनुसार नेतृत्व की प्रभावशीलता न केवल नेता के व्यक्तिगत गुणों पर निर्भर करती है बल्कि संगठन में नेतृत्व के बने वातावरण पर भी बहुत कुछ निर्भर करती है। समुदाय की कार्य सफलता नेतृत्व शैली और नेता के लिए सामूहिक परिस्थिति के अनुकूल स्थिति के उचित मिलान पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में, नेतृत्व एक प्रक्रिया है जिसमें नेता के प्रभाव का प्रयोग करने की योग्यता, सामूहिक कार्यगत परिस्थितियों पर निर्भर होती है तथा नेता की अपनी शैली, व्यक्तिगत दूरदर्शिता समूह को क्रियाशील रखती है। इस दृष्टि से हमें नेता की शैली और विभिन्न स्थितियों की जानकारी होनी चाहिए।

फीडलर के अनुसार एक प्रबंधक इस मिलान (fit) को निम्न प्रकार बना सकता है –

(i) अपनी नेतृत्व शैली को समझकर,

(ii) परिस्थिति का विश्लेषण करके तथा

(iii) अपनी नेतृत्व शैली को परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित करके।

(अ) अपनी शैली को परिस्थिति में जोड़कर; अथवा

(ब) परिस्थिति में अपनी शैली के अनुरूप परिवर्तन करके।

वस्तुतः इस मॉडल के उपर्युक्त तीन चरण हैं। फीडलर ने अपनी विचारधारा में दो विचारधाराओं – गुणमूलक (trait) तथा परिस्थितिक (situational) को सम्मिलित किया है। फीडलर नेतृत्व शैली तथा परिस्थिति की अनुकूलता में संबंध स्थापित करते हैं। फीडलर की प्रक्रिया निम्न तीन चरणों में विभक्त है –

(1) अपनी स्वयं की नेतृत्व शैली अथवा 'नेतृत्व गुण' का ज्ञान (understand your own leadership style or the leader trait) – फीडलर ने नेताओं से उनके ''न्यूनतम अधिमत सह–श्रमिक'' (Least Preferred Co-worker-LPC) के विषय

टिप्पणी

में जानकर उनके गुणों का मापन किया था। "LPC" का आशय 'नेताओं द्वारा अपने निकृष्ट सह–श्रमिकों (अनुयायियों) को भी अनुकूल दृष्टि से देखने की सीमा है। जिस नेता का LPC अंक उच्च होता है वह संबंध–अभिमुखी (relationship-oriented) होता है। LPC अंक कम होने की दशा में वह कार्य–अभिमुखी होता है।

(2) परिस्थिति का विश्लेषण अथवा 'पारिस्थितिक घटक' (Analyse the Situation or the Situational Factor) – नेता के लिए कुछ परिस्थितियां अन्य की अपेक्षा अधिक अनुकूल होती हैं। फीडलर के अनुसार, पारिस्थितिक अनुकूलता से आशय उस सीमा से है जिस तक एक नेता समूह पर नियंत्रण एवं प्रभाव रखता है तथा यह अनुभव करता है कि वह समूह अन्तर्व्यवहार के परिणाम निर्धारित कर सकता है। परिस्थिति की अनुकूलता निम्न तीन कारकों द्वारा निर्धारित होती है –

(i) **नेता–अनुयायी संबंध** (Leader-Follower Relations) – नेता को अनुयायियों द्वारा किस सीमा तक स्वीकार किया जाता है तथा वे नेता के प्रति कितनी निष्ठा रखते हैं।

(ii) **कार्य संरचना** (Task Structure) – वह सीमा जिसमें कार्य के लक्ष्यों, निष्पादन शैलियों, दायित्व, आदि को परिभाषित किया जाता है।

(iii) **पद सत्ता** (Position Power) – नेता को अपनी औपचारिक पद–स्थिति से कितनी सत्ता प्राप्त है।

(3) नेता–परिस्थिति का मिलान (Leader-Situation Match) – नेतृत्व शैली या नेता के गुणों एवं परिस्थिति में कई बार मिलान हो जाता है, दोनों में एक अच्छा समायोजन हो जाता है। ऐसी स्थिति में नेतृत्व प्रभावी होता है। फीडलर का मत है कि ''परिस्थिति की अनुकूलता नेतृत्व शैली के संयोजन से मिलकर नेतृत्व की प्रभावशीलता को निर्धारित करती है।''

फीडलर ने नेतृत्व की शैलियों को दो वर्गों में बांटा है – उत्पादन–प्रेरित शैली तथा मानवीय संबंध प्रेरित शैली। उत्पादन प्रेरित शैली के अंतर्गत अधीनस्थों के काम का संरक्षण व निर्देशन इस प्रकार से किया जाता है जिससे कार्य तथा दृष्टिकोण को अधिक महत्व मिलता है, जबकि मानवीय संबंध प्रेरित शैली में मानवीय व्यवहार पर अधिक ध्यान दिया जाता है। प्रबंधक कर्मचारियों को अभिप्रेरित करता है। उनका सहयोग और विश्वास प्राप्त करता है।

1. पद की शक्ति (Position Power) – पद की शक्ति किसी नेता को उस पद पर आसीन होने के कारण संगठनात्मक अधिकार के अंतर्गत प्राप्त होती है। इस शक्ति के आधार पर एक नेता अपने अनुयायियों को निश्चित निर्देशों के अनुसार कार्य करने के लिए विवश एवं बाध्य कर सकता है।

2. कार्य संरचना (Task Structure) – फीलडर के अनुसार कार्य संरचना सुनिश्चित तथा अनिश्चित हो सकती है। सुनिश्चित कार्य संरचना के कार्य का वर्गीकरण स्पष्ट नहीं होता, जिसके कारण किसी निश्चित व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

टिप्पणी

3. नेता–सदस्य संबंध (Leader-Member Relations) – नेता तथा सदस्यों के बीच सहयोग, विश्वास और समझ की क्या स्थिति है? यह तथ्य परिस्थिति को प्रभावित करता है और कार्य–शैली पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

फीडलर ने उपरोक्त दृष्टिकोणों के आधार पर नेतृत्व की शैलियों के प्रयोग की बात कही है। इस संबंध में फीडलर ने एक मॉडल प्रस्तुत किया है जिसे निर्णय की दृष्टि से निम्न प्रकार से भी वर्गीकृत किया जा सकता है –

	नेता अनुयायी संबंध	कार्य का ढांचा	पद से मिली शक्ति	नेतृत्व की शैली
1.	मधुर	सुनिश्चित	सुदृढ़	कार्य या उत्पादन प्रणत शैली
2.	मधुर	सुनिश्चित	दुर्बल	मानव संबंध प्रणत शैली
3.	मधुर	अनिश्चित	सुदृढ़	मानव संबंध प्रणत शैली
4.	मधुर	अनिश्चित	दुर्बल	मानव संबंध प्रणत शैली
5.	कमजोर	निश्चित	सुदृढ़	मानव संबंध प्रणत शैली
6.	कमजोर	निश्चित	दुर्बल	मानव संबंध प्रणत शैली
7.	कमजोर	निश्चित	सुदृढ़	मानव संबंध प्रणत शैली
8.	कमजोर	निश्चित	दुर्बल	कार्य या उत्पादन प्रणत शैली

इस विचारधारा के अनुसार एक कार्य–अभिमुखी नेता संबंध–अभिमुखी नेता उच्च या निम्न नियंत्रण की दशा में बेहतर ढंग से कार्य कर सकता है। संबंध–अभिमुखी नेता मध्यम नियंत्रण परिस्थिति में अच्छा कार्य कर सकता है।

परिस्थितिजन्य घटक	अच्छा नियंत्रण	मध्यम नियंत्रण	निम्न नियंत्रण
नेता सदस्य संबंध	अच्छा	तटस्थ	कमजोर
कार्य संरचना	उच्च	मध्यम	निम्न
स्थिति शक्ति	सुदृढ़	मध्यम	दुर्बल

- **फीलडर विचारधारा में नियंत्रण स्थितियां** (Control Situations in Fielder Theory)

  1. **उच्च नियंत्रण परिस्थिति** (High Control Situation) – कार्य अभिप्रेरित नेता शान्त होना चाहिए ताकि अपने सदस्यों तथा संगठन दोनों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके।

टिप्पणी

2. **मध्य नियंत्रण स्थिति** (Moderate Control Situation) – संबंध अभिप्रेरित नेता इस स्थिति में बेहतर कर पाते हैं क्योंकि वे अपने उद्देश्य को अंतर–व्यक्तिगत योग्यता से पूरा करने की योग्यता रखते हैं। वे सदस्यों की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होते हैं तथा दूसरों को प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए अभिप्रेरित करते हैं एवं जटिल समस्याओं को सुलझाने के लिए अलग–अलग दृष्टिकोणों पर विचार करते हैं।

3. **निम्न नियंत्रण परिस्थिति** (Low Control Situation) – इस परिस्थिति में नेता कर्मचारियों को उस दिशा को प्रदान करने में सक्षम होने चाहिए, जो वह चाहते हैं। परिस्थितियों के ज्यादा अव्यवस्थित हो जाने पर लोग अंतर व्यक्तिगत पसंद या नापसंद की तुलना में दिशा तथा नेतृत्व से ज्यादा संबंध रखते हैं।

- **लाभ** (Advantages) – इसके लाभ अग्रवत हैं –

1. यह तीन घटकों की ओर ज्यादा ध्यान देती है – नेता, परिस्थिति एवं अधीनस्थ।
2. लोचशीलता के कारण यह नेतृत्व के क्षेत्र में पहले से अधिक सुधार को प्रदर्शित करती है।

- **हानियां** (Disadvantages) – ये अग्रवत हैं –

1. इस मॉडल में शामिल बहुत से घटकों का अर्थ स्पष्ट नहीं है।
2. आकस्मिक मॉडल सिद्धांत अभिमुखी नहीं है क्योंकि यह खोजी आंकड़ों के आधार पर तैयार किया जाता है।
3. नेता तथा अधीनस्थ की योग्यता पर ध्यान नहीं दिया जाता। यह सिद्धांत यह कल्पना करता है कि नेता एवं उसके अधीनस्थ के पास पर्याप्त क्षमता है।

फीडलर का आकस्मिक मॉडल प्रबंधकों के बारे में अनेक बातों का वैज्ञानिक ढंग से वर्णन करता है। लेकिन इसकी आलोचना भी की गई है। आलोचकों का कहना है कि फीडलर ने नेतृत्व की केवल दो शैलियों का वर्णन किया है, जबकि इनकी अनेक शैलियां व्यवहार में प्रयोग में लाई जा सकती हैं।

हार्से और बलाकंड प्रवर्तित नेतृत्व का परिस्थितिमूलक सिद्धांत

अनेक अध्ययन इस विश्वास को लेकर चले हैं कि नेतृत्व पर उन परिस्थितियों का व्यापक प्रभाव पड़ता है, जिनमें नेता उभरा है और जिन परिस्थितियों में उसको संचालन करना पड़ता है। उन परिस्थितियों में उनकी यह विचारधारा सही ही जान पड़ती है जिसकी पुष्टि में कुछ उदाहरण हैं, जैसे–1930 के दशक में जर्मनी में हिटलर का उदय हुआ, इससे भी पूर्व इटली में मुसोलनी नेता के रूप में उभरा तथा 1930 की आर्थिक मंदी में रूजवेल्ट अमेरिका में उदय हुआ और द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की अवधि में चीन में माओत्से तुंग का उदय हुआ। कीथ डेविस (Keith Devis) के शब्दों में, ''नेतृत्व परिस्थितिमूलक होता है।'' भिन्न समस्याएं, भिन्न समुदाय, एक ही समुदाय में भिन्न–भिन्न विचार, केवल कुछ ऐसे प्रभाव हैं जो भिन्न–भिन्न नेतृत्व की मांग करते हैं। एक परिस्थिति में नेतृत्व के गुणों का योग 'ए' (A) में सर्वश्रेष्ठ हो सकता है ओर दूसरी

परिस्थिति में गुणों का यह योग 'बी' (B) में अधिक श्रेष्ठ हो जाता है। कीथ डेविस के अनुसार नेतृत्व के चार परिस्थिति संबंधी चल तत्व हैं– (1) नेता के गुण, (2) अनुयायियों की आवश्यकताएं, (3) समुदाय के उद्देश्य जिनकी प्राप्ति के लिए नेतृत्व चाहिए, तथा (4) कार्य का वातावरण जिसमें रहकर काम किया जाएगा।

टिप्पणी

नेतृत्व के परिस्थितिमूलक दृष्टिकोण (Situational Approach) की निम्न प्रमुख विशेषताएं हैं–

(i) यह दृष्टिकोण मानता है कि ''नेता दी हुई परिस्थितियों की उपज अथवा परिणाम होते हैं।" (Leaders are the products of given situations) अन्य शब्दों में, ''नेता परिस्थितियों से ही जन्म लेते हैं।" (Leader emerges out of situations.)

(ii) नेता, समूह तथा वातावरण के मध्य निरंतर एक अन्तर्व्यवहार चलता रहता है।

(iii) अनुयायी उस व्यक्ति को नेता मानते हैं जिसे वे अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि के साधन के रूप में देखते हैं।

(iv) इस दृष्टिकोण की मान्यता है कि नेतृत्व की कोई भी प्रणाली सदैव सभी परिस्थितियों में उपयुक्त नहीं होती है। नेतृत्व की कोई भी शैली अपने–आप में सर्वोत्तम नहीं होती है। अतः प्रत्येक नेता को अपने वातावरण के अनुरूप ही नेतृत्व शैली का चयन करना चाहिए।

(v) इस दृष्टिकोण में मुख्य बल ''दृष्टिगत व्यवहार'' (observed behaviour) पर होता है, जन्मजात अथवा प्राप्त योग्यता या नेतृत्व की अंतःक्षमता पर नहीं।

(vi) नेतृत्व की प्रकृति सदैव परिस्थितिगत होती है।

(vii) यह दृष्टिकोण बतलाता है कि प्रत्येक प्रबंधक को बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप अपनी नेतृत्व शैलियों का समायोजन करना आना चाहिए। इस प्रकार शिक्षा, प्रशिक्षण एवं विकास के द्वारा व्यक्ति अपनी नेतृत्व भूमिका को प्रभावी बना सकता है।

(viii) विभिन्न परिस्थितियां पृथक–पृथक नेतृत्व योग्यता एवं व्यवहार की मांग करती हैं।

आलोचना (Criticism) – नेतृत्व का परिस्थितिमूलक सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि कार्य प्रेरित या कर्मचारी–संतुष्टि प्रेरित नेतृत्व शैलियों में कुछ भी 'सर्वमान्य या सर्वश्रेष्ठ' नहीं है। नेतृत्व की प्रभावोत्पादकता सामूहिक वातावरण के विभिन्न घटकों पर निर्भर करती है। लेकिन यह भी निर्धारित करना संभव नहीं है कि किस परिस्थिति में कौन–सी नेतृत्व की शैली अपनाई जाए कि सफलता मिल जाए। प्रत्येक व्यक्ति अपने संगठन की आंतरिक परिस्थितियों से बहुत अधिक सीमा तक प्रभावित होता है जो प्रत्येक संगठन में भिन्न–भिन्न हो सकती हैं।

4.3.3 अभिप्रेरणा

अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रबंधकों को कर्मचारियों को सक्रिय एवं प्रेरित करना होता है। इसे अभिप्रेरणा कहते हैं। यह एक शक्ति है जो व्यक्ति में प्रबल इच्छा जाग्रत कर स्वेच्छा से कार्य करने की प्रेरणा उत्पन्न करती है कि विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होती है। मूलतः अभिप्रेरणा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु लोगों को कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

टिप्पणी

अभिप्रेरणा अंग्रेजी शब्द 'मोटिवेशन' (Motivation) का हिन्दी रूपान्तर है। इस शब्द की उत्पत्ति 'मोटिव' (Motive) से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है व्यक्ति में किसी एक इच्छा अथवा शक्ति का विद्यमान होना, जो उसे कार्य करने की प्रेरणा प्रदान करता है। अभिप्रेरणा कार्य से सम्बन्धित है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति में जाग्रत किया जा सकता है। वास्तव में, अभिप्रेरणा वह मनोवैज्ञानिक उत्तेजना है। जो व्यक्तियों को काम पर बनाये रखने के साथ–साथ उन्हें उत्साहित करती है और अधिकतम संतुष्टि प्रदान करती है।

अभिप्रेरणा वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा कर्मचारियों को कोई आवश्यकता अनुभव कराके कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है। विभिन्न विद्वानों व शिक्षाविदों द्वारा अभिप्रेरणा को निम्नांकित रूप से परिभाषित किया है–

- माइकेल जे. जूसियस के शब्दों में, 'अभिप्रेरणा स्वयं को अथवा किसी अन्य व्यक्ति को एक विशेष प्रकार से कार्य करने हेतु प्रोत्साहित करने की प्रक्रिया है अथवा वांछित प्रक्रिया प्राप्त करने हेतु सही बटन दबाता है।'
- डेल एस. बीच ने अभिप्रेरणा को परिभाषित करते हुए कहा है 'अभिप्रेरणा को, एक लक्ष्य या पुरस्कार की प्राप्ति करने के लिए अपनी शक्ति के प्रयोग करने की तत्परता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'
- स्टेनले वेन्स के अनुसार, 'कोई भी ऐसी इच्छा या भावना जो किसी व्यक्ति की इच्छा या भावना को इस प्रकार परिवर्तित कर दें कि वह व्यक्ति कार्य करने के लिए प्रेरित हो जाये, उसे अभिप्रेरणा कहा जाता है।'
- केरोल शार्टल के अनुसार, 'किसी निश्चित दिशा में गतिमान होने अथवा निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निश्चित प्रेरणा अथवा तनाव ही अभिप्रेरणा है।'
- कूण्ट्ज एवं ओडोनेल के शब्दों में, 'अभिप्रेरणा इच्छाओं, अभिलाषाओं, आवश्यकताओं और अन्य ऐसी शक्तियों के संपूर्ण वर्ग के लिए प्रयुक्त एक सामान्य शब्दावली है। यह कहना है कि प्रबन्धगण अपने अधीनस्थ का अभिप्रेरणा करते हैं, बिल्कुल यही कहने के बराबर होगा कि वे उन सभी कार्यों को करते हैं जिनको वे समझते हैं कि उनसे इन इच्छाओं एवं आकांक्षाओं की संतुष्टि हो सकेगी तथा अधीनस्थों को अपेक्षित तरीके से कार्य करने के लिए प्रेरित किया जा सकेगा।'
- मैकफरलैण्ड के अनुसार, 'अभिप्रेरणा एक विधि है जिसमें संवेगों, उद्वेगों, इच्छाओं, आकांक्षाओं, प्रयासों या आवश्यकताओं एवं व्यवहार का निर्देशन, नियन्त्रण एवं स्पष्टीकरण किया जाता है।'

सरलतम शब्दों में, अभिप्रेरणा से अभिप्राय उन सभी क्रियाओं से है जो व्यक्तियों को अधिकतम एवं श्रेष्ठ कार्य करने हेतु प्रेरित करता है।

टिप्पणी

अभिप्रेरणा का महत्व

अभिप्रेरणा का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट होता है–

- एक व्यक्ति उत्पत्ति के उपलब्ध संसाधनों का समुचित दोहन तभी कर सकता है जब वह अपनी तरफ से कार्य के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित हों। कार्य के प्रति समर्पण की भावना किसी व्यक्ति में अभिप्रेरणा द्वारा ही उत्पन्न की जा सकती है।
- एक व्यक्ति में किसी कार्य के लिए इच्छा उत्पन्न करना एक महत्वपूर्ण कार्य है। अभिप्रेरणा द्वारा किसी व्यक्ति में कार्य के प्रति इच्छा जाग्रत करने का महत्वपूर्ण कार्य सुगमता से किया जा सकता है। कार्य के प्रति इच्छुक होने पर व्यक्ति पूर्ण कुशलता से कार्य कर सकता है।
- अभिप्रेरणा एक ऐसी प्रक्रिया है, जो कार्य के प्रति संतुष्टि के भाव में वृद्धि करती है। जब किसी व्यक्ति को कार्य के प्रति संतुष्टि का अनुभव होता है तो वह अन्य लोगों के साथ मिलजुलकर सहयोग से कार्य करता रहता है। इस प्रकार अभिप्रेरणा एक ऐसा आधार है, जो सहयोग भावना का विकास करता है।
- अभिप्रेरणा द्वारा प्रोत्साहित कर्मचारियों में अनुपस्थिति व कार्य छोड़कर जाने की प्रवृत्ति में कमी आती है।
- अभिप्रेरणा व्यक्तियों में कार्य करने की भावना का विकास करता है। इससे उत्पादन में भी वृद्धि होती है। उत्पादन वृद्धि के साथ ही उत्पादकता वृद्धि अर्थात् प्रति व्यक्ति, प्रति मशीन, प्रति घण्टा उत्पादकता में वृद्धि होती है।
- अभिप्रेरणा द्वारा लक्ष्यों की प्राप्ति निश्चित समय पर संभव हो पाती है। किसी उपक्रम की सफलता उसके उद्देश्यों की प्राप्ति ही नहीं, अपितु उद्देश्यों को समय पर प्राप्त करने पर निर्भर करता है। कोई प्रबंधक कितना भी अच्छा भौतिक संसाधन उपलब्ध करा दे, जब तक वहां के कर्मचारी कार्य करने की पूर्ण इच्छा नहीं रखेंगे, तब तक भौतिक संसाधनों का सदुपयोग संभव नहीं होता है। अतः उचित समय पर लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अभिप्रेरणा आवश्यक है।

उपरोक्त के अतिरिक्त अभिप्रेरणा द्वारा मानवीय सम्बन्धों का विकास होता है। कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि होती है। कर्मचारियों की आवश्यकताओं की संतुष्टि होती है। सहयोग की प्राप्ति होती है। कर्मचारियों की कार्यक्षमता में सुधार होता है।

अभिप्रेरणा की विशेषतायें

अभिप्रेरणा की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

- **अभिप्रेरणा एक मनोवैज्ञानिक धारणा है (Motivation is a Psychological Concept)**– वास्तव में अभिप्रेरणा एक व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक धारणा है। किसी व्यक्ति को तभी मानसिक रूप से कार्य करने के लिए प्रेरित हुआ कहा जा सकता है, जब अभिप्रेरणा उसके अंदर से विकसित होती है।

टिप्पणी

- **संपूर्ण व्यक्ति प्रेरित होता है, उसका एक भाग नहीं (The Whole Person is Motivated, Not only his Part)**– चूंकि व्यक्ति स्वयं में एक पूर्ण तथा अविभाज्य इकाई है अतः किसी कार्य करने के लिए एक समय में पूर्ण व्यक्ति प्रेरित होता है। यह नहीं कहा जा सकता है कि व्यक्ति की इच्छा तो है परन्तु रुचि नहीं है।
- **लक्ष्य द्वारा अभिप्रेरणा प्राप्त होती है (Motivation is goal oriented)**– मात्र आवश्यकता होना ही अभिप्रेरणा के लिए पर्याप्त नहीं है। चूंकि व्यक्ति लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ही कार्य करता है, अतः प्रेरणा और लक्ष्य में निकट का संबंध होता है।
- **अभिप्रेरणा एक अनन्त प्रक्रिया है (Motivation is a Continuous Process)**– अभिप्रेरणा एक गतिशील क्रिया है। प्रबंधक को कर्मचारियों में अभिप्रेरणा का संचार करने के लिए सदैव प्रयत्न करते रहना चाहिए। इसका कारण आवश्यकताओं का अनन्त होना है। अतः अभिप्रेरणा कभी न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है।
- **अभिप्रेरणा वित्तीय व गैर वित्तीय हो सकती है (Motivation can be Economical and Uneconomical)**– अभिप्रेरणा एक मानवीय भावनात्मक प्रक्रिया है। एक व्यक्ति जिस प्रकार की अभिप्रेरणा से शीघ्र प्रेरित होता है, उसे उसी प्रकार से अभिप्रेरित किया जा सकता है।
- **अभिप्रेरणा कार्य का आधार (Motivation is a base of work)**– अभिप्रेरणा प्राप्त होने पर कोई भी व्यक्ति अच्छा व अधिक कार्य करने में सक्षम होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अभिप्रेरणा किसी कार्य को करने का आधार है।
- **अभिप्रेरणा मनोबल से भिन्न है (Motivation is different from Moral)**– अभिप्रेरणा व्यक्ति के कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, जबकि मनोबल, व्यक्ति की कार्य करने की स्वयं की इच्छा है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अभिप्रेरणा और मनोबल दोनों भिन्न क्रियाएं हैं।
- **अभिप्रेरणा से कार्य संतुष्टि प्राप्त होती है (Motivation Provides Work Satisfaction)**– अभिप्रेरित व्यक्ति ही कार्य को रुचि से करता है, जिससे उसे कार्य संतुष्टि प्राप्त होती है। अभिप्रेरणा किसी व्यक्ति को कार्य संतुष्टि प्रदान करने की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है।
- **अभिप्रेरणा से कार्यक्षमता में वृद्धि होती है (Motivation enhances Efficienced)**– अभिप्रेरणा से व्यक्ति को संतुष्टि प्राप्त होती है। कार्य संतुष्टि प्राप्त होने पर व्यक्ति की कार्यक्षमता भी बढ़ती है।

अभिप्रेरणा के मूल तत्व

प्रो. नाइल्स के अनुसार, अभिप्रेरणा के निम्नांकित चार मूल तत्व हैं–

- **सुरक्षा (Security)**– अभिप्रेरणा

टिप्पणी

- **मान्यता (Recognisation)**– अभिप्रेरणा
- **प्रगति और विकास के अवसर (Oppurtunities for Progress and Growth)**– कर्मचारियों को यह विश्वास दिलाना कि अच्छे कार्य के पारितोषिक के रूप में उन्हें तरक्की दी जाएगी तथा नये–नये अवसर भी प्रदान किये जाएंगे, उन्हें अधिक अच्छा कार्य के लिए सबसे अधिक प्रेरित करता है।
- **अपनत्व तथा आत्मीयता की भावना अभिप्रेरणा (Feeling of Belongingness)**– आधुनिक व्यवसायिक संस्थाओं में कर्मचारियों के मध्य इस भावना का होना कि वे सब संस्था के अभिन्न अंग हैं तथा वे अपने–अपने स्थान पर महत्वपूर्ण कार्य करते हैं, अभिप्रेरणा का एक महत्वपूर्ण तत्व है।

अभिप्रेरणा के प्रकार

मूलतः अभिप्रेरणा के तीन प्रकार होते हैं–

1. सकारात्मक व नकारात्मक अभिप्रेरणा (Positive And Negative Motivation)
2. बाह्य एवं आंतरिक अभिप्रेरणा (External And Internal Motivation)
3. मौद्रिक एवं अमौद्रिक अभिप्रेरणा (Monetary And Non-Monetary Motivation)

1. **सकारात्मक व नकारात्मक अभिप्रेरणा (Positive And Negative Motivation)**– किसी उद्यम में कर्मचारियों को अभिप्रेरित करना, प्रबंधकों का मुख्य उत्तरदायित्व है। यह प्रबंधन का एक ऐसा पहलू है जो कर्मचारियों के कार्य व्यवहार को प्रभावित करता है। प्रबंधन वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न उपकरणों का उपयोग कर सकता है।

   वास्तविक अर्थों में अभिप्रेरणा सकारात्मक ही होता है। सकारात्मक अभिप्रेरणा लोगों के अंदर उनके द्वारा सर्वोत्तम प्रदर्शन करने की इच्छा को जन्म देता है जिससे वे अपने वर्तमान प्रदर्शन में सुधार कर सकते हैं। सकारात्मक अभिप्रेरणा की अवधारणा पारितोषिक विचारधारा पर आधारित होती है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा दूसरे व्यक्तियों को पुरस्कार का विश्वासपूर्ण आश्वासन देकर इस प्रकार प्रोत्साहित किया जाता है ताकि पुरस्कृत होने की प्रत्याशा में वे दिये गये कार्यों को पूर्ण लगन व तन्मयता से पूर्ण कर सकें। सकारात्मक अभिप्रेरणा की सहायता से कर्मचारियों की कार्यक्षमता में आशातीत वृद्धि की जा सकती है। साथ ही उनमें उपक्रम के प्रति अपनत्व की भावना का विकास भी किया जा सकता है।

   फिलप्पो के अनुसार, 'सकारात्मक अभिप्रेरणा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संभावित लाभ या पारितोषिक का प्रलोभन देकर दूसरों को अपनी इच्छानुसार कार्य करने हेतु प्रेरित किया जाता है।'

सकारात्मक अभिप्रेरणा की विभिन्न विधियां निम्नानुसार हैं–

- प्रतिस्पर्धाओं का आयोजन करना।
- अधीनस्थों के कार्य की प्रशंसा करना।

टिप्पणी

- अधीनस्थों में व्यक्तिगत रूप से रुचि लेना।
- कार्य के प्रतिफल के रूप में उच्च वेतन प्रदान करना।
- कार्य हेतु आवश्यक सूचनायें तथा उचित सुझाव देना।
- अधीनस्थों के साथ अपनत्व की भावना का विकास करना।
- श्रम कल्याण सुविधाओं तथा कार्य की दशाओं में सुधार करना।
- विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए कर्मचारियों से सुझाव मांगना।
- कर्मचारियों के लिए विकास और प्रगति के उचित अवसर प्रदान करना।
- कर्मचारियों की आवश्यकताओं और प्रतिष्ठा की पूर्ति का यथासंभव प्रयास करना।
- कर्मचारियों को अधिकार और दायित्व सौंपकर उनमें कार्य के प्रति अभिरुचि जाग्रत करना।

नकारात्मक अभिप्रेरणा में कर्मचारियों को लक्ष्य पूर्ण न करने की स्थिति में दण्डित किये जाने का भय दिखाकर अभिप्रेरित किया जाता है। यह दण्ड वेतन में कटौती, नौकरी से निकालने अथवा पदावनित के भय के रूप में हो सकता है। इस भय के दबाव में ही कर्मचारी में कार्य के प्रति दबाबी अभिरुचि उत्पन्न होती है।

फिलप्पो के अनुसार, 'नकारात्मक अभिप्रेरणा का उद्देश्य दूसरों को प्रभावित करके अपनी इच्छानुसार कार्य कराना है, परन्तु इसका मुख्य आधार भय द्वारा प्रभावित करना होता है।'

नकारात्मक अभिप्रेरणा केवल अल्पकाल के लिए ही उपयुक्त है। दीर्घकाल में नकारात्मक अभिप्रेरणा संस्था की उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव डालता है। इसमें व्यक्ति स्वेच्छा से नहीं, अपितु दण्ड के भय से प्रेरित होकर कार्य करते हैं, अतः उनमें वैमनस्य की भावना बढ़ जाती है।

नकारात्मक अभिप्रेरणा के प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं–

- पदावनति करना।
- नौकरी से हटा देना।
- वेतन में कटौती करना।
- कार्य स्थानान्तरण करना।
- जुर्माना या कोई अधिक दण्ड देना।

सकारात्मक अभिप्रेरणा से श्रम–प्रबन्ध सम्बन्ध मधुर होते हैं, साथ ही कर्मचारियों के मनोबल, कार्यक्षमता और उत्पादकता में वृद्धि होती है। इसलिए यही सदैव हितकारी होता है।

2. बाह्य एवं आंतरिक अभिप्रेरणा (External And Internal Motivation)– बाह्य अभिप्रेरणा से अभिप्राय ऐसे प्रोत्साहन से है जिसके अंतर्गत अधिकारी एवं कर्मचारियों को उनके श्रेष्ठ कार्य के लिए अधिक वेतन या सीमांत लाभ या

टिप्पणी

जीवन बीमा या विश्राम का समय अवकाश या सेवानिवृत्ति योजनाएं आदि का अतिरिक्त लाभ प्राप्त होने से है। जबकि आंतरिक अभिप्रेरणा के अंतर्गत ऐसे तत्व सम्मिलित हैं जो कार्य के दौरान संतुष्टि प्रदान करते हैं और सम्बन्धित अधिकारी को अतिरिक्त उत्तरदायित्व, मान्यता, हिस्सेदारी, सम्मान आदि प्रदान किया जाता है। इस प्रकार दोनों ही विधि संगठन का मनोबल बढ़ाती है।

3. **मौद्रिक एवं अमौद्रिक अभिप्रेरणा (Monetary And Non-Monetary Motivation)**– किसी व्यक्ति को कार्य करने के लिए जब मौद्रिक तरीकों का उपयोग किया जाता है तो उसे मौद्रिक अथवा वित्तीय अभिप्रेरणा कहते हैं जैसे– वेतन, मजदूरी, भत्ता व बोनस, ग्रेच्यूटी, पेंशन, अवकाश वेतन, भविष्य निधि का अंशदान, लाभ–भागिता ऋण सुविधा आदि।

   जब किसी व्यक्ति को मुद्रा के अलावा किसी अन्य मनोवैज्ञानिक तरीकों से संतुष्ट किया जाता है एवं कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है तो उसे अमौद्रिक या गैर–वित्तीय अभिप्रेरणा कहते हैं। जैसे– नौकरी की सुरक्षा, पदोन्नति के अवसर, प्रशंसा एवं पुरस्कार, सम्मान, अभिनंदन, स्वास्थ्य शिक्षा व मनोरंजन सुविधा आदि।

अभिप्रेरणा को सुधारने की विधियां (अभिप्रेरणात्मक तकनीकें) – अभिप्रेरणा में सुधार लाने के लिए कुछ तकनीकों को अपनाया जाता है, जिन्हें प्रेरणात्मक तकनीकें (Motivational Techniques) कहा जाता है। एक व्यावसायिक उपक्रम में प्रबंधन द्वारा कर्मचारियों के कार्य सम्बन्धी आचरण को प्रेरित करने के लिए अपनायी जाने वाली कुछ प्रेरणात्मक तकनीकों का विवरण निम्नानुसार है।

1. **मौद्रिक तकनीकें (Monetary Technique)**– अभिप्रेरणा की ऐसी तकनीकें, जिनमें कर्मचारियों को वित्तीय लाभ होता है, मौद्रिक अथवा वित्तीय तकनीकें कहलाती हैं। मौद्रिक अभिप्रेरणा तकनीकें अधिक मौलिक होती हैं, क्योंकि मौद्रिक आय से लाभ होने से कर्मचारी आधारभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम होते हैं। मुद्रा कर्मचरियों की समस्त आर्थिक आवश्यकताओं की तो पूर्ति करती ही है, इसके साथ–साथ यह उनकी प्रतिष्ठा और कार्यक्षमता में वृद्धि करने में भी सहायक होती है। मौद्रिक तकनीकें कर्मचारी को अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होती हैं। आज के अर्थ प्रधान युग में मुद्रा व्यक्तियों के आचरण को प्रेरित करने वाली एक अत्यन्त प्रभावशाली अभिप्रेरणा है। इनके अन्तर्गत वेतन, बोनस, कमीशन और वित्तीय अनुलाभ आदि आते हैं। मौद्रिक तकनीकों से कर्मचारियों को वित्तीय लाभ होता है और कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने हेतु उपक्रम पर वित्तीय भार पड़ता है।

2. **अमौद्रिक तकनीकें (Non-Monetary Techniques)**– अभिप्रेरणा की ऐसी तकनीकें जिनमें कर्मचारियों को वित्तीय लाभ तो नहीं होता है, परन्तु उपक्रम में उनकी प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है, अमौद्रिक तकनीकें कहलाती हैं। अभिप्रेरणा की अमौद्रिक तकनीकों द्वारा व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से मुद्रा में

टिप्पणी

प्रतिफल न देकर अन्य विधियों से अभिप्रेरित किया जाता है। जैसे– सामाजिक सम्मान, आत्म संतुष्टि, लगाव इत्यादि।

3. **कार्य पर आधारित तकनीकें (Job Based Techniques)**– कार्य सरलीकरण, कार्य विभाजन, कार्य विस्तार और कार्य सम्पन्नता इत्यादि तकनीकें जो कि कर्मचारियों की व्यक्तिगत एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में पूर्ण सहायक होती है, कार्य पर आधारित तकनीकों के अन्तर्गत आती है। कार्य विभाजन, कार्य को सरलीकृत कर देता है और कार्य भी सुगमता से सम्पन्न हो जाता है। श्रमिक इसे बहुत पसन्द करते हैं। कार्य परिवर्तन द्वारा कर्मचारियों को नया कार्य सीखने का अवसर प्राप्त होता है और उनकी कार्य के प्रति रुचि बढ़ती है। कार्य विस्तार के अन्तर्गत व्यक्ति के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों की संख्या और प्रकार में आशातीत अभिवृद्धि होती है, जिसके परिणामस्वरूप उस व्यक्ति को कार्य करने में संतुष्टि प्राप्त होती है। कार्य–सम्पन्नता भी प्रत्येक व्यक्ति में उपलब्धि, मान्यता भाव, उत्तरदायित्व का भाव जाग्रत करती है, साथ में उसके विकास और प्रगति का मार्ग भी प्रशस्त करती है। कार्य सम्पन्नता द्वारा कर्मचारी को अपना कार्य सुनिश्चित करने और अपने उत्पादन की गति एवं गुण को नियन्त्रित करने में भी आशातीत प्रोत्साहन प्राप्त होता है।

4. **समूह पर आधारित तकनीकें (Group Based Techniques)**– अभिप्रेरणा की ऐसी तकनीकें, जो किसी एक व्यक्ति को अभिप्रेरित न करके संपूर्ण समूह को अभिप्रेरित करती हैं, समूह पर आधारित तकनीकें कहलाती हैं। अभिप्रेरणा का प्रत्यक्ष सम्बन्ध सामूहिक जागृति से ही है। अभिप्रेरणा, समूह के प्रत्येक सदस्य का मनोबल ऊंचा करने वाली एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा समूह के प्रत्येक सदस्य की उत्पादकता में वृद्धि की संभावना बढ़ जाती है और समूह का प्रत्येक सदस्य अभीष्ट परिणाम प्राप्त करने में अपना पूर्ण सहयोग देने के लिए सदैव तत्पर रहता है। समूह पर आधारित तकनीकों का प्रयोग करके प्रबन्ध, संगठन के प्रत्येक कर्मचारी के अंदर कार्य करने की मनोवृत्ति एवं पारस्परिक सद्भाव की भावना जाग्रत करता है और प्रत्येक समूह को अपने उत्तरदायित्वों की पूर्ति करने के लिए प्रेरित करता है, साथ ही कार्य के सम्बन्ध में उचित दिशा–निर्देश प्रदान करके अभीष्ट परिणाम प्राप्त करता है। इन तकनीकों में समूह के लिए मौद्रिक तथा अमौद्रिक दोनों तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है।

5. **सहभागिता पर आधारित तकनीकें (Cooperation Based Techniques)**– इस प्रकार की अभिप्रेरणा तकनीक का प्रमुख उद्देश्य कर्मचारियों के व्यक्तित्व का विकास करना है। यह एक आत्मनियंत्रण तथा वस्तुपरक आत्म अभिप्रेरक के रूप में कार्य करने वाली आंतरिक तकनीक है। इस तकनीक के द्वारा अभीष्ट परिणाम की प्राप्ति हेतु उच्चस्तरीय प्रबन्धक, अधीनस्थ और कर्मचारीगण एकजुट होकर संयुक्त रूप से प्रत्येक व्यक्ति के उत्तरदायित्व के व्यापक क्षेत्र की सीमा, उसके अपेक्षित परिणामों के आधार पर निर्धारित करते हैं और मार्गदर्शक के रूप में किसी इकाई को संचालित करने और सदस्यों के योगदान का उचित मूल्यांकन करने हेतु इन उपायों का प्रयोग करते हैं।

टिप्पणी

6. **नेतृत्व तकनीक (Leadership Technique)**– नेतृत्व व्यक्तियों को लक्ष्य प्राप्त करने में सहयोग देता है, उनके काम के स्तर को उच्च करता है और उनके व्यक्तित्व को उनकी सीमाओं से आगे बढ़ा देता है। प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा होती है कि वह नेतृत्व करें। नेतृत्व एक ऐसी प्रेरक शक्ति है, जो संगठन द्वारा नियत उद्देश्यों के अनुसार कर्मचारियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। नेतृत्व तकनीक के अनेक रूप हो सकते हैं–जैसे– एकतंत्रीय, लोकतंत्रीय, समर्थनकारी और सहभागीय इत्यादि। नेतृत्व तकनीक के द्वारा कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि होती है तथा उनकी उत्पादकता में भी वृद्धि की जा सकती है। नेतृत्व तकनीक कर्मचारियों की समस्याओं का उचित निराकरण करने में भी बहुत सहायक होती है।

7. **संवेदनशील प्रशिक्षण की तकनीक (Sensitivity Training Technique)**– इस तकनीक के अन्तर्गत प्रबंधकों को इस प्रकार का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है कि वे उपक्रम के कर्मचारियों को पूर्ण रूप से अपने कार्य के प्रति संवेदनशील बनाने में सक्षम हों।

8. **अन्य विधियां (Other Techniques)**– उपर्युक्त वर्णित विधियों के अतिरिक्त निम्नलिखित विधियों द्वारा भी कर्मचारियों को अभिप्रेरित किया जा सकता है–

- स्वस्थ कार्य दशाएं उपलब्ध कराके,
- प्रभावी सम्प्रेषण व्यवस्था का विकास करके,
- प्रशिक्षण द्वारा
- पदोन्नति के अवसरों में वृद्धि करके,
- सेवा सुरक्षा प्रदान करके,
- विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाओं के द्वारा
- अवित्तीय प्रेरणाएं प्रदान करके।

अभिप्रेरणा के स्रोत
(Sources of Motivation)

- सफलता एवं असफलता
- प्रतियोगिता एवं सहयोग
- प्रगति का ज्ञान
- नवीनता
- रुचि
- आवश्यकता

अंततः यह कहा जा सकता है कि अभिप्रेरणा व्यवहार को जाग्रत करने, क्रिया के विकास को सम्पोषित करने और क्रिया के तरीकों को नियमित करने की एक सफल प्रक्रिया है।

टिप्पणी

प्रमुख प्रदर्शन क्षेत्र की पहचान तथा नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु

(Identification of Key Performance areas and Strategic Control Points)

– नियंत्रण प्रबंध–प्रकार्य की महत्वपूर्ण क्रिया है– नियंत्रण का आधार नियोजन होता है। प्रत्येक उपक्रम के निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए नियंत्रण प्रक्रिया का कार्यान्वयन अनिवार्य है।

– नियंत्रण भविष्यमुखी प्रक्रिया है– भावी घटनाओं को पूर्व निश्चित योजना के अनुसार घटित होते देखना ही नियंत्रण का प्रमुख उद्देश्य होता है। नियंत्रण के परिणामस्वरूप नवीन पद्धतियों के विकास को प्रेरणा मिलती है।

– जिस प्रकार नियोजन एक सतत प्रक्रिया है। उसी प्रकार नियंत्रण भी प्रबंध का निरन्तर जारी रहने वाला प्रकार्य है।

– नियंत्रण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है, अर्थात् परिस्थितियों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप नियंत्रण पद्धति में परिवर्तन करना आवश्यक होता है।

– नियंत्रण वास्तव में व्यक्तियों के कार्यों से सम्बन्धित प्रक्रिया है।

– प्रबंध के प्रत्येक स्तर पर नियंत्रण प्रक्रिया व्याप्त रहती है।

– नियंत्रण का अर्थ अधिकारों का हनन नहीं होता है।

नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु

(Strategic Control Points)

– नियंत्रण कार्यों को उद्देश्योन्मुख रखने में सहायता करता है।

– नियंत्रण पद्धति स्थापित होने से प्रबंध अधीनस्थ स्तरों पर अधिकार और दायित्वों का प्रत्यायोजन कर पाता है।

– यह विभिन्न विभागों और उनकी गतिविधियों में समन्वय स्थापित करने में सहायक होती है।

– नियंत्रण की कुशल प्रणाली कार्यों और कार्मिकों में अनुशासन उत्पन्न करती है।

– इसके द्वारा भ्रष्टाचार और लापरवाही पर अंकुश लगता है।

इसके द्वारा अकुशल कार्मिकों को पता लगाकर उन्हें दंडित किया जा सकता है तथा कुशल कार्मिकों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। अतः नियंत्रण अभिप्रेरणा का आधार है।

– नियंत्रण के माध्यम से विकेन्द्रीकरण में भी सहायता मिलती है।

– नियंत्रण से निर्णयन में सहयोग प्राप्त होता है।

– अंततः नियंत्रण व्यवसाय हेतु बीमे का कार्य करता है।

– नियंत्रण की प्रणाली व्यवसाय की आवश्यकता और प्रगति के अनुरूप होनी चाहिए।

टिप्पणी

4.3.4 संगठन में टीम एवं टीमवर्क

अपनी समस्याओं को पहचानने, परीक्षण करने तथा हल करने के लिए सीखने में वर्क ग्रुप की सहायता के लिए टीमों का निर्माण एक प्रयास है। यह कार्य निष्पत्ति के संबंध में समस्याओं की पहचान पर प्रत्यक्षतः फोकस करती है तथा उनके निराकरण हेतु ठोस योजनाओं की व्यवस्था करती है। एक टीम निर्माण कार्यक्रम एक सतत आधार पर नई समस्याओं का वर्णन करता है। यह एक प्रभावी तकनीक है जिसके द्वारा किसी ग्रुप के सदस्य परीक्षण करते हैं कि कैसे वे एक साथ मिलकर काम करते हैं तथा ऐसे परिवर्तनों का नियोजन करते हैं जो उनकी प्रभावोत्पादकता को सुधारेंगे।

टीम निर्माण एक निपुण प्रक्रिया अवलोकनकर्त्ता या परामर्शदाता की सहायता की अपेक्षा करता है ताकि ग्रुप के कार्यों तथा अनुरक्षण भूमिकाओं की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाया जा सके। फीडबैक टीम सृजन का एक महत्वपूर्ण प्रखंड होता है जिसको सभी के दौरान या बाद में परामर्शदाता द्वारा प्रदान किया जाता है ताकि ग्रुप और साथ ही साथ सदस्यों की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाया जा सके। टीम सृजन की व्यवस्थाएं निम्नलिखित हैं –

1. परामर्शदाता उनकी अनुभूतियों, रुझानों तथा टीम की प्रभावोत्पादकता के नजरियों को जानने के लिए टीम के सदस्यों का साक्षात्कार करेगा। तत्पश्चात परामर्शदाता संगठन से परे ग्रुप की एक सभा की व्यवस्था करेगा तथा उनको फीडबैक डाटा देगा जिस पर खुलकर विचार किया जाएगा। प्राथमिकताऐं तय की जाएंगी तथा समस्या के समाधान हेतु गतिविधि योजना निर्धारित की जाएगी।

2. प्रत्येक सदस्य दूसरे सदस्यों के साथ अपनी अभिकल्पित भूमिकाओं तथा साथ ही टीम की अनुभूति पर विचार करेगा ताकि वे और अधिक सार्थक तथा उत्पादकीय योगदान दे सकें।

3. परामर्शदाता नियमित तौर पर टीम की सभाओं में उपस्थित रहेगा। वह अवलोकन करेगा कि कैसे टीम ग्रुप के कार्यों को पूरा कर रही है तथा भूमिकाएं बनाए रख रही है। दूसरे शब्दों में, वह विषय–वस्तु की अपेक्षा प्रक्रिया पर ध्यान संकेंद्रित करेगा। प्रक्रिया में ऐसे चरों का समावेश होता है, जैसे– समूह वातावरण तथा भरोसे तथा खुलेपन की मात्रा, उस मात्रा सहित कार्य प्रभावोत्पादकता जिसके प्रति ग्रुप काम कर रहा है (or goofing oft) तथा क्या ग्रुप की क्षमताओं तथा संसाधनों का पूरा उपयोग किया जा रहा है तथा सहभागिता की मात्रा तथा प्रकृति आदि।

टीम को प्रभावी बनाना

टीम को प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक होती हैं–

1. टीम के सदस्य कुशल एवं कर्तव्य को समझने वाले हों ताकि मुश्किलों को आसानी से सुलझाया जा सके।
2. टीम के सदस्यों को उचित संगठनात्मक वातावरण उपलब्ध कराया जाए ताकि वे ठीक तरह से कार्य कर सकें।

3. टीम को इनाम देने की व्यवस्था की जाय ताकि टीम संगठनात्मक लक्ष्यों को पाने में अधिकतम योगदान दे। टीम को वित्तीय तथा गैर–वित्तीय इनाम दिए जाने की व्यवस्था हो।

टिप्पणी

4. टीम के सदस्य आचरण तथा चुनौतीपूर्ण लक्ष्य विकसित करने में सक्षम हों तथा उन्हें शीघ्रता एवं आवश्यकता का बोध हो।

टीम विकास की प्रक्रिया (Process of Team Development)

टीम विकास की प्रक्रिया में निम्नलिखित चरण होते हैं–

1. समस्या का बोध कराना;
2. दृष्टिकोण में अंतरों की जांच करना;
3. प्रतिपुष्टि का आदान–प्रदान करना;
4. परस्पर कौशल विकसित करना;
5. टीम के सदस्यों के साथ व्यक्तिगत संपर्क करना;
6. कार्य का अनुकरण करना।

टीम विकास के गुण (Merits)

टीम विकास के निम्नलिखित गुण हैं – 1. संचार प्रक्रिया में आने वाली मनोवैज्ञानिक समस्याओं को समाप्त करके समूह के अन्दर तथा निश्चित समूह में संचार को विकसित करती है। 2. इससे संगठन की समस्या दूर करने तथा निर्णय करने की क्षमता अच्छी हुई है। 3. यह समूह सदस्यों को पारित करके अंदर व्यक्तिगत संबंध को विकसित करती है।

टीम विकास के दोष (Demerits)

टीम विकास के निम्नलिखित दोष हैं – 1. टीम सदस्यों में परिवर्तन के कारण टीम विकास अधिक कठिन हो जाता है। टीम निष्पादन तथा अच्छे संबंधों के रूप में कर्तव्यों में अव्यवस्था के कारण नए सदस्य टीम में समायोजित नहीं हो पाते। 2. यह मात्र कार्य समूह केंद्रित है। महत्वपूर्ण सांगठनिक विचलनों जैसे तकनीक, रचना आदि पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता।

टीम विकास का सैद्धांतिक स्वरूप

टीम का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Team) – दल से आशय ऐसे औपचारिक समूह से होता है जो ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनता है जो अन्तर्निर्भर तथा किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उत्तरदायी होता है। समूह जब उत्पादक इकाई बन जाता है तो उसे दल की श्रेणी में रखा जाता है। दल सदैव औपचारिक समूह के रूप में होते हैं। दल को विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित रूप से परिभाषित किया है–

- **डगलस स्मिथ** के अनुसार, '' एक दल संपूरक कौशल वाले कुछ व्यक्तियों से मिलकर बनता है जो सामान्य उद्देश्य एवं कुछ निष्पादन लक्ष्यों के प्रति निष्ठा रखते हैं तथा ऐसे दृष्टिकोण अपनाते हैं जिसके लिए वे स्वयं पारस्परिक रूप से उत्तरदायी हैं।''

टिप्पणी

- **फ्रेंच** के अनुसार, ''एक कार्य दल व्यक्तियों से मिलकर बनता है जो एक सामान्य उच्च अधिकारी के प्रति उत्तरदायी होते हैं, जो आमने–सामने रहकर अंतरक्रिया करते हैं तथा जो संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले कार्यों में कुछ सीमा तक अंतर्निर्भर होते हैं।"

एक टीम एक सहकारी ग्रुप (co-operative group) होती है जिसके सदस्य निर्दिष्ट लक्ष्यों की अभिप्राप्ति की ओर एक दूसरे के संपर्क में आते हैं। अनेक संगठनों में नियमित छोटे–छोटे ग्रुप्स काम करते हैं जिनको टीम (team) कहा जाता है जहां उनके प्रयासों को एकजुट किया जाता है, जैसे– एक पिक्चर पजल के विभिन्न प्रखंड (piece of a picture puzzle) में उनके कार्य अंतः संबद्ध होते हैं तो वे एक वर्कटीम के रूप में काम करते हैं तथा एक सहकारी स्थिति विकसित करने का प्रयास करते हैं जिसे टीमवर्क (teamwork) कहा जाता है। टीम के सदस्यों के अंतः संपर्कों की आवृत्ति तथा टीम का सतत अस्तित्व एक वर्क टीम को स्पष्टतः एक अल्पकालीन निर्णयन ग्रुप या एक आव्यूह संरचना (matrix structure) में एक प्रकल्प टीम (project team) से भिन्न बना देता है।

जब एक वर्कटीम के सदस्य अपने उद्देश्यों को समझ लेते हैं तो उद्देश्यों के प्रति उत्तरदायी तौर पर तथा उत्साह के साथ अंशदान करते हैं तथा एक–दूसरे का समर्थन करते हैं तो वे टीमवर्क (teamwork) प्रदर्शित कर रहे होते हैं। चूंकि टीमवर्क लक्ष्य अभिप्राप्ति के लिए जरूरी होता है अतः प्रबंधन टीमों सहित अनेक टीमों का गठन करते हैं। ग्रुप निर्णयन (group-decision making) सभी टीमों का एक अनिवार्य लक्षण होता है।

एक संगठन में विभिन्न प्रकार के विवादों के निदान हेतु अनेक तरीके सुझाए गए हैं। प्रसिद्ध लेखक टॉमसन ने पांच तरीके बताए हैं : प्रतिस्पर्द्धा (competition), सहयोग (collaboration), निभाना (accommodation), समझौता (compromise) एवं पलायन (avoidance)। टैनेबॉम ने निम्न रणनीतियां सुझाई हैं – पलायन (avoidance), दबाव (repression) तनावों को प्रखर बनाकर उनको समस्या शोधन में बदलना।

इस प्रकार विवादों को सुलझाने के लिए निम्न विधियां समझाई जा सकती हैं :

(1) विवादों का पलायन तथा हनन (Avoidance and Repression of Conflicts)

(2) विवादों को निरस्त करना (Defusion of Conflicts)

(3) विवादों को बनाए रखना (Containment of Conflicts)

(4) टकराव (Confrontation)

(5) समस्या समाधान (Problem-Solving)

(6) विवाद उकसाना (Conflict Stimulation)

1. **विवादों का पलायन तथा हनन** – पलायन रणनीतियां ग्रुपों को पुनर्गठित करके, अंतः वैयक्तिक सम्पर्कों को नियमित करके विवादों के पलायन हेतु मांग करती हैं। विवादों का हनन प्रबंधक द्वारा विवादों को निरस्त करने की अपेक्षा

टिप्पणी

करता है। इस विधि में सहयोग का अभाव रहता है तथा महत्वपूर्ण विषयों को संबोधित नहीं किया जाता। इस विधि का उपयोग निम्नांकित दशाओं में किया जाता है– 1. जब विषय मामूली हो तथा अन्य बड़े मुद्दे सामने हों। 2. जब व्यक्ति का विचार हो कि वह किसी भी तरह सामने वाले को संतुष्ट नहीं कर सकता। 3. बेहतर निर्णय लेने हेतु अधिक जानकारी की आवश्यकता होती है। 4. जब कोई अन्य विवाद को बेहतर ढंग से हल कर सकता हो।

इन रणनीतियों में शामिल हैं :

(i) **विवाद की परवाह न करना** (Avoidance or ignoring the conflict)

(ii) **समूहों का पुनर्गठन** (Re-organisation of groups)

(iii) **समूहों के बीच अंतः निर्भरता में कमी लाना** (Reduction of inter-dependence between groups)

(iv) **विवादों पर हावी हो जाना** (Dominance or repression of differences) – इसका अर्थ है परस्पर विरोधी पक्षकारों को उच्च स्तरीय प्रबंध द्वारा सुझाये गए समाधान को स्वीकार करने के लिए 'बाध्य' करना।

(v) **अंतरण के माध्यम से अंतः वैयक्तिक संपर्कों पर नियंत्रण** (Regulation of inter-personal contacts through transfer)

क्या विवादों को दबाया जाए? – यहां एक महत्वपूर्ण सवाल उत्पन्न होता है कि क्या विवादों को शुरू में ही दबा दिया जाए। कुछ लोगों का विचार है कि विवाद बहुत बुरी बात है तथा हमेशा इनसे परे ही रहना चाहिए। यह बात केवल कुछ ही परिस्थितियों में खरी उतर सकती है। वह प्रबंधक जो इस नीति का पालन करता है अपने स्टाफ की संपूर्ण सृजन शक्ति को कम करने का जोखिम सदा के लिए मोल ले रहा होता है। एक ऐसे वातावरण में जहां विभेदों को परे रखा जाता है, कोई भी नया विचार सामने आएगा ही नहीं तथा पुराने विचार ही बिना जांचे, परखे चलते जाएंगे। इस बात का खतरा बना रहता है कि संगठन अनजाने में ही आत्म–तुष्टि की ओर फिसल न जाए।

2. **विवादों को निरस्त करना** – इस श्रेणी में आने वाली रणनीतियां विवादों को हल करने तथा उसमें शामिल पक्षकारों की भावनाओं पर मरहम लगाने की मांग करती हैं। निम्न विधियों से तनावों को कम करने की अपेक्षा की जाती है–

(i) **सुचारू बनाना** (Smoothening) – यह सदस्यों के बीच गवेषणा हेतु एक कूटनीतिक दलील है (diplomatic plea for empathy)। यह रणनीति परस्पर विरोधी पक्षकारों के बीच अंतरों को सामने लाती है तथा समानताओं तथा सहमति के क्षेत्रों को सुर्खियों में लाती है। वैसे यह तरीका सामान्यतः अप्रभावी हो जाता है क्योंकि यह उन सही मुद्दों की बात नहीं करता जो बार–बार उभरते रह सकते हैं। लेकिन फिर भी यह एक काम चलाऊ उपाय के रूप में प्रभावी रहता है ताकि लोग शांत रह सकें तथा फिर से परिप्रेक्ष्य पा सकें।

टिप्पणी

(ii) उच्चकोटि के लक्ष्य (Superordinate Goals) – यह एक एक ऐसा सामान्य लक्ष्य होता है जो सभी पक्षकारों को अपील करता है तथा एक अकेले पक्षकार के संसाधनों से इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। ऐसे लक्ष्य को पाने के लिए टकराव के पक्षकार अपने अंतरों को भुला देते हैं तथा एक–दूसरे का सहयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, भारी प्रतिस्पर्द्धा विभिन्न विभागों को विवश कर सकती है कि वे अपने मतभेदों को भुला दें तथा संगठन के अस्तित्व के लिए एकजुट होकर काम करें।

3. विवादों को बनाए रखना (Containment of Conflict) – कुछ रणनीतियां अपनाकर प्रबंध कुछ विवादों को सतह पर आने देता है लेकिन विचाराधीन मुद्दों पर पूरा नियंत्रण रखता है तथा उस तरीके को संभाले रहता है जिसमें उनको हल किया जाना है। ऐसी रणनीतियां हैं :

(i) **समझौता या सौदेबाजी** (Compromise or Bargaining) – यह trade-off का एक स्वरूप है जिसके अंतर्गत दो ग्रुप रियायतों का आदान–प्रदान करते हैं। जब तक वे किसी समझौता समाधान पर नहीं पहुंच जाते सौदेबाजी चलती रहती है और यह तब तक चलती है जब तक किसी न किसी प्रकार का पारस्परिक संतुष्टिदायी ठहराव नहीं हो जाता।

इस तरीके में दोनों दलों को समाधान तक पहुंचने के लिए कुछ त्यागना पड़ता है। यह पहुंच इस बात पर निर्भर करती है कि दल सही कार्य नहीं कर रहे। यह विधि निम्न स्थितियों में प्रयोग की जा सकती है– 1. जब उद्देश्य महत्वपूर्ण हो। 2. यदि समान शक्ति वाले विरोधी बहुत बढ़िया उद्देश्य हासिल करने के लिए कार्यरत हों। 3. गहन मुद्दों को अस्थाई ढंग से सुलझाना हो। 4. यदि दबाव की स्थिति में शीघ्र समाधान करना हो।

(ii) **ग्रुपों के बीच अंतः संपर्क की पुनः संरचना करना** (Restructuring the Interaction between Groups) - प्रबंधक कुछ समय के लिए ग्रुपों के बीच प्रत्यक्ष संपर्क की आवृत्ति कम कर सकता है या विवाद के निपटान हेतु तृतीय पक्षकार की मध्यस्थता स्वीकार कर सकता है।

4. टकराव (Confrontation or Sharpening Differences into Conflicts) – जब एक प्रबंधक को पता होता है कि ग्रुप के सदस्यों के बीच मतभेद विद्यमान है तो वह एक ऐसे वातावरण को बनाने का प्रयास कर सकता है जिसमें परस्पर विरोधी पक्षकार आपस में लड़ें। वे अपनी–अपनी ताकत जुटायें तथा दूसरे की कमजोरियों का फायदा उठायें। लेकिन उसको यह सुनिश्चित करना होगा कि लोग उन मुद्दों को समझें जिन पर उनमें मतभेद हैं तथा वह प्रविधि जिसके द्वारा वे अपने मतभेदों पर विचार कर सकते हैं तथा वे विभिन्न भूमिकाएं जिनको टकराव के दौरान निभाने की प्रत्येक व्यक्ति से आशा की जाती है। इस प्रणाली का पालन किया जा सकता है जब विवाद के पक्षकार कठोर रुख ले लेते हैं तथा एक दूसरे पर जीत पाने के लिए हथकंडे ढूंढ़ रहे होते हैं। लेकिन इससे समस्या के

टिप्पणी

समाधान के स्थान पर दुर्भावना ही बढ़ सकती है जिस कारण इस तकनीक को बड़ी सावधानी से अमल में लाना चाहिए।

5. **समस्या समाधान** – विवादों का समस्या समाधान परिस्थिति में परिवर्तन ऐसी कुछ अनुभूतियों से निपटने के लिए सहायता कर सकता है जो बहुधा मतभेद, मनोद्वेग, असंतोष तथा आक्रामक रुख के साथ जुड़ी होती हैं। इस तरीके का उपयोग कर रहा प्रबंधक अनुभूतियों द्वारा उत्पन्न शक्ति को विनाशकारी गतिविधियों की अपेक्षा सृजनात्मक गतिविधियों में प्रवाहित करने में सहायक हो सकता है।

   समस्या समाधान को क्रियान्वित करने के लिए संगठन सामान्यतः बाहरी परामर्शदाताओं की सेवाएं लेते हैं।

6. **विवाद उभारना या बढ़ावा देना** (Conflict Stimulation) – विवाद बढ़ाने की रणनीति विवाद के अंतः क्रियाशील दृष्टिकोण पर आधारित है जिसमें निम्न तकनीकों का समावेश किया जाता है :

   (i) **सम्प्रेषण** (Communication)

   (ii) **प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देना** (Encouraging Competition)

यह विधि शक्ति आधारित होती है तथा जीत–हार का दृष्टिकोण रखती है। यह विधि शीघ्र व निर्णयात्मक कार्य हेतु आवश्यक होती है। निम्नांकित दशाओं में इसका उपयोग किया जा सकता है–

1. शीघ्र व निर्णयात्मक कार्य आवश्यक होने पर,
2. प्रतिस्पर्धा रहित व्यवहार का लाभ उठाने वाले लोगों के विरोध में,
3. अलोकप्रिय निर्णय, अनुशासन आदि को लागू करने में।

अपनी प्रगति जांचिए

3. नेतृत्व के गुणमूलक सिद्धांत का प्रवर्तन किसने किया?

   (क) आर्डवे टीड (ख) चेस्टर वर्नार्ड

   (ग) रे.ए. किलियन (घ) आर्डवे टीड एवं चेस्टर वर्नार्ड

4. अभिप्रेरणा को 'किसी निश्चित दिशा में गतिमान होने अथवा निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निश्चित प्रेरणा' कहकर किसने परिभाषित किया है?

   (क) कोरोल शार्टल (ख) स्टेनले वेन्स

   (ग) माइकेल जे. जूसियस (घ) मैकफर लैण्ड

4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)

3. (घ)

4. (क)

4.5 सारांश

टिप्पणी

''संगठन एक इस प्रकार की प्रक्रिया है जिसमें संपूर्ण कार्य को कुछ निश्चित दायित्वों में विभक्त किया जाता है; दायित्वों को भिन्न–भिन्न पदों में वर्गीकृत किया जाता है; सभी पदों को उचित अधिकार दिए जाते हैं और पदों के अनुसार ही उचित योग्यता के कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है जिससे पूर्वनियोजित कार्य उचित समय पर किया जा सकें।''

संगठन की क्रियाओं को इस प्रकार से विभाजित किया जाता है कि इसका अध्ययन शीर्ष से प्रारंभ होता है। लेकिन विभागीकरण करते समय क्रियात्मक पहलू का भी ध्यान रखा जाता है। टेलर इस विचारधारा के जन्मदाता माने जाते हैं। परंपरावादी विचारधारा के समर्थक केवल दो ही संरचना प्रमुख मानते हैं– रेखा संगठन तथा रेखा एवं कर्मचारी संगठन। लेकिन अन्य संगठन संरचनाओं को भी इसमें शामिल कर लिया जाता है। इस विचारधारा में इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि एक प्रबंधक कितने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्य का प्रभावशाली ढंग से निरीक्षण कर सकता है।

अधिकार एक वैधानिक सही शक्ति है अर्थात यह आदेश देने अथवा कार्य कराने का अधिकार है। प्रबंधक के क्षेत्र में अधिकार शब्द का उपयोग करने पर इसका आशय है– ''अधिकार दूसरों को आदेश देने की शक्ति है। यह उपक्रम अथवा विभागीय लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, शक्ति प्राप्तकर्ता के निर्देशों के अनुरूप कार्य करने अथवा न करने का आदेश है।''

संगठन की सर्वोच्च सत्ता इसके संस्थापकों के हाथों में मानी जाती है जो इसे सर्वोच्च प्रबंधकों के हाथ में सौंप देते हैं। सर्वोच्च प्रबंधक क्योंकि सारा काम स्वयं नहीं कर पाते, अपनी सहायता के लिए सहायक अधिकारी नियुक्त करते हैं और उन्हें उनकी निपुणता व उत्तरदायित्व के अनुरूप कुछ काम सौंप देते हैं। ये सहायक प्रबंधक भी अपनी पारी में अपनी जिम्मेदारी बढ़ जाने पर आगे कुछ सहायक नियुक्त करते हैं और उन्हें सौंपे गए कार्यों के अनुरूप कुछ अधिकार सौंप देते हैं।

अलग–अलग नेताओं के द्वारा अलग–अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है। उनके नेतृत्व की शैली अलग अलग होती है। नेतृत्व की शैलियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से कई भागों में विभक्त किया जा सकता है। अधिकारों के प्रयोग के आधार पर नेतृत्व की शैली को मूलतः तीन भागों में बांटा जा सकता है – तानाशाही नेतृत्व, जनतांत्रिक नेतृत्व तथा स्वतंत्रात्मक नेतृत्व। परिणामों की दृष्टि से नेतृत्व को दो भागों में बांटा जा सकता है – उत्पादन या कार्य प्रेरित नेतृत्व तथा मानवीय संबंध प्रेरित नेतृत्व।

अभिप्रेरणा अंग्रेजी शब्द 'मोटिवेशन' (Motivation) का हिन्दी रूपान्तर है। इस शब्द की उत्पत्ति 'मोटिव' (Motive) से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है व्यक्ति में किसी एक इच्छा अथवा शक्ति का विद्यमान होना, जो उसे कार्य करने की प्रेरणा प्रदान

टिप्पणी

करता है। अभिप्रेरणा कार्य से सम्बन्धित है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति में जाग्रत किया जा सकता है। वास्तव में, अभिप्रेरणा वह मनोवैज्ञानिक उत्तेजना है। जो व्यक्तियों को काम पर बनाये रखने के साथ–साथ उन्हें उत्साहित करती है और अधिकतम संतुष्टि प्रदान करती है।

टीम निर्माण एक निपुण प्रक्रिया अवलोकनकर्त्ता या परामर्शदाता की सहायता की अपेक्षा करता है ताकि ग्रुप के कार्यों तथा अनुरक्षण भूमिकाओं की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाया जा सके। फीडबैक टीम सृजन का एक महत्वपूर्ण प्रखंड होता है जिसको सभी के दौरान या बाद में परामर्शदाता द्वारा प्रदान किया जाता है ताकि ग्रुप और साथ ही साथ सदस्यों की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाया जा सके।

4.6 मुख्य शब्दावली

- **ढांचा** : प्रारूप
- **संकुचित** : सीमित, संकीर्ण
- **पैटर्न** : पद्धति, प्रक्रिया
- **निष्पादन** : संपन्न करना
- **निपुणता** : कुशलता
- **सत्ता** : शक्ति, अधिकार
- **लीडर** : नेता, नेतृत्वकर्ता
- **उत्तरदायी** : जिम्मेदार
- **सुदृढ़** : मजबूत

4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. एक प्रक्रिया के रूप में संगठन की तीन विशेषताएं बताइए।
2. पारंपरिक अवधारणा के अनुसार संगठन की नींव किन स्तंभों पर निर्भर रहती है।
3. अधिकार (सत्ता) से क्या आशय है?
4. तानाशाही नेतृत्व के प्रकार बताइए।
5. टीम वर्क से क्या तात्पर्य है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. संगठन की अवधारणा स्पष्ट करते हुए, इसके विविध सिद्धांतों का उल्लेख कीजिए।
2. संगठन के निर्माण खंण्ड से आप क्या समझते हैं? विवेचनात्मक उत्तर लिखिए।
3. सत्ता की शक्ति और इसके वितरण संबंधी पहलुओं का विश्लेषण कीजिए।

4. नेतृत्व में अभिप्रेरणा की स्थिति का आकलन कीजिए।
5. संगठन में टीम एवं टीमवर्क की उपस्थिति रेखांकित करते हुए टीम के विकास सिद्धांत पर प्रकाश डालिए

टिप्पणी

4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- *Managing for Value*, Hamilton, PHI
- *Management*, Stoner, PHI
- *Management Concepts and Practice*, Gupta, C.B. Sultan.
- *A Guide to Maintenance Management,* Roy, B.K., Jaico
- *Management Control Systems*, Ghosh , PHI
- *Compensation Management in Knowledge*, Henderson, Person
- *Knowledge Management*, Awad, Pearson
- *Knowledge for Competitive*, Chaudhary, Harish Excel.
- *Essentials of Management*, Dubrin, Andrew, Thomson
- *Brand Management Text and Case*, Moorthi, Vikas
- *Management: Principles & Practice*, Prag, Diwan, Excel.
- *Principles and Practice of Management*, Prasad, L.M., Sultan C.

इकाई 5 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया एवं भारत में सामाजिक कल्याण और विकास

संरचना

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया : अर्थ, आवश्यकता और प्रमुख चरण; प्रदर्शन क्षेत्रों और रणनीतिक नियंत्रण बिंदुओं की पहचान
  5.2.1 नियंत्रण : अर्थ, आवश्यकता एवं प्रक्रिया (चरण)
  5.2.2 नियंत्रण की तकनीकें
  5.2.3 प्रमुख प्रदर्शन क्षेत्र की पहचान तथा नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु
5.3 भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंधन विज्ञान के सिद्धान्तों एवं तकनीकों का अनुप्रयोग
5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.5 सारांश
5.6 मुख्य शब्दावली
5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

नियंत्रण प्रबंधकीय प्रक्रिया का अंतिम चरण है। किसी भी उपक्रम अथवा उसके विभागों के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपनाई गई योजनाएं उनके मूल रूप में कार्यान्वित की जा रही हैं अथवा नहीं, यह जानने के लिए अधीनस्थों के कार्यों की जांच–पड़ताल करके उनमें आवश्यकतानुसार उचित समय पर सुधार करना 'नियंत्रण' कहलाता है। अनेक विद्वान नियंत्रण को प्रबंध का पर्यायवाची मानते हैं। जब प्रबंधक नियंत्रण का कार्य कर रहा होता है तो ऐसा लगता है कि जैसे वह उपक्रम के प्रबंध कार्य में संलग्न है। उस व्यक्ति को सरलता से हम प्रबंध दल का सदस्य स्वीकार कर लेते हैं जो दूसरे के कार्यों की जांच पड़ताल, कर उनमें संशोधन करता है और उनका मार्गदर्शन करता है। ये कुछ ऐसी धारणाएं हैं जो सामान्यतः नियंत्रण के संबंध में विद्यमान हैं। वास्तव में नियंत्रण, प्रबंध न होकर, प्रबंध का अंश मात्र है अथवा इसे प्रबंध के अनेक कार्यों में से एक कार्य माना जा सकता है।

सामाजिक कल्याण तथा राष्ट्र में विकास हेतु उचित प्रबंधन अति आवश्यक व महत्वपूर्ण कड़ी है। जैसा कि सर्वविदित है कि प्रबंधन मुख्यतः 'न्यूनतम संसाधनों द्वारा अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति के सिद्धान्त पर आधारित है। सामाजिक कल्याण व विकास हेतु संसाधनों का इष्टतम उपयोग अति आवश्यक है और हेनरी फेयाल द्वारा प्रतिपादित 'प्रबन्ध के सिद्धान्त' सामाजिक व्यवस्था में उचित समन्वय स्थापित करने हेतु अति आवश्यक है। प्रबंध के सिद्धान्तों का महत्व उनकी उपयोगिता के कारण है। यह प्रबंध के व्यवहार का उपयोगी सूक्ष्म ज्ञान देता है एवं सामाजिक विकास को अग्रसर

टिप्पणी

करने में सहायक होता है। प्रबंधक इन सिद्धान्तों को अपने उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने में उपयोग में ला सकते हैं। ये प्रबंधकों को निर्णय लेने एवं इनको लागू करने में मार्गदर्शन करते हैं।

इस इकाई में हम नियंत्रण का अर्थ, इसकी आवश्यकता, तकनीकें एवं चरणों का विवेचन करते हुए भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंध विज्ञान के सिद्धांतों तथा तकनीकों के अनुप्रयोग का अवलोकन करेंगे।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- नियंत्रण की अर्थवत्ता एवं इसके चरण को समझ पाएंगे;
- संगठन में नियंत्रण की आवश्यकता से अवगत हो पाएंगे;
- समाज हित और विकास में प्रबंध विज्ञान के अनुप्रयोग से परिचित हो पाएंगे।

5.2 संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया : अर्थ, आवश्यकता और प्रमुख चरण; प्रदर्शन क्षेत्रों और रणनीतिक नियंत्रण बिंदुओं की पहचान

संगठन में नियंत्रण की प्रक्रिया के अर्थ, अवश्यकता, प्रमुख चरण, प्रदर्शन क्षेत्र और रणनीतिक नियंत्रण के बिंदुओं की पहचान आदि तथ्यों को इस प्रकार समझा जा सकता है।

5.2.1 नियंत्रण : अर्थ, आवश्यकता एवं प्रक्रिया (चरण)

नियंत्रण शब्द की कई अवधारणाएं हैं। नियंत्रण को एक अधिशासी कार्य माना जाता है। नियंत्रण को अधिशासी नियोजन कार्य से सह संबंधित किया जाता है। नियंत्रण को किसी विशेष प्रबंध पद्धति के अंदर की विद्यमान दशा के रूप में भी व्यक्त किया जाता है। नियंत्रण को प्रबंधकीय नियंत्रण माना जाता है। जिसका आशय यह पता लगाना है कि समस्त कार्य का निष्पादन पूर्व योजना, निर्देशों, उद्देश्यों तथा उत्तरदायी सिद्धांतों के अनुरूप हुआ है या नहीं। यदि नहीं हुआ है तो उसके क्या कारण हैं, इसके लिए कौन उत्तरदायी है और साथ ही उसे सुधारने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए। अन्य शब्दों में उपक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपनाई गई योजनाएं ठीक से चल रही हैं या नहीं, यह जानने के लिए अधीनस्थों की जांच करने एवं आवश्यक सुधार करने को प्रबंधकीय नियंत्रण कहते हैं। यह एक महत्वपूर्ण प्रबंधकीय कार्य है। यद्यपि नियंत्रण शब्द नकारात्मक दृष्टिकोण को इंगित करता है परंतु प्रबंध प्रक्रिया में यह एक रचनात्मक शक्ति होता है।

नियंत्रण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो यह निश्चित करती है कि सभी कार्य पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार हो रहे हैं या नहीं। नियंत्रण की महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्न प्रकार हैं –

- **मेरी कुशिंग नाइल्स** (Marry Cushing Niles) के अनुसार, ''नियंत्रण किसी लक्ष्य या लक्ष्यों के समूह की ओर निर्देशित क्रियाओं के मध्य संतुलन बनाए रखना है।''

- **मैसी** (Massie) के अनुसार, ''नियंत्रण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा वर्तमान निष्पादन का मापन किया जाता है और कुछ पूर्व–निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मार्गदर्शन प्राप्त किया जाता है।''
- **फिलिप कोटलर** (Philip Kotler) के अनुसार, ''नियंत्रण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा वास्तविक परिणामों को अपेक्षित परिणामों के अधिकाधिक समीप लाने के प्रयास किए जाते हैं।''
- **बिली ई. गोटज** (Billy E. Goetz) के अनुसार, ''प्रबंधकीय नियोजन से आशय कार्यक्रम को सुसंगत, एकीकृत और सुस्पष्ट बनाने से है, जबकि नियंत्रण, घटनाओं को योजनाओं के अनुरूप बाध्य करने का प्रयास करता है।''

नियंत्रण की प्रक्रिया

नियंत्रण प्रक्रिया को प्रस्तुत रेखाचित्र द्वारा अग्रवत समझा जा सकता है –

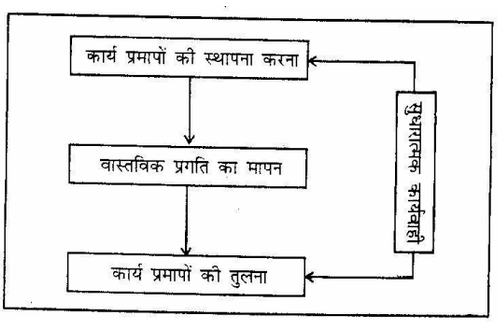

नियंत्रण प्रक्रिया वह प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कार्य करने के लिए निष्पादन के प्रमाप स्थापित किए जाते हैं। वास्तविक कार्य की प्रगति की तुलना निर्धारित प्रमापों से की जाती है तथा उनमें यदि कोई विचलन पाया जाता है तो सुधारात्मक कदम उठाए जाते हैं।

नियंत्रण की प्रक्रिया में निम्न चार तत्वों को शामिल किया जाता है –

1. कार्य प्रमापों की स्थापना
2. वास्तविक प्रगति का मापन
3. वास्तविक प्रगति की कार्य प्रमापों से तुलना
4. सुधारात्मक कार्यवाही

1. **कार्य प्रमापों की स्थापना** (Establishment of Work Standards) – प्रमाप निश्चित करने से हमारा अभिप्राय यह निश्चित करना है कि एक कार्य विशेष से हम किस परिणाम (result) की आशा एवं अपेक्षा करते हैं। हमें नियोजन तथा नीतियों की मर्यादा से प्रत्येक कार्य के लिए प्रमाप निश्चित करने चाहिए अर्थात कितने समय में किसी भी एक कार्य का क्या परिणाम प्राप्त होना चाहिए। अतः इससे यह सिद्ध हुआ कि आयोजन तथा नीतियां नियंत्रण के भी नियोजन के कुछ–न–कुछ परिणाम अवश्य निकलेंगे, परंतु बिना पूर्व–नियोजन के नियंत्रण संभव नहीं है। व्यक्तिगत अभिप्रेरणा में किसी कर्मचारी को अभिप्रेरणाएं दी जाती हैं। इन अभिप्रेरणाओं में प्रशंसा पत्र, नौकरी की सुरक्षा, विकास के समान अवसर आदि प्रमुख हैं। समूह अभिप्रेरणाएं किसी समूह

से संबंध रखती हैं अर्थात किसी कर्मचारी को अभिप्रेरणाएं न दी जाकर सभी कर्मचारियों को समूह अभिप्रेरणाएं दी जाती हैं। इन अभिप्रेरणाओं में लाभ सहकारिता, अधिलाभांश, विभागीय पारितोषिक, सुझाव व्यवस्था और समितियों का निर्धारण आदि प्रमुख हैं। जहां किसी उद्योग में कार्य ऐसा हो कि कर्मचारियों के व्यक्तिगत कार्य को मापा जा सकता है और उनका मूल्यांकन किया जा सकता है, वहां व्यक्तिगत अभिप्रेरणाएं अधिक लाभदायक होती हैं और जहां कर्मचारियों के व्यक्तिगत कार्य को मापना संभव न हो और कार्य की पूर्णता के लिए सभी कर्मचारियों को एक–दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता हो वहां समूह अभिप्रेरणाएं ही अधिक उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध होती हैं।

सामान्यतः नियंत्रण के लिए उपयुक्त मापदंडों में निम्न सात गुण होने चाहिए – (1) सरल और प्राप्य (attainable) (2) निश्चित (definite) (3) मापनीय (measurable) (4) उद्देश्यों के अनुकूल (consistent with objectives) (5) लोचपूर्ण (Flexible) – सहन सीमा, (6) सामयिक (timely) तथा (7) मितव्ययी (economical)। मानदंडों को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए यह भी आवश्यक है कि सभी उत्तरदायित्व (responsibility centres) के अलग–अलग मानदंड तय किए जाएं, जिससे उत्तरदायित्व तय करने और संबंधित पक्षों अभिप्रेरित करने में आसानी हो।

संगठन की आवश्यकता और कार्य की प्रकृति के अनुसार ये मानदंड चार प्रकार के हो सकते हैं – (क) उत्पादन या कार्य की मात्रा (quantity of output) के मापदंड, (ख) काम की किस्म या उत्तमता (quality of work) के मापदंड (ग) कार्य–प्रगति में समय (time of schedule) के मापदंड, और (घ) लागत (cost) के मापदंड।

यद्यपि काम के ये मापदंड सभी क्षेत्रों में स्थापित किए जा सकते हैं, लेकिन इनकी लागत तथ व्यावहारिकता को ध्यान में रखते हुए, प्रायः इन्हें निर्णायक बिंदुओं (critical points) तक ही सीमित रखा जाता है। एक व्यावसायिक संस्था में नियंत्रण के कुछ महत्वपूर्ण बिंदु हैं – उत्पादन, बिक्री, लागत, उधार, सुरक्षा, ख्याति, उत्पादकता, ग्राहक–संतोष, लाभ, कर्मचारी मनोबल आदि।

किसी संस्था के प्रमाप निर्धारित करते समय निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए–

(i) **प्रमाप निश्चित, न्यायसंगत एवं प्राप्त करने योग्य होने चाहिए** – किसी संस्था के प्रमाप निश्चित करते समय इस बात का पूरा–पूरा ध्यान रखना चाहिए कि प्रमाप निश्चित, न्यायसंगत और प्राप्त करने योग्य होने चाहिए अर्थात प्रमाप ऐसे होने चाहिए जिन्हें प्राप्त किया जा सके। इससे एक ओर तो कार्य करने वाले कर्मचारियों को इस बात का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है कि उन्हें क्या करना है और दूसरा लाभ यह होता है कि उसके कार्य का प्रमापित कार्य से मिलान करके आवश्यक सुधारात्मक कार्य किए जा सकते हैं।

(ii) **प्रमाप विभागीय योजनाओं एवं संस्थागत योजना के अनुकूल होने चाहिए** – प्रमाप निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऐसे प्रमाप निर्धारित न किए जाएं जो किसी विभागीय योजना के अंतर्गत न आते हों अथवा संस्था के लिए बनाई गई संपूर्ण योजना के अंतर्गत न आते हों। प्रमापों में पारस्परिक सन्तुलन होना भी आवश्यक है जैसे एक साथ काम करने वाले दो व्यक्तियों के कार्यों का मापदंड

एक जैसा ही होना चाहिए। इसी प्रकार बिक्री और उत्पादन के लक्ष्य भी एक समान ही होने चाहिए और क्रय विभाग के लक्ष्य उत्पादन विभाग की योजना के अंतर्गत होने चाहिए।

(iii) **प्रमाप मापनीय होने चाहिए** – प्रमाप ऐसे होने चाहिए जिन्हें मापा जा सके, जिससे उनके माप के आधार पर विचलनों का पता लगाकर उनका विश्लेषण किया जा सके और विचलनों के विश्लेषण के आधार पर सुधारात्मक कदम उठाए जा सकें। मापदंड या प्रमाप मध्य स्तर के होने चाहिए अर्थात प्रमाप न तो ऐसे हों जो बिना किसी परिश्रम के ही प्राप्त हो जाएं और न ऐसे हों जो प्राप्त ही न हो सकें और अंत में कर्मचारी उन्हें प्राप्त करने की चेष्टा करते–करते निराश हो जाएं।

2. **वास्तविक प्रगति का मापन** (Measurement of Actual Performance) – नियंत्रण प्रक्रिया का अगला कदम है वास्तविक निष्पादन की नाप–तौल या मापन। प्रमाप अपेक्षित निष्पादन का निर्धारण करते हैं लेकिन आवश्यक नहीं है कि अपेक्षित एवं वास्तविक निष्पादन एक ही हों। अतः वास्तविक निष्पादन का सही–सही लेखा–जोखा रखा जाना आवश्यक होता है। बहुत से ऐसे कार्य हैं जिन्हें संख्या के रूप में नापा जा सकता है, उन्हें मूर्त कार्य (tangible performance) कहते हैं, जैसे–उत्पादन की मात्रा, बर्बादी (wastage) की मात्रा, श्रमिकों की संख्या, उत्पादन लागत (Cost of production) कच्चे माल की मात्रा आदि। परन्तु ऐसी बहुत सी वस्तुएं हैं, जिनको संख्या के रूप में नापा नहीं जा सकता। अतः इन्हें अमूर्त कार्य (intangible performance) कहते हैं, जैसे प्रबंधक की कार्यकुशलता, मनोबल, या सार्वजनिक संबंध (public relation) नापने योग्य चीजों को आसानी से नापने के दो तरीके हैं –

(अ) **प्रत्यक्ष व्यक्ति दर्शन या निरीक्षण के द्वारा** (By Direct Personal Observation or Inspection)

(ब) **नियमित रिपोर्ट द्वारा** (By Regular Report from Subordinates)

कई बार यह आवश्यक होता है कि कार्य करते समय ही तुरन्त नापने का कार्य होना चाहिए ताकि यदि कार्य में त्रुटि हो तो उसे उसी समय ठीक कर लिया जाए अन्यथा विलम्ब होने पर संपूर्ण कार्य बिगड़ सकता है और बाद में उसमें सुधार करना कठिन या असंभव हो सकता है। उच्च प्रबंध तथा निम्न स्तर के प्रबंध के नापने के तरीके भी भिन्न–भिन्न होते हैं। उच्च स्तरीय प्रबंध रिपोर्ट (reports) पर अपने निर्णय को आधारित करते हैं अर्थात जो कुछ उनको रिपोर्ट किया गया हो। जबकि निम्न स्तर के प्रबंध। अपने अधीनस्थ विभागों के कार्यकलापों को जानना चाहते हैं, अतः वे भौतिक प्रमाप तथा समय प्रमाप का अधिक उपयोग करते हैं, जैसे–उत्पादन की संख्या, अस्वीकृति (rejected) वस्तुओं की मात्रा आदि।

वास्तविक प्रगति को मापते समय कई बातें ध्यान में रखनी आवश्यक हैं जैसे–(1) प्रगति के ये आंकड़े नियमित रूप से तथा निरन्तर तैयार किये जाने चाहिए, (2) प्रगति मापने के लिए मापने के मानदण्ड (standards) वैसे ही होने चाहिए, जैसे कि कार्य–माप तय करने के लिए प्रयोग किए गए हैं, (3) प्रगति के आंकड़े यथासंभव पूर्णतया सही होने चाहिए, तथा (4) जहां तक हो सके प्रगति का मापन पूर्वापक्षी (forward looking) अर्थात पहले से यह आभास देने वाला होना चाहिए कि आगे क्या होने जा रहा है। जिससे

विचलन होने से पहले ही इसका संकेत मिल जाए और इसके कारणों को दूर किया जा सके।

3. **वास्तविक प्रगति की कार्य–प्रमापों से तुलना** (Comparison of Actual Performance with Work-standards) नियंत्रण प्रक्रिया का तीसरा महत्वपूर्ण कदम है वास्तविक कार्य निष्पादन की प्रमाप के साथ तुलना करना। इसमें दो चरण आते हैं –

(1) विचलनों की सीमा ज्ञात करना, तथा (2) ऐसे विचलनों के कारणों की पहचान करना जहां प्रमाप संख्यात्मक रूप से स्थापित किए जाते हैं वहां तुलना करना सरल होता है, जैसे उत्पादन तथा विपणन में।

नियंत्रण की दृष्टि से विचलनों को दो वर्गों में बांटा जाता है– (क) नियंत्रणीय विचलन, (ख) गैर–नियंत्रणीय विचलन। नियंत्रणीय विचलनों Controllable Variations) का अभिप्राय ऐसे अन्तरों से हैं जिन्हें नियन्त्रित किया जा सकता है, जैसे कारीगरों के द्वारा जान बूझकर कम काम करना, कारखानों में कच्चा माल न पहुंच पाने के कारण काम बन्द होना आदि। नियंत्रणीय विचलनों से भिन्न गैर–नियंत्रणीय विचलन (non controllable variations) संस्था के नियंत्रण से बाहर के कारणों का परिणाम होते हैं जैसे सरकारी नीति में परिवर्तन या श्रम–संघों के द्वारा अपनी व्यापक मांगों को पूरा कराने के लिए हड़ताल का रास्ता अपनाना। इन विचलनों की संभावनाओं का पूर्वानुमान लगाना कठिन है।

विचलन विश्लेषण के कदम (Steps in Analysis of Deviations)

विचलनों के कारणों को ज्ञात करना महत्वपूर्ण होता है ताकि सुधारात्मक कार्यवाही की जा सके। विचलन विश्लेषण की प्रक्रिया के निम्न कदम हैं –

(i) **वास्तविक प्रगति और उपेक्षित प्रगति की तुलना** – विचलन विश्लेषण में सर्वप्रथम कार्य वास्तविक प्रगति का पूर्व निर्धारित अपेक्षित प्रगति से मिलान करके उसकी तुलना करने का किया जाता है जिससे यह पता लगाया जा सके कि वास्तविक प्रगति अपेक्षित प्रगति से कम है या अधिक है। सुधारात्मक कार्यवाही करने की आवश्यकता दोनों ही परिस्थितियों में होती है चाहे वास्तविक प्रगति कम हो अथवा अधिक हो क्योंकि किसी विषय विभाग की वास्तविक प्रगति का अधिक होना संपूर्ण संस्था के नियोजन को अस्त–व्यस्त करना होगा अर्थात वास्तविक प्रगति का कम होना या अधिक होना दोनों ही संस्था के हित में नहीं होते।

(ii) **विचलन के कारणों को जानना** – वास्तविक प्रगति की अपेक्षित प्रगति से तुलना करने के बाद दूसरा कार्य वास्तविक प्रगति के विचलन (अन्तर) के कारणों को ज्ञात करना होता है। इस अन्तर के अनेक कारण हो सकते हैं जैसे बिजली का गुल हो जाना, हड़ताल हो जाना, मशीनों में टूट–फूट हो जाना या समय पर आवश्यक मात्रा में कच्ची सामग्री न मिल पाना आदि। वास्तविक प्रगति और प्रमाणित प्रगति के बीच एक सहन सीमा (tolerance limit) होती है अतः जब अन्तर इस सीमा को पार कर जाते हैं तब उन पर ध्यान दिया जाना आवश्यक हो जाता है। उदाहरणार्थ, यदि एक अवधि की कमी दूसरी में पूरी हो जाती है जैसे एक सप्ताह की बिक्री दूसरे सप्ताह में पूरी हो जाना सहन सीमा के अन्दर मानी जाती है लेकिन यदि बिक्री के आंकड़ों में निरन्तर कमी

दर्शाई गई हो तो उसके विचलन के कारणों को ज्ञात किया जाएगा और उसके आधार पर आवश्यक सुधारात्मक कार्यवाही की जाएगी।

नियंत्रण की दृष्टि से अन्तर के कारणों का वर्गीकरण – नियंत्रण की दृष्टि से अन्तर के कारणों का वर्गीकरण दो प्रमुख भागों में किया जा सकता है –

(1) **नियंत्रण योग्य अन्तर** – नियंत्रण योग्य अन्तर वे होते हैं जो नियंत्रण सीमा के अन्दर माने जाते हैं अर्थात जिन पर प्रयत्न करके नियंत्रण किया जा सकता है। जैसे स्टोरकीपर द्वारा समय–समय पर कच्चे माल की व्यवस्था न करना अथवा श्रमिक एवं अन्य कर्मचारियों द्वारा जान बूझकर काम न करना आदि। ये सभी अन्तर निम्नलिखित तीन प्रमुख कारणों से हो सकते हैं – (अ) योजना में कमी (ब) नियंत्रण में कमी अथवा (स) श्रमिक वर्ग द्वारा जानबूझकर काम न करना अथवा काम में बाधा डालना।

नियंत्रण योग्य अन्तरों का अध्ययन उनसे संबंधित कर्मचारियों का उत्तरदायित्व निश्चित करने और दोषी कर्मचारियों को दण्ड देने में सहायक सिद्ध होता है।

(2) **गैर नियंत्रण योग्य अन्तर** – गैर नियंत्रण योग्य अन्तरों में वे अन्तर आते हैं जिन पर संस्था का अपना कोई नियंत्रण नहीं होता अर्थात संस्था के नियंत्रण से बाहर होते हैं जैसे – (i) सरकारी नीति में परिवर्तन (ii) श्रम संघ द्वारा हड़ताल की घोषणा (iii) बाजार में कच्ची सामग्री का अभाव एवं उसकी मूल्य वृद्धि, और (iv) बिजली आपूर्ति में सामान्य कटौती आदि।

गैर नियंत्रण योग्य अन्तरों का ज्ञान हो जाने पर उनसे निपटने के लिए तुरन्त अपनी योजना में आवश्यक परिवर्तन करते ही सफलता प्राप्त की जा सकती है।

4. **सुधारात्मक कार्यवाही** (Corrective Action)– यह नियंत्रण व्यवस्था का अन्तिम चरण है। एक सिद्धान्त है सर्वोत्तम को भी सुधारा जा सकता है। यदि त्रुटि का पता लग गया है, तो उनके कारणों को जानना चाहिए और तुरन्त सुधार के लिए ठीक निर्णय लेना चाहिए। कुछ सुधार के निर्णय ऐसे हो सकते हैं जो बिगड़े हुए कार्य को सुधार दें, इन्हें सुधारात्मक कार्यवाही (remedial actions) कहते हैं और कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जो भविष्य के लिए ही उपयोगी हो सकते हैं। वर्तमान में तो जो कुछ हो गया, उसके संबंध में कुछ भी नहीं किया जा सकता। इन्हें ''प्रतिरोधक'' (preventive) कहते हैं।

सुधारात्मक कार्यवाही करते समय भी प्रबंधकों को चार बातें ध्यान में रखनी चाहिए– (i) सुधारात्मक कार्यवाही, चाहे जो क्यों न हो तुरन्त की जानी चाहिए, (ii) सुधारात्मक कार्यवाही विचलन विश्लेषण की मजबूत आधारशिला पर अवलम्बित होनी चाहिए, अटकलबाजी या जोड़–तोड़ पर नहीं, (iii) सुधारात्मक कार्यवाही जहां तक संभव हो, संबधित कर्मचारी के मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से मेल खानी चाहिए, और (iv) सुधारात्मक कार्यवाही उसी स्तर के प्रबंधकों द्वारा आरम्भ करायी जानी चाहिए जिस स्तर पर विचलन रिकार्ड किए जाते हैं।

जार्ज और **टैरी** के अनुसार, ''सुधार के बिना नियंत्रण शून्यवत है तथा इसका कोई उपयोग नहीं है।''

5.2.2 नियंत्रण की तकनीकें

नियंत्रण तकनीकों को दो भागों में बांटा जा सकता है – (अ) परम्परागत नियंत्रण तकनीकें, (ब) नियंत्रण की आधुनिक तकनीकें।

(अ) परम्परागत नियंत्रण तकनीकें

परम्परागत नियंत्रण तकनीकों को इस प्रकार समझा जा सकता है–

1. लागत नियंत्रण (Cost Control) – लागत नियंत्रण का उद्देश्य उत्पादन की लागत को न्यूनतम करना है जिससे कि लाभ को अधिकतम किया जा सके। इसके लिए हमें कुल लागत का ही नहीं अपितु विभिन्न अवस्थाओं में अलग–अलग मदों पर जो लागत आती है उसका भी पता लगाना आवश्यक होता है। इस प्रकार लागत के विभिन्न तत्वों की जानकारी आवश्यक है। इसके द्वारा कच्चे माल की लागत में कमी, कुशल पर्यवेक्षक उत्पादन के उन्नत साधनों या विधियों का प्रयोग, एवं कार्य करने के तरीकों में सुधार करके की जाती है। कारखाना तथा कार्यकाल में कमी कुशल संगठन, नियोजन तथा अभिप्रेरणा द्वारा की जाती है।

- **लागत नियंत्रण के आवश्यक तत्व** (Essentials of cost control)
  1. लागत का विश्लेषण करना तथा इसके प्रत्येक शीर्षक के लिए लागत के प्रमापों की स्थापना करना।
  2. उपरोक्त शीर्षकों के अंतर्गत होने वाले वास्तविक कार्यों के लेखे तैयार करना।
  3. वास्तविक लागत तथा लागत में यदि कोई अंतर हो तो उसके लिए अंतर का विवरण रखना।
  4. इन स्तरों का विश्लेषण करना और उसकी जिम्मेदारी तय करना।
  5. सुधारात्मक कार्यवाही (corrective action) करना।
- **लाभ** (Advantages)
  - लागत नियंत्रण से कीमतें कम रखने में सहायता मिलती है, जिससे बिक्री बढ़ती है और बिक्री बढ़ने से लाभ में वृद्धि होती है।
  - इससे कच्चे माल के क्रय, संग्रह तथा उपयोग में होने वाली हानि तथा अव्यवस्था की रोकथाम में सहायता मिलती है।
  - कच्चे माल की भांति लागत–नियंत्रण प्रणाली में श्रम की लागत भी समय और गति अध्ययन के द्वारा प्रमाणित कर दी जाती है, जिससे श्रम–लागत पर नियंत्रण रहता है।
  - लागत–नियंत्रण प्रणाली को लागू करने का अर्थ है, कच्चे माल के उपयोग की मात्रा पर नियंत्रण, इससे इनके उपयोग में होने वाले क्षय और दुरूपयोग को रोका जा सकता है।
  - लागत–नियंत्रण लागू करने से प्रबंधकों को मशीन तथा संयंत्र के सही उपयोग आदि के बारे में कई प्रकार की ऐसी जानकारी भी मिलती है, जिससे उन्हें अपने लाभ–हानि सन्तुलन या सम–विच्छेद बिंदु (break event point) को समझने में आसानी रहे।

- इसकी सहायता से लाभ–हानि सन्तुलन–बिंदु आसानी से निकाला जा सकता है जो कि उत्पादन के पैमाने (scale) को तय करने में लाभदायक रहता है।

2. प्रमाप लागत लेखांकन (Standard Costing) - यह अत्यंत महत्वपूर्ण तकनीक है। इस तकनीक के प्रमापों के साथ वास्तविक विचलनों को जाना जाता है तथा नियंत्रण व सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है। लागत के विभिन्न भागों, जैसे– मजदूरी, उपरिव्यय, कच्चा माल आदि हेतु लागत स्तर तय किए जाते हैं। वास्तविक कार्य प्रबन्धित किए जाते हैं वास्तविक लागत तथा प्रमाप लागत की तुलना करके विचलन को जाना जाता है तथा भविष्य में विचलनों को रोकने के प्रयास किए जाते हैं।

3. आंतरिक एवं बाह्य अंकेक्षण (Internal and External Audit) - आंतरिक लेखा परीक्षक संगठन का स्वतंत्र कर्मचारी होता है। वह वित्तीय व अन्य कार्यों की स्वतंत्र लेखा परीक्षा करता है। वह ईमानदारी से कंपनी की नीतियों, कार्यों, नियोजन, कर्मचारी व अधिकारियों के प्रत्येक कार्य और वहां तक प्रबंध का भी मूल्यांकन करता है, प्रयोगात्मक सुझाव देता है व बाह्य लेखा परीक्षण को आसान बनाता है।

सभी कम्पनियों के लिए बाहरी वित्तीय, लागत, सामाजिक व निजी लेखा परीक्षा करवाना कानूनी रूप से जरूरी है। यह योग्य चार्टर्ड एकाउंटेंट द्वारा की जाती है। यह व्यवसाय के हर पहलू की क्षमताओं के बारे में जानकारी देता है।

4. प्रबंधकीय सांख्यिकीय प्रतिवेदन (Preparatio-of Managerial Statistical) - प्रत्येक व्यावसायिक संस्था में अनेक प्रकार के आवश्यक आंकड़े आसानी से एकत्र किए जा सकते हैं और उनका समुचित विश्लेषण करके नियंत्रण की दृष्टि से उनका उपयोग सार्थक ढंग से किया जा सकता है। यह विश्लेषण या तो ऐतिहासिक (historical) या पूर्वानुमान (forecasting) की प्रकृति का हो सकता है। इस विश्लेषण को या तो तालिका के रूप में (tabular form) या चार्ट (Chart) के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रायः प्रबंधक आंकड़ों को चार्ट के रूप में देखना पसंद करते हैं क्योंकि उन्हें समझना आसान होता है और उनका विवेचन करना आसान होता है। यथासंभव सांख्यिकीय रिपोर्ट की उपनीति बरतनी चाहिए जिससे कि उसके माध्यम से आसानी से यह पता लगाया जा सके कि उसकी क्या सम्भावना हो सकती है। इसके लिए 'Time series Analysis' और वह भी उचित आधार पर आधारित होनी चाहिए जो कि अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि आंकड़ों को इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि जिससे उनकी तुलना किसी पूर्व–निर्धारित मानक से आसानी से की जा सके। वैसे, इन आंकड़ों का प्रयोग करते समय तथा उनका विवेचन करके नियंत्रण के उपकरण के रूप में प्रयोग करने की जो सीमाएं हैं उनको भी ध्यान में रखना अति आवश्यक है।

5. स्कंध नियंत्रण (Inventory Control) – संगठन विभिन्न प्रकार की मात्रा का स्कंध उपयोग करते हैं। स्कंध अ.ब.स. विश्लेषण, आर्थिक आदेश मात्रा द्वारा किया जाता है।

स्कंध का 'निर्गमन करने के लिए बिन कार्ड, लिफो, फिफो प्रणाली का उपयोग किया जाता है। हर वस्तु को वैज्ञानिक ढंग से रखा जा सकता है। सही मात्रा में ऑर्डर देना, उत्पाद का निर्गमन करना आदि उत्पाद की प्रकृति पर निर्भर करता है।

6. उत्पादन नियंत्रण (Production Control) – उत्पादन नियंत्रण का तात्पर्य यह देखना होता है कि उत्पादन का कार्य पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार हो रहा है

अथवा नहीं। इसके लिए संपूर्ण उत्पादन–प्रक्रिया को इस प्रकार से संयोजित, निर्देशित तथा नियन्त्रित किया जाना चाहिए कि उपलब्ध साधनों का समुचित उपयोग हो सके, बर्बादी की मात्रा न्यूनतम हो तथा न्यूनतम लागत पर अधिकतम उत्पादन संभव हो सके। वह तभी संभव होगा जबकि कार्य पूर्ण कुशलता या क्षमता के अनुसार काम कर रहे हैं और समय नष्ट नहीं कर रहे हैं। साथ ही मशीन तथा अन्य उपकरणों का उपयोग निर्धारित क्षमता के अनुसार किया जा रहा है। वास्तव में, उत्पादन नियंत्रण उत्पादन प्रक्रिया में सामग्री के कच्चे माल की स्थिति में लेकर निर्मित माल की स्थिति तक से व्यवस्थित प्रवाह को नियन्त्रित करता है। यह संस्था में आने वाले विक्रय आदेशों (orders) को एकत्र करता है, उन्हें उत्पादन आदेशों में बदलकर कारखाने में उत्पादन के लिए ऐसे गति एवं क्रम में लगाता है कि कारखाने में उत्पादन के लिए ऐसे गति एवं क्रम में लगाता है कारखाना इस आसानी से संभाल सके और उसके लिए कम से कम आंतरिक उथल–पुथल करनी पड़े।

7. स्थायी आदेश देना (Standing order) – प्रबंधकीय नियंत्रण के लिए स्थायी आदेशों का प्रयोग होता है। इसमें प्रबंधक जिनको शक्ति का प्राधिकरण देते हैं वह उनकी सीमाएं भी निश्चित करता है। स्थायी आदेश प्रबंध द्वारा नियत होते हैं और कर्मचारियों द्वारा अपनाए जाते हैं। यह नियम, नीतियों, विधियों और कार्यों से संबंधित हो सकते हैं।

8. व्यक्तिगत अवलोकन (Personal Observation) – व्यक्तिगत अवलोकन नियंत्रण की सबसे प्राचीन तकनीक है। निम्न स्तर पर नियंत्रण हेतु इसे बहुत अधिक उपयुक्त माना जाता है। नियंत्रण में, व्यक्तिगत अवलोकन का आज भी महत्व है यद्यपि नियंत्रण की नई–नई वैज्ञानिक विधियां निकल चुकी हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अनेक सूचनाएँ व्यक्तिगत अवलोकन से ही ज्ञात की जा सकती हैं और बिना इसके उसकी जानकारी हो ही नहीं सकती। अनेक सूचनाएं या तथ्य प्रबंधक अपने कमरे में बैठकर रिपोर्ट चार्ट या आंकड़ों से नहीं ज्ञात कर सकता है। अनेक बातें जो आंकड़ों से स्पष्ट नहीं होती हैं, स्वयं देखकर ही हो सकती है। यह प्रबंधक को कर्मचारियों से व्यक्तिगत रूप से बात करने, विचार विमर्श करने का भी अवसर प्रदान करता है। इसके माध्यम से व्यक्तियों की कठिनाइयों, दुःखों और अकुशलताओं को भी दूर किया जा सकता है। व्यक्तियों से व्यक्तिगत रूप से मिलकर सुझाव प्राप्त किया जा सकता है। प्रायः इस माध्यम से बहुमूल्य सुझाव प्राप्त हो सकते हैं। व्यवहार में, देखा गया है कि एक व्यक्ति जो काम नहीं करता और कुशल भी है, प्रबंधक के सामने आने पर कुशलता से काम करने लगता है। किसी भी स्थान पर उसकी उपस्थिति हो व्यक्तियों को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त होती है। यहाँ पर यह बात लागू होती है कि जो काम लिख–पढ़कर नहीं हो सकता उसे आमने–सामने बात करके किया जा सकता है। इस प्रकार, व्यक्तिगत अवलोकन, प्रायः कुछ परिस्थितियों में, नियंत्रण का अत्यन्त उपयोगी उपकरण सिद्ध होता है।

9. अभिप्रेरणा द्वारा नियंत्रण (Control of Motivation) – कर्मचारियों को अभिप्रेरित करके उनकी क्रियाओं पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है। यह एक प्रकार से स्व–नियंत्रण है। कर्मचारियों को अभिप्रेरित करके वांछित परिणामों की प्राप्ति

की जा सकती है। अभिप्रेरित कर्मचारी आपस में स्वतः सहयोग करते हैं जिससे स्वतः नियंत्रण स्थापित हो जाता है।

10. नीतियों द्वारा नियंत्रण (Control by policies) – नीतियाँ संस्था के कार्यों के निष्पादन में मार्गदर्शक तत्वों के रूप में काम करती हैं। इनके आधार पर भविष्य में क्या करना है, इसका पहले से ही निर्धारण करना संभव हो जाता है।

11. तदर्थ निर्णयों द्वारा नियंत्रण (Control by Adhoc Decisions) – यदि योजना के निर्माण के समय भावी समस्याओं की जानकारी नहीं हो पाती है तो समस्याओं के उदय होने पर भी प्रबंधक तदर्थ निर्णय लेकर नियंत्रण प्रणाली को बनाए रख सकते हैं।

12. अनुशासनात्मक कार्यवाही द्वारा नियंत्रण (Control by Disciplinary Action) – यह विधि एक ऋणात्मक विधि है। इसके अन्तर्गत यदि अधीनस्थ गलत कार्य करता है तो उसे दण्ड दिया जाता है।

13. उदाहरण द्वारा नियंत्रण (Control by Example) – एक पुरानी कहावत है कि ''कहने से करना भला''। यदि एक उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों की क्रियाओं पर नियंत्रण स्थापित करना चाहता है तो उसे अपने आचरण एवं व्यवहार का आदर्श उदाहरण अपने अधीनस्थों के सम्मुख प्रस्तुत करना था। जैसे– सही समय पर आना आदि। उनका आचरण अधीनस्थों के लिए एक आदर्श बन जाता है।

14. गुणवत्ता नियंत्रण (Quality Control) – किस्म नियंत्रण उत्पादन नियंत्रण का प्रमुख अंग है, परन्तु यह इतना महत्वपूर्ण है कि इसका अलग से अध्ययन करना आवश्यक है। किस्म नियंत्रण का तात्पर्य उत्पादित वस्तुओं की किस्म पर नियंत्रण करने से है। इसके अन्तर्गत प्रमाणित या पूर्व निश्चित किस्म के वास्तविक निर्मित वस्तु की किस्म की तुलना करके यह पता लगाना होता है कि निर्मित माल की किस्म प्रमाणित किस्म की तरह ही है या उनमें कुछ अन्तर है। यदि उनमें अन्तर है तो उसके कारण का पता लगाना होता है। इसमें यह भी देखना होता है कि जितनी भी वस्तुएँ तैयार हुई हैं उन सभी की किस्म एक समान है या नहीं।

किस्म (गुणवत्ता) नियंत्रण की प्रमुख परिभाषाए

- **डॉ. डब्लू. आर. स्प्रीगल** के अनुसार, ''उत्पादन की किस्म की व्याख्या उसके विभिन्न लक्ष्यों के योग के रूप में की जाती है, जैसे–आकृति, आकार, रचना, शक्ति, कारीगरी, समायोजन तथा अन्तिम रूप–रंग।''
- **सिगमण्ड पी. जे.** के अनुसार, ''किस्म नियंत्रण का आशय यह निश्चित करता है कि ग्राहकों को वही मिलता है जिसको कि खरीदने का वह विश्वास रखता है। यह लागत को कम करने का कार्यक्रम है।''
- **जे. ए. शुबिन** के अनुसार, ''किस्म नियंत्रण से आशय निर्धारित प्रमापों से विचलन तथा पहचानने योग्य दोषों के कारणों की मान्यता प्रदान करना एवं उन्हें दूर करना है।''

- **अल्फर्ड एवं बीटी** के अनुसार, ''किस्म नियंत्रण प्रबंध की एक ऐसी तकनीक अथवा तकनीकों का समूह है जिसके द्वारा एक सी स्वीकृति योग्य किस्म के उत्पादन तैयार किये जाते हैं।"
- **एच. डी. शोरी** के अनुसार, ''किस्म नियंत्रण अनिवार्य रूप से कच्चे माल को प्राप्त करने से लेकर निर्मित माल के लादने के विभिन्न व्यय होते हैं उनमें कमी लाने एवं निरीक्षण लागतों को न्यूनतम करने से संबंधित है। यह एक उत्पादकता तकनीक है जिसका उद्देश्य इन दोनों प्रकार की लागतों को कम करना है। यह एक निवाराणात्मक (preventive) तकनीक भी है, क्योंकि इसका एकमात्र उद्देश्य शुरू में ही ऐसी व्यवस्था कर देना है कि जिससे दोष उत्पन्न न हो सकें।''

(ब) नियंत्रण की आधुनिक तकनीकें

नियंत्रण की आधुनिक तकनीकों को इस प्रकार समझा जा सकता है–

1. बजटरी नियंत्रण

जार्ज आर. टैरी के शब्दों में, ''बजट भावी आवश्यकताओं का एक अनुमान होता है जो एक व्यवस्थित आधार पर संस्था की कुछ या सभी कार्यवाहियों के लिए एक निर्धारित समय अवधि के लिए बनाया जाता है।''

बजट शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच भाषा के "BONGETTEES" से हुई है जिसका अर्थ है– चमड़े की एक थैली (leather pouch) अर्थात जिसमें अनुमानित व्ययों को पूरा करने के लिए वित्त को एकत्रित करके रखा जाता है। वास्तव में, बजट तैयार करने के पीछे यही एक मुख्य आधार होता है। बजट संख्यात्मक पदों में वर्णित सम्भावित परिणामों का विवरण होता है। इसे जिस अवधि के लिए बनाया जाता है उससे पहले ही तैयार किया जाता है। बजट नियोजन के साथ–साथ नियंत्रण का एक यन्त्र होता है। यह एक प्रमाप के रूप में भी सहायता करता है जिसके साथ वास्तविक परिणामों की तुलना की जाती है। बजट को एक दी हुई अवधि के लिए आर्थिक योजना के रूप में भी समझा जा सकता है। बजट बनाना बजटों को तैयार करने की एक प्रक्रिया है।

सारभूत रूप से, बजट बनाना एक प्रबंधकीय प्रक्रिया होती है जिसका संबंध नियोजन, समन्वय तथा नियंत्रण से होता है। व्यावसायिक बजट एक योजना होती है जो एक संस्था से भावी निश्चित समय की अवधि के लिए कार्य संचालन के सभी चरणों को सम्मिलित करती है। यह एक निश्चित भावी अवधि के लिए तैयार की जाती है तथा सभी बातों को विस्तृत तथा संख्यात्मक पदों में वर्णित करता है। इस प्रकार बजट को एक विवरण के रूप में समझा जा सकता है जो विशिष्ट लक्ष्यों तथा उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एक निश्चित अवधि में लागू की जाने वाली नीतियों तथा योजनाओं को वर्णित करता है।

बजटीय नियंत्रण का अर्थ (Meaning of Budgetary Control)

नियंत्रण की यह अत्यधिक प्रचलित एवं महत्वपूर्ण विधि है जिसके अनुसार नियंत्रण बजट के माध्यम से किया जाता है। इसके लिए योजनाओं को बजट का रूप दे दिया जाता है और इसी बजट के माध्यम से यह देखा जाता है कि प्रगति ठीक हो रही है या नहीं, और यदि नहीं तो अन्तर कहां पर है, और उसके लिए सुधारात्मक कार्यवाही

की जाती है। इस प्रकार, व्यावसायिक, कारोबार का नियंत्रण बजट के अनुसार किया जाता है। बजटीय नियंत्रण की एक उचित परिभाषा लन्दन की सी.आई.एम.ए. (CIMA. London) ने दी है। उसके अनुसार, ''बजटीय नियंत्रण कार्यकारी अधिकारियों के उत्तरदायित्व को निश्चित नीति योजना के अनुरूप विभागीय बजटों के रूप में निर्धारित करना तथा वास्तविक प्रगति की बजट में निर्धारित लक्ष्यों से तुलना करना, जिसमें या तो उस नीति के उद्देश्यों को व्यक्तिगत प्रयासों के द्वारा प्राप्त किया जा सके अथवा उसमें परिवर्तन के लिए आधार प्रस्तुत करना है।''

बजट तैयार करना वास्तव में भावी निश्चित समय के लिए संख्यात्मक, पदों (numerical terms) में योजना को तैयार करना है। वे निश्चित परिणाम के आधार पर बनाए गए अनुमान होते हैं। बजट वित्तीय पदों में हो सकते हैं जैसा कि आगम व्यय बजट या पूंजी बजट (capital budge) में होता है या किसी गैर–वित्तीय पद में हो सकते हैं जैसा कि प्रत्यक्ष श्रम बजट (direct labour budge) सामग्री बजट आदि में होता है।

बजट बनाने की कार्यविधि (Procedure of Preparing Budget)

एक व्यावसायिक संस्था में बजट बनाने के लिए निम्नलिखित कार्याविधि से कार्य किया जाता है–

(i) **बिक्री का अनुमान लगाना** – सर्वप्रथम बिक्री के पूर्वानुमान लगाए जाते हैं क्योंकि अन्य अनेक सहायक बजट का पूर्वानुमानों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर करते हैं। बिक्री के पूर्वानुमान लगाकर व्यवसाय की स्थायी नीतियां निर्धारित की जाती हैं।

(ii) **निर्णायक तत्वों की व्याख्या करना** – बिक्री के पूर्वानुमान लगाने और स्थानीय नीतियां निर्धारित करने के बाद बजट निर्माण से संबंधित निर्णायक तत्वों की स्पष्ट व्याख्या की जाती है। जिससे बजट से संबंधित किसी व्यक्ति को कोई सन्देह न रहे।

(iii) **विभागीय बजट बनाना** – नए बजट की अवधि प्रारंभ होने और वर्तमान बजट की अवधि समाप्त होने से पहले सभी विभागों के पृथक–पृथक प्रारंभिक बजट बनाए जाते हैं। विभागीय बजट में विभाग से संबंधित आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(iv) **मास्टर बजट बनाना** – सभी विभागीय बजट तैयार हो जाने पर उनके आधार पर संस्था का एक सामूहिक बजट बनाया जाता है। जिसमें सभी विभागीय बजटों का समन्वय एवं समावेश होता है। इस बजट को मास्टर बजट कहते हैं।

(v) **बजट को अन्तिम रूप देना** – अन्त में व्यावसायिक योजनाओं को ध्यान में रखकर बजट को अन्तिम रूप दिया जाता है और इस प्रकार बजट बनाने की कार्यविधि सम्पन्न हो जाती है।

बजट के प्रकार (Types of Budgets)

मुख्य रूप से, बजट दो प्रकार का होता है – (1) स्थैतिक या स्थिर बजट, और (2) परिवर्तनशील या लोचपूर्ण बजट।

(1) **स्थैतिक बजट** (Fixed or Static Budget) – स्थैतिक बजट का प्रयोग अधिकांशतः सरकारी व संस्थागत संगठनों में होता है। अब धीरे–धीरे इसका प्रयोग व्यवसाय में भी होने लगा है। इस प्रकार के बजट में हम उन परिवर्तनों पर ध्यान नहीं देते जो कि बजट अवधि में हो सकते हैं। इसमें यह मानकर चला जाता है कि आय, बिक्री आदि का अनुमान हम बहुत कुछ सही–सही लगा सकते हैं। इस प्रकार, इसमें एक ही योजना होती है और उन अवधि में होने वाले परिवर्तनों पर ध्यान नहीं दिया जाता। इस प्रकार के बजट को व्यावहारिक बजट नहीं कहा जा सकता। क्योंकि व्यवहार में हम देखते हैं कि उत्पादन के विभिन्न स्तर पर प्रति इकाई लागत बदल जाती है, यही नहीं परिवर्तन की मात्रा भिन्न–भिन्न उत्पादों पर भिन्न–भिन्न होती है या उसी वस्तु के उत्पादन पर भिन्न–भिन्न विषयों पर भिन्न–भिन्न होती है। यह स्थैतिक बजट इन परिवर्तनों को ध्यान में नहीं रखता, इसीलिए इसका प्रयोग सीमित ही होता है। इसका प्रयोग किसी एक विशेष कार्यक्रम के लिए भी किया जा सकता है जैसे किसी शोध प्रयोजन (research project) – के लिए इस प्रकार का बजट तैयार किया जा सकता है।

(2) **परिवर्तनशील बजट** (Variable Budget) – व्यवहार में हम देखते हैं कि किसी व्यवसाय की आय या बिक्री का अनुमान हम सही–सही नहीं लगा सकते हैं। अतः हम स्थिर बजट का सहारा नहीं ले सकते हैं और हमें परिवर्तनशील बजट का सहारा लेना पड़ता है ऐसे बजट तैयार करते समय हम यह मानकर चलते हैं कि बजट अवधि में कुछ परिवर्तन हो सकते हैं और उसी आधार पर हमें बजट तैयार करना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखकर इस प्रकार के बजट में उत्पादन की विभिन्न मात्रा पर लागत का अनुमान करके कई योजनाएं तैयार करते हैं। इससे यह आसानी होती है कि यदि उत्पादन में परिवर्तन होता है तो उसके लिए हमें फिर से नया बजट नहीं तैयार करना पड़ता। इस प्रकार यदि हमारा बजट लोचपूर्ण होता है तो इसके माध्यम से नियंत्रण करने में कठिनाई नहीं होती।

बजट अनेक प्रकार के बनाए जाते हैं। कुछ सामान्य प्रकार के बजट जो स्थैतिक व परिवर्तनशील दोनों ही हो सकते हैं, निम्नलिखित हैं –

(अ) **आगम बजट** (Revenue Budget)– इस बजट में एक निश्चित अवधि में, खरीदे हुए या निर्मित माल के विक्रय से होने वाली आय का पूर्ण विवरण रहता है।

(ब) **पूंजी बजट** (Capital Budget)– इसमें उस अनुमानित पूंजी व्यय का पूर्ण विवरण रहता है जो कि प्लाण्ट–मशीनरी, भूमि या भवन आदि स्थायी सम्पत्तियों पर व्यय किया जाना हो। इसके साथ ही उनके रख–रखाव पर किए गए व्यय का भी विवरण सम्मिलित होता है।

(स) **व्यय बजट** (Expenditure Budget)– इसमें प्रचलित अनुमानित परिचालन व्यय (operating expenses) का विवरण रहता है। इसको दो भागों में बांटा जा सकता है – निर्माणी व्यय बजट (manufacturing expenses budget) तथा वितरण व्यय बजट (distribution expenses budget)। पहले वाले बजट में उत्पादन से संबंधित व्ययों जैसे, श्रम, सामग्री तथा विभिन्न कारखानों व्यय आदि का अनुमान होता है और दूसरे में उन वस्तुओं के वितरण से संबंधित व्ययों, जैसे विज्ञापन व्यय, कमीशन, छूट, स्टोरेज पर व्यय आदि का अनुमानित विवरण होता है।

(द) **रोकड़ बजट** (Cash budget)– इसमें एक निश्चित अवधि के लिए रोकड़ की प्राप्ति तथा भुगतान का अनुमानित विवरण दिया रहता है। इससे यह पता लगता है कि व्यवसाय में भविष्य में पर्याप्त मात्रा में रोकड़ उपलब्ध होगा या नहीं। यदि रोकड पर्याप्त मात्रा में न होगा तो उसकी व्यवस्था किस प्रकार करनी होगी। इस बजट को अत्यन्त सावधानी से बनाना चाहिए क्योंकि रोकड़ का अधिक व कम होना दोनों ही ठीक नहीं है। यदि अधिक हो तो उसका लाभप्रद उपयोग न हो पायेगा यदि कम है तो बाह्य स्रोतों से उसे प्राप्त करने की कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है।

(य) **विक्रय बजट** (Sales budget)– इसमें इस अनुमान का विवरण दिया रहता है कि एक निश्चित अवधि में बिक्री से कितनी धनराशि प्राप्त होगी। यह अवधि एक वर्ष, तीन वर्ष या पांच वर्ष हो सकती है।

(र) **उत्पादन बजट** (Production budget)– यह एक निर्माणी संस्था के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इसी के आधार पर श्रम बजट, सामग्री बजट, कारखाने का उपरिव्यय बजट आदि तैयार किया जाता है। अनुमानित बिक्री के आधार पर उत्पादन प्रबंधक यह अनुमान लगाता है कि वर्ष भर में कितना उत्पादन किया जाना है यह अनुमान अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रबंधक को चाहिए कि वह ऐसा बजट तैयार करे जिससे न तो निर्मित माल को अधिक समय तक संग्रह करने की आवश्यकता पड़े और न ही निर्मित माल इतना कम हो कि ग्राहकों को समय पर माल ही न भेजा जा सके। अतः भावी मांग के आधार पर किस समय माल तैयार किया जाए यह अत्यन्त आवश्यक है। उत्पादन बजट में इसी का सावधानी से पूर्ण विवरण दिया जाना चाहिए।

(ल) **सामग्री बजट** (Materials Budget)– इसमें उत्पादन करने के लिए जितनी भी प्रत्यक्ष सामग्री की आवश्यकता होती है उसका पूर्ण विवरण दिया रहता है। अनुमानित उत्पादन के आधार पर कितनी और कौन–कौन सी सामग्री की आवश्यकता होगी इसका अनुमान लगाना होगा तथा उसके क्रय के लिए उसी के अनुसार एक समय सारणी तैयार करनी होगी। अनुमान लगाते समय सामग्री के मूल्य और किस्म पर भी ध्यान रखा होगा। यह देखना होगा कि इतनी अधिक सामग्री की व्यवस्था न हो जाए कि उसकी आवश्यकता न पड़े और संग्रहण की समस्या का सामना करना पड़े और साथ ही ऐसा न हो कि बाद में उसका मूल्य गिर जाए और उसके कारण हानि उठानी पड़े।

(व) **प्रत्यक्ष श्रम बजट** (Direct Labour Budget)– निश्चित अवधि में निर्धारित उत्पादन के लिए कितने श्रमिकों की आवश्यकता पड़ेगी, इसका अनुमान लगाकर यह बजट तैयार किया जाता है। इसका अनुमान प्रत्येक विभाग अनुभाग के लिए अलग अलग लगाया जाना चाहिए। इसमें श्रम लागत की गणना करके उसका भी विवरण होना चाहिए। आवश्यकतानुसार इसका भी विवरण होना चाहिए कि कितने प्रकार के श्रमिक, जैसे, प्रशिक्षित, कुशल, सामान्य या अकुशल या दक्ष आदि की आवश्यकता पडेगी और उन्हें किस किस स्रोत से प्राप्त किया जा सकता है।

(श) **मास्टर बजट** (Master Budget)– एक संस्था के लिए आवश्यकतानुसार कई प्रकार के बजट बनाए जाते हैं फिर उनको समन्वित करके पूरी संस्था के लिए एक मास्टर बजट तैयार किया जाता है। यह बजट पूरी संस्था के उद्देश्यों को समन्वित ढंग से प्राप्त करने में अत्याधिक सहायता पहुंचाता है। इसके द्वारा संस्था की दृष्टि से सभी

बातें, योजनाएं, कार्यक्रम, लक्ष्य, उद्देश्य आदि सुनिश्चित व स्पष्ट हो जाते हैं। इसी के आधार पर अनुमानित आय का व्यय का पता लगाकर अनुमानित लाभ का भी पता लगाया जा सकता है और यह देखा जा सकता है कि वह पर्याप्त होगा या नहीं। यदि उसमें कमी दिखाई पड़ती है तो बजट में आवश्यक समायोजन करके उसमें सुधार किया जा सकता है।

निष्पादन बजटिंग (Pertormance Budgeting)

निष्पादन बजटिंग में संगठन के सामान्य एवं विशेष उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए उसके कार्य निष्पादन का मूल्यांकन निहित होता है। इसके लिए संगठन के अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों ही उद्देश्यों के संबंध में पूर्ण जानकारी आवश्यक है। प्रबंध के विभिन्न स्तरों का उत्तरदायित्व उनसे प्रत्याशित परिणामों तथा उनको दिये गए अधिकारों के संदर्भ में पूर्व–निर्धारित होना चाहिए। अन्य शब्दों में निष्पादन बजटिंग के लिए संगठन के प्रत्येक अधिकारी का उत्तरदायित्व निश्चित करना तथा इसके कार्यकलापों का निरन्तर मूल्यांकन आवश्यक है। निष्पादन बजटिंग के मुख्य तत्व निम्न प्रकार हैं–

(1) प्रत्येक प्रबंधकीय स्तर के लिए बजट तैयार किया जाता है। संबंधित प्रबंधक अपने स्तर पर बजट में दी गयी एक निश्चित अवधि के कार्य निष्पादन के लिए उत्तरदायी होता है।

(2) अधिकारी द्वारा नियन्त्रित की जाने वाली विभिन्न लागतों के लिए उत्तरदायित्व तथा अधिकार का क्षेत्र निर्धारित कर लिया जाता है। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक व्यक्ति केवल उन्ही लागतों के लिए उत्तरदायी होता है जो उसके द्वारा नियंत्रणीय है।

(3) जो कार्य एक अधिकारी को सौंपा गया है, उसके लिए उसे पर्याप्त अधिकार भी दिये जाते हैं।

निष्पादन बजट बनाने हेतु निम्न कदम उठाए जाने चाहिए ताकि वांछित उद्देश्य प्राप्त किये जा सकें।

- प्रबंध के प्रत्येक स्तर का उत्तरदायित्व तथा अधिकार दर्शाते हुए एक संगठन चार्ट तैयार किया जाना चाहिए।
- निष्पादन बजट ऊपर से थोपा नहीं जाना चाहिए। जिस अधिकारी के कार्यक्षेत्र से संबंधित बजट बनाया जाना हो, उसे विश्वास में अवश्य लेना चाहिए।
- संबंधित अधिकारी को सामयिक प्रतिवेदन, विवरण जिसमें बजट तथ्यों पर वास्तविक निष्पादन के आंकडे हो, निरन्तर प्रस्तुत किये जाने चाहिए ताकि संबंधित अवधि में सुधार के लिए उचित कदम उठाए जा सकें।
- प्रतिवेदन विवरण आदि समय पर एवं शुद्धता से नियमित आधार पर तेयार किये जाने चाहिए।

बजटीय नियंत्रण के लाभ (Advantages of Budgetary Control)

बजटीय नियंत्रण के अनेक लाभ हैं। प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं–

(1) यह प्रबंधकों को एक समन्वित योजना तैयार करने के लिए बाध्य करता है और उससे एक बजट का रूप मिलता है। यह योजना की प्रक्रिया को वास्तविक परिणात्मक लक्ष्यों में बदल देता और इस प्रकार योजना को एक वास्तविक स्वरूप प्राप्त

हो जाता है। साथ ही यह प्रबंधक को बाध्य करता है कि वह उपलब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग करे जिसमें बजट संबंधी अनुमानों को प्राप्त किया जा सके।

(2) यह प्रबंधक को अपने अधिकारों एवं उत्तरदायित्वों को स्पष्ट रूप से सौंपने में सहायता करता है। यह संस्था के संगठन में सुधार लाता है क्योंकि प्रभाव पूर्ण बजट बनाने के लिए यह आवश्यक है कि संगठन संबंधी सभी सर्वोत्तम व्यवहारों एवं प्रणालियों को अपनाया जाए।

(3) यह संस्था में काम करने वाले लोगों में उचित समन्वय, सूझबूझ तथा सहयोग को बढ़ावा देता है, विशेष रूप से जब अधिक व्यक्ति बजट की तैयारी में भाग लेते हैं। इस प्रकार इसका प्रयोग समन्वय के एक उपकरण के रूप में भी किया जा सकता है।

(4) यह प्रबंध में नियंत्रण का एक प्रभावकारी एवं सार्थक उपकरण है जिसके माध्य से प्रबंधक उचित नियंत्रण करके उद्देश्यों को पूरा करता है।

(5) यह कर्मचारियों की कार्यकुशलता में वृद्धि करता है और इसका व्यय या लागत में कमी करने में सहायता करता है। यह बर्बादियों को न्यूनतम करता है और जो व्यक्ति योजना को कार्यान्वित करने में लगे होते हैं, उन्हें लक्ष्यों को पूरा करने के लिए उत्साह से काम करने के लिए प्रेरित करता है।

(6) यह प्रबंधक को प्रगति के बारे में सूचित करता है और यह बताता है कि व्यवसाय ठीक से चल रहा है या नही यदि नहीं, तो किस दिशा में गड़बड़ी है और उसे कैसे सुधारा जाए जिससे की लक्ष्य की पूर्ति हो सके।

(7) इसके माध्यम से कुशल कर्मचारियों को उनकी अकुशलता के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है और उनके संबंध में उचित उपाय अपनाया जा सकता है।

सीमाएं (Limitations)

यद्यपि बजटीय नियंत्रण से अनेक लाभ हैं परन्तु साथ ही इसकी कुछ सीमाएं भी हैं जो निम्नलिखित हैं–

(1) यह नियोजन तथा नियंत्रण का केवल एक उपकरण मात्र है परन्तु व्यवहार में प्रायः इसे उसका विकल्प (substitute) मान लिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि आवश्यकता से अधिक के लिए बजट बना लिया जाता है जिससे अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं।

(2) प्रबंधक अपनी इच्छानुसार अपने विभाग या अनुभाग का प्रबंध नहीं कर सकता जिसमें उसकी स्वतन्त्रता का हनन होता है। प्रायः बजटीय नियंत्रण इतना व्यापक होता है कि उसमें थोड़ा सा भी परिवर्तन करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। ऐसी स्थति में नियंत्रण स्वयं कठिन, जटिल, निरर्थक एवं व्ययपूर्ण हो जाता है।

(3) यह भी संभव हो जाता है कि बजटीय लक्ष्य संस्था के लक्ष्य का स्थान ग्रहण कर ले, ऐसी स्थिति संस्था के हित में हो यह आवश्यक नहीं है।

(4) व्यवहार में इसका प्रयोग अपनी अकुशलताओं को छिपाने में किया जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि प्रायः बजट पूर्व घटनाओं पर आधारित होता है और ये पूर्व

घटनाएं वर्तमान के लिए साक्ष्य का कार्य देती हैं। कोई भी प्रबंधक पूर्व घटनाओं का बहाना लेकर अपनी अकुशलताओं को छिपा सकता है।

(5) यदि बजट के माध्यम से नियंत्रण किया जाता है तो लोचहीनता का भय उत्पन्न होता है।

(6) नियंत्रण चूंकि व्यक्तियों का भी करना होता है अतः इसमें केवल बजट प्राप्त नहीं है। प्रायः कर्मचारी बजट से घृणा करते हैं क्योंकि वे इसे एक निषेधात्मक नियंत्रण (negative control) समझते हैं। वे इसमें यथासंभव बचना चाहते हैं। अतः प्रयास इस बात का करना होगा कि कर्मचारी इसके बारे में अपने विचार बदलें और इस संदर्भ में अपना हृदय परिवर्तन करें जो व्यवहार में वस्तुतः एक कठिन कार्य है।

• **निवेश पर प्रत्याय (Return on Investment ROI)**– यह विधि महत्वपूर्ण निष्पादन नियंत्रण में महत्वपूर्ण होती है। इसे विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय भी कहते हैं। प्रत्याय की दर की गणना कुल विनियोग के साथ शुद्ध लाभों को विभाजित करके की जाती है।

निवेश के प्रत्याय के माध्यम से नियंत्रण (Control through Return on Investments) –किसी भी संगठन की कार्यक्षमता उसके निवेश के आकार के संबंध में उसके द्वारा कमाए लाभ की राशि द्वारा जांची जाती है। जिसे आमतौर पर निवेश पर प्रत्याय (ROI) कहते हैं। यह व्यवस्था 1919 में राज्य अमेरिका की महत्वपूर्ण कम्पनी Du Point के नियंत्रण तन्त्र का महत्वपूर्ण भाग रही है जबकि वास्तव में इसको 1914 में डोनाल्डसन ब्राउन द्वारा बनाया गया था। इतनी बड़ी कम्पनी में इसके सफल परिचालन को देखकर बहुत बड़ी संख्या में कम्पनियां अपनी सर्वांगीण निष्पत्ति में मुख्य मानदण्ड के रूप में इस विधि को अपनाती रही हैं।

शुद्ध आय विक्रय से विक्रय को लागत घटाकर आया आगम का अवशेष है। तुलना की दृष्टि से कर पश्चात् तथा कर पूर्ण शुद्ध आय को लिया जा सकता है। कुल निवेश में व्यवसाय में लगी स्थायी सम्पत्तियां तथा कार्यशील पूंजी को शामिल किया जाता है।

• **उत्तरदायित्व लेखांकन (Responsibility Accounting)**– यह लेखांकन की ऐसी पद्धति है जिसके माध्यम से विभिन्न व्यक्तियों के निष्पादन को निर्धारित किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रचालन क्षेत्र हेतु उत्तरदायी होता है। लागतों को उत्तरदायित्व केंद्रों को अभिहस्तांरित कर दिया जाता है। यह केंद्र के प्रधान उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु उत्तरदायी होता है। उत्तरदायित्व केंद्रों से संबंधित लागतें नियंत्रणीय अथवा अनियंत्रणीय होती हैं।

उत्तरदायित्व केंद्र निम्नलिखित तीन प्रकार के होते हैं–

1. **लागत केंद्र** (Cost Centre)– इनके उद्देश्यों को लागत के संदर्भ में निर्धारित किया जाता है।

2. **लाभ केंद्र** (Profit Centre)– इनके उद्देश्य को लाभ के संबंध में वर्णित किया जाता है। इस केंद्र का निष्पादन लाभ के संदर्भ में मापा जाता है।

3. **विनियोग केंद्र** (Investment Centre)– विनियोग केंद्र लागतों, लाभों तथा विनियोग हेतु उत्तरदायी होता है। प्रत्येक केंद्र के विनियोग को पृथकतः निर्धारित करते हैं।

• **प्रबंधकीय अंकेक्षण (Management Audit)**– सर्वांगीण तौर पर प्रबंध का एक मूल्यांकन होता है। यह संपूर्ण प्रबंध प्रक्रिया का स्वतन्त्र एवं चर्चित परीक्षण है। अतः यह नियोजन, संगठन, कर्मचारी नियुक्ति निर्देशन तथा नियंत्रण की पूर्ण प्रबंधकीय परम्परा का परीक्षण करता है। वास्तव में कम्पनी की योजनाएं लक्ष्य, नीतियां, प्रविधियां, संगठन, नियंत्रण तन्त्र, सेविवर्गीय संबंध सभी प्रबंधकीय अभिप्राप्ति के मूल्यांकन हेतु मापे जाते हैं। प्रबंधकीय अंकेक्षण के सामने अनेक समस्याएं उत्पन्न होती जाती हैं क्योंकि एक तरह से प्रबंधकीय अंकेक्षण एक नई नियंत्रण तकनीक है। मूल प्रश्न उठता है इसके क्षेत्र तथा प्रविधि के बारे में, उन व्यक्तियों के बारे में जो इसको अंजाम देंगे, उन व्यक्तियों की क्या योग्यताएं तथा लक्षण होंगे तथा वे व्यक्ति जिनके समक्ष अंकेक्षण प्रतिवेदन रखे जाएंगे।

जहां तक प्रबंधकीय अंकेक्षण के क्षेत्र तथा प्रविधि का प्रश्न है प्रबंधकीय अंकेक्षण के व्यापक अभ्यास के कारण इनको भली प्रकार परिभाषित नहीं किया गया है। बहुत कुछ प्रबंधकीय अंकेक्षण के चातुर्य, कौशल एवं योग्यता पर निर्भर करता है। प्रबंधकीय अंकेक्षण करने वाले व्यक्ति को प्रबंधकीय सिद्धान्तों, व्यावहारिक पहलुओं तथा प्रबंध के क्रियात्मक क्षेत्रों का व्यापक ज्ञान तथा गहन सूझबूझ होनी चाहिए। प्रबंधकीय अंकेक्षण प्रतिवेदनों का रूप लेता है। प्रतिवेदन विशिष्ट तथा जटिल अंकेक्षण प्रतिवेदनों से हटकर होने चाहिए।

कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्र जो प्रबंधकीय अंकेक्षण द्वारा उभारे जा सकते हैं, इस प्रकार बताये जा सकते हैं–

(अ) भूमिकाओं, गतिविधियों तथा संबोधनों के संगठनात्मक ढांचों की अभिकल्पना तथा परिचालन।

(ब) संगठनात्मक लक्ष्यों, व्यूह रचनाओं, नीतियों, कार्यक्रमों के निर्धारण तथा वह तरीका जिससे उनको लागू किया जाये तथा साथ ही प्राप्त सफलता की मात्रा।

(स) वह तरीका तथा कार्यक्षमता जिसके साथ संसाधन तथा सम्पत्तियों को, गतिशीलता को, विकसित, प्रभारित, प्रयुक्त तथा सुरक्षित बनाया जा सकें। उल्लेखनीय है कि मानवीय संसाधनों को भी इसमें शामिल किया जायेगा।

(द) संगठन के भीतर विभिन्न तन्त्रों तथा क्रियाओं की अभिकल्पना तथा क्रियान्वयन।

(य) वह तरीका जिसमें प्रबंधकीय अंकेक्षण बाह्य वातावरणीय तत्वों की कल्पना करता है तथा उनमें कांट छांट करता है तथा उनसे निपट पाने के लिए उपयुक्त व्यूह रचनाओं की अभिकल्पना करता है।

(र) आंतरिक निर्णयों की गुणतत्ता उनकी परिपक्वता, कालबद्धता तथा प्रभावोत्पादकता।

(ल) आंतरिक संगठनात्मक जलवायु किस सीमा तक यह सहयोग, एकरसता, सृजन, उत्पादकता तथा सन्तुष्टि के लिए उपयोगी है।

(व) प्रबंधकीय निर्णयों की गुणवत्ता उनकी परिपक्वता, कालबद्धता तथा प्रभावोत्पादकता।

प्रबंधकीय अंकेक्षण कार्य संगठन के वैधानिक अंकेक्षण तथा आन्तरिक अंकेक्षण से कहीं दूर तक जाता है क्योंकि इसका स्वभाव तथा विषय सामग्री उनसे कहीं हट कर है। जैसा कि आशा की जा सकती है लेखाकारों तथा अंकेक्षकों ने प्रबंधकीय अंकेक्षण को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण रूचि दिखाई है तथा विशेष तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका में इस दिशा में क्रांतिकारी कदम उठाये जा रहे हैं। इसका लक्ष्य यही रहा है कि इस बात का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया जाये कि कैसे संगठन के क्रियाकलाप का प्रबंध किया जा रहा है।

• **अनुपालन मूल्यांकन तथा पुनरीक्षण तकनीकें (Performance Evaluation and Review Techniques)**– इसे पहली बार 1997 में अमेरिका में आरम्भ किया गया। यह तकनीक नियोजन और नियंत्रण पर ही निर्भर है। यह एलम और होमिलटन के द्वारा अमेरिका में नौ सेना में उपयोग की गई थी। इस विधि में सभी प्रबंधक सूचनाएं एकत्रित करते हैं जो कि नियोजन तथा नियंत्रण दोनों में ही सहायक सिद्ध होती हैं। यह तकनीकें और प्रक्रिया प्रबंध में ही सहायक होती हैं।

पर्ट ऊपरी स्तर प्रबंध के लिए महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें सभी जिम्मेदारियां ऊपरी स्तर के प्रबंधकों पर ही होती हैं। यह तकनीक परियोजनाओं पर निर्भर करती है–

(i) औजार बनाने वाला उपक्रम, (ii) भवन निर्माण, (iii) जहाज निर्माण, (iv) हवाई जहाज निर्माण आदि।

इसका उपयोग परियोजना प्रबंधकीय समस्याओं को हल करने में होता है। इसमें कार्य को पूरा करने के लिए गतिविधियां तथा सह गतिविधियों को क्रमानुसार बांटा जाता है तथा उन्हें समय दिया जाता है। कुछ गतिविधियों को इकट्ठा लिया जा सकता है, नेटवर्क का विकास किया जाता है ताकि क्रम समय तथा गतिविधियों के प्रारम्भ होने का समय दर्शाया जा सके।

• **आलोचनात्मक मार्ग विधि (Critical Path Method)**– साधारण तन्त्र में गतिविधि के समस्त पहलुओं को निकट से देखा परखा जा सकता है। परन्तु ज्यों ही तन्त्र जटिल होता जाता है गतिविधियों के प्रत्येक पहलू की जांच करना न तो संभव ही रहता है और न ही वांछनीय एवं मितव्ययी। कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं को ही चिह्नित किया जाता है तथा उन पर ही ध्यान केन्द्रित किया जाता है। मान्यता यह रहती है कि चयन किये गए कुछ पहलू ही तन्त्र के अस्तित्व तथा सफलता के लिए महत्वपूर्ण हैं और उन पर यदि ध्यान केन्द्रित करके नियंत्रण किया जाये तो संपूर्ण गतिविधि का नियोजित निष्पत्ति मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

अब प्रश्न उठता है कि इन चर्चित अथवा महत्वपूर्ण बातों का चयन कैसे किया जाये ? प्रबंधकों के पटल पर तन्त्र की संपूर्ण व्यवस्था की अच्छी सूझबूझ इन तथ्यों को ढूंढ़ने में तथा निष्पादन के उपयुक्त मापदण्डों तथा मापांकन विधियों की अभिकल्पना में पूर्णरूपेण करती है। महत्वपूर्ण परिणाम क्षेत्र अपने स्वभाव के कारण काफी जटिल तथा नियंत्रण करने में दुरूह होते हैं। एक व्यावसायिक उपक्रम में नियंत्रण हेतु महत्वपूर्ण क्षेत्र निर्माण, विपणन, वित्त, कर्मचारी वर्ग, शोध एवं विकास आदि में ढूंढ़े जाने होते हैं। उदाहरण के लिए विपणन में मुख्य परिणाम क्षेत्र हो सकते हैं– बाजार का भाग, आदेशों की स्थिति, ग्राहकों की शिकायतें तथा सकल लाभ अनुपात आदि।

इस विधि में निम्नांकित कदम उठाये जाते हैं– (i) घटकों की पहचान करना, (ii) गतिविधियों को क्रमबद्ध करना, (iii) समय का विश्लेषण करना, (iv) परियोजना पर नियंत्रण करना, (v) शुरूआती योजना में परिवर्तन लाना, (vi) आलोचनात्मक पथ को तय करना।

• **शून्य आधार बजटिंग (Zero Base Budget -ZBB)**– शून्य आधार बजटिंग, बजटिंग की नई विधि है। व्यवसाय को नये कार्यक्रमों के संबंध में ही निर्णय नहीं लेने चाहिए अपितु समय समय पर चल रहे कार्यक्रमों के औचित्य का भी पुनर्निरीक्षण एवं पुनरावलोकन करना चाहिए। जहां ऐच्छिक लागतें अधिक हैं ऐसे उत्तरदायित्व केंद्रों का पुनर्निरीक्षण अधिक आवश्यक है। इस प्रकार पुनर्निरीक्षण हेतु शून्य आधार बजटिंग का प्रयोग किया जाता है।

शून्य आधार बजटिंग में प्रारम्भ से ही किसी भी कार्यक्रम या कार्य की जांच की जाती है। इस मान्यता पर आगे कार्यवाही की जाती है कि कोई भी राशि स्वीकृत नहीं की जानी है। प्रबंध किसी कार्य का प्रस्ताव रखते हैं उन्हें यह सिद्ध करना होता है कि कार्य आवश्यक है तथा वह वास्तव में उचित है। कोई राशि केवल इसलिए स्वीकृत नहीं की जाती कि वह भूतकाल में स्वीकृत की गई थी।

शून्य–आधार बजटिंग में निम्न कदम उठाये जाते हैं–

(1) **बजटिंग के उद्देश्यों का निर्माण**– उद्देश्य निर्धारण सर्वप्रथम कदम है। उदाहरणार्थ, कर्मचारियों के उपरिव्ययों में लागत कमी करने का उद्देश्य हो सकता है अथवा ऐसी परियोजनाओं का विश्लेषण करने एवं उन्हें बन्द करने का उद्देश्य को सकता है जो संगठन के ढांचे में सही नहीं बैठती या संगठन के उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक नहीं है।

(2) **जिस सीमा तक शून्य–आधार बजटिंग लागू करनी है उसका निर्धारण**– शून्य आधार बजटिंग संगठन की सभी क्रियाओं में लागू करनी हो सकती है अथवा कुछ ही क्रियाओं में।

(3) **निर्णय इकाइयों का विकास**– उन इकाइयों का निर्धारण आवश्यक है जिनके संबंध में निर्णय लेने हेतु लागत लाभ विश्लेषण किया जाना है। निर्णय इस बात का लेना हो सकता है कि उन क्रियाओं को चालू रखा जाए या उन्हें बन्द कर दिया जाए। प्रत्येक निर्णय इकाई अन्य सभी इकाइयों से स्वतन्त्र होनी चाहिए ताकि लागत विश्लेषण से यह पता लगने पर ही वह इकाई उपयुक्त नहीं है तो उसे बन्द किया जा सके।

(4) **निर्णय पैकेज**– प्रत्येक इकाई के लिए एक निर्णय पैकेज बनाया जाना चाहिए। निर्णय पैकेज में निम्न प्रश्नों के उत्तर सम्मिलित होने चाहिए–

(i) क्या उस क्रिया को करना आवश्यक है? यदि उत्तर 'नहीं' में है तो आगे बढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं है।

(ii) क्रिया की वास्तविक लागत कितनी है और मूर्त एवं अमूर्त रूप में वास्तविक लाभ कितना है?

(iii) क्रिया के स्तर की अनुमानित लागत क्या होनी चाहिए तथा ऐसी क्रिया से अनुमानित लाभ कितना होना चाहिए?

(iv) क्या क्रिया उसी रूप में चलाई जानी चाहिए जिस रूप में चलाई जा रही है तथा लागत क्या होनी चाहिए?

(v) यदि परियोजना या क्रिया बन्द कर दी जाती हे तो इकाई को बाहरी एजेन्सी से प्रतिस्थापित किया जा सकता है या समाप्त किया जा सकता है।

(vi) किए गए अध्ययन को ध्यान में रखते हुए निर्णय को लागू करना अनितम चरण है। इसके अनुसार जिन परियोजनाओं में लागत–लाभ विश्लेषण धनात्मक हो, उन्हें स्वीकार कर लिया जाता है। दूसरे शब्दों में, जो परियोजनाएं संगठन के उद्देश्यों को पूरा करती हैं उन्हें अपना लिया जाता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि शून्य आधार बजटिंग, बजटिंग के क्षेत्र में लागत लाभ विश्लेषण को आगे प्रयोग से लाना मात्र है।

शून्य आधार बजटिंग के लाभ

शून्य आधार पर बजटिंग के निम्न लाभ हैं–

1. इसके द्वारा प्रबंधक विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा क्रियाओं को व्यवस्थित रूप से मूल्यांकित कर सकता है। इसके द्वारा प्रबंधक कार्यक्रमों की प्राथमिकता के आधार पर संसाधनों का आवंटन कर सकता है।
2. इससे यह सुनिश्चित हो सकता हे कि प्रबंधकों द्वारा चलाए गए सभी कार्यक्रम संगठन के लिए आवश्यक हैं तथा सर्वोत्तम रूप में क्रियान्वित हो रहे हैं।
3. इससे प्रबंधक विभागीय बजटों को लागत लाभ विश्लेषण के आधार पर अनुमोदित करता है। बजट अनुमानों में एक ऐच्छिक कटौती या वृद्धि नहीं की जाती है।
4. इससे हानिप्रद व्ययों का पता लगाने में सहायता मिलती है तथा इससे वैकल्पिक क्रिया का सुझाव भी मिल सकता है।
5. यह बजटों को संगठन के उद्देश्यों से जोड़ता है। कोई राशि केवल इसलिए स्वीकृत नहीं की जाती कि वह पहले स्वीकृत थी।

• **प्रबंधक सूचना प्रणाली (Management Information System-MIS)**– सूचनाएं किसी भी संगठन की जीवन शक्ति हैं। विशेष तौर पर तन्त्र व्यवस्था प्रबंधक की दशा में सूचना को दूसरों द्वारा दी गई जानकारी या अनुसंधान अथवा अध्ययन से उभर कर आये ज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। लेकिन इस प्रक्रिया में प्राप्त सभी समंक सूचना नहीं कहलाते जब तक उनका प्रयोग योग्य रूप में नहीं ढाल लिया जाता। कम्प्यूटर जैसे इलेक्ट्रोनिक तन्त्रों के उपयोग द्वारा सूचना तन्त्रों के विकास की ओर व्यापक ध्यान दिया जा रहा है। जो निर्णयन तथा नियंत्रण हेतु संबंधित प्रबंधकों को सम्बद्ध सूचनाएं सुलभ करा पाते हैं। नियंत्रण की एक पूर्व अनिवार्यता है नियंत्रणकर्ता सत्ता के समक्ष सामयिक तथा परिपक्व सूचनाएं होना। इस प्रकार, प्रबंधकीय सूचना तन्त्र

को सही समय पर ही सही तौर से सम्बद्ध सूचनाएं प्रत्येक प्रबंधक के समक्ष जरूरत के समय सुलभ कराने के तन्त्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है ताकि उसकी सूझबूझ बढ़े तथा वह कार्यवाही के लिए अभिप्रेरित हो उठे।

सूचनाओं का यह तन्त्र संगठन की निम्न दृष्टियों से सहायता करता है–

(i) लागतों में कमी लाना, (ii) समंकों में और अधिक सूक्ष्मता लाना, (iii) प्रत्येक उपतन्त्र के विचारों में एकीकृत समन्वय लाना, (iv) सूचनाओं का प्रबंधकों तक और अधिक तीव्रता के साथ पहुंचना जिनकी उनको तत्परता से आवश्यकता है।

कम्प्यूटर आधारित सूचना तन्त्र में एक तन्त्र के लिए उपलब्ध सूचना को दूसरे तन्त्रों के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। यदि सूचना को एक केंद्रीय कम्प्यूटर में डाल दिया जाता है तो कई विभागों के लिए काम लाई जा सकती है। अतः स्टॉक की सूचना लेखांकन, उत्पादन, विपणन तथा वित्त के पृथक–पृथक तन्त्रों में न रखकर एक केंद्रीय समंक भण्डार को उपलब्ध कर दी जाएगी ताकि सभी उपतन्त्र उसका उपयोग कर सकें।

कम्प्यूटर आधारित सूचना तन्त्र के लिए एक अलग प्रकार के संगठनात्मक ढांचे की आवश्यकता होगी। जब संगठन में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा रहा होगा तो निचले स्तरों पर कार्य परिचालन न केवल कर्मचारियों की संख्या के रूप में प्रभावित होगा वरन् उनकी गुणवत्ता भी प्रभावित होगी।

प्रबंध सूचना प्रणाली के अन्तर्गत संस्था की गतिविधियों के बारे में सूचनाओं का संकलन करके उन्हें प्रबंधकों को नियोजन, नियंत्रण तथा मूल्यांकन हेतु आवश्यकता पड़ने पर पुनः उपलब्ध कराया जाता है। इस पद्धति के अन्तर्गत सूचना की समस्या का निदान करने के लिए उचित व्यक्ति को उचित समय व रूप में सही सूचना प्रदान की जाती है। प्रबंध सूचना प्रणाली एक युग्मित (integrated) पद्धति होती है। यह प्रणाली सूचनाओं की छानबीन, विश्लेषण तथा क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण प्रदान करती है।

प्रबंधन सूचना प्रणाली की विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित परिभाषाएं दी हैं–

- **मरडिक, रॉस तथा क्लेगैट** (Murdick, Ross and claggett)– के अनुसार, ''प्रबंधन सूचना पद्धति संरचित तथा नैत्यिक गतिविधियों की स्वाचालन व्यवस्था है जो कि निर्णय लेने में सहायक होती है।''
- **हेण्डरसन एवं सुओजानेन** (Henderson and Suojanen)– के शब्दों में, ''प्रबंधन सूचना प्रणाली ऐसी संरचना होती है जो कि प्रबंधकों की उनकी समस्याओं के संज्ञान, विश्लेषण तथा हल में मदद करती है।''
- **रॉबर्ट मुरडिक** (Robort Murdick) के शब्दों में, ''प्रबंधन सूचना पद्धति एक ऐसी पद्धति होती है जो आंकड़ों का एकत्रीकरण, संग्रहण तथा प्रक्रियायन करती है तथा सूचना की भांति नियोजन, नियंत्रण तथा निर्णय लेने हेतु प्रबंधकों को उपलब्ध कराती है।

प्रबंधन सूचना प्रणाली द्वारा सूचनाओं को प्रतिवेदन के रूप में तैयार करके क्रमबद्ध रूप में पेश किया जाता है। प्रबंधन सूचना प्रणाली में प्रतिवेदन को नियोजन, नियंत्रण तथा मूल्यांकन हेतु उपयोग किया जाता है।

विशेषताएं (Characteristics)

प्रबंधन सूचना प्रणाली की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **प्रबंधन–अभिमुखी** (Management-Oriented)– प्रबंधन सूचना पद्धति प्रबंधन वर्ग की सूचना आवश्यकताओं को ध्यान में रखती है। इसके अंतर्गत प्रबंध के विभिन्न स्तरों पर सूचनाओं को प्रदान किया जाता है। प्रबंधन सूचना प्रणाली उच्च प्रबंधकों, संचालकों को आवश्यक सूचनाएं प्रदान करती है।

2. **प्रबंधकों की सक्रिय भागीदारी** (Active Participation of Managers)– संगठन के प्रबंधकों द्वारा सूचना प्रणाली का विकास करने में सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।

3. **संयुक्त तथा एकीकृत अवधारणा** (Joint and Integrated Concept)– इसके अन्तर्गत विभिन्न मुद्दों से संबंधित विभिन्न सूचनाओं को समन्वित रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता होती है। प्रबंध वर्ग को प्रभावी सूचना पद्धति का विकास करने के लिए विभिन्न कारकों के बीच संबंध स्थापित करना होता है।

4. **आंकड़ों का प्रक्रियाकरण** (Processing of Data)– प्रबंध सूचना पद्धति विभिन्न प्रकार की सूचनाएं प्रदान करने वाले आंकड़ों का प्रविधियन करने की एक विधि होती है। इससे आंकड़ों को आसानीपूर्वक समझकर निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

5. **केंद्रीय सूचना समंक भण्डारण** (Control Information Data Storing)– इसके अन्तर्गत विभिन्न क्रियात्मक क्षेत्रों की आवश्यक सूचनाएं देने हेतु केंद्रीय सूचना समंक भण्डारण होता है। यहां से विभिन्न क्रियात्मक क्षेत्रों को सूचनाएं उपलब्ध करायी जाती हैं।

6. **विभिन्न उप–प्रणालियों का सामूहिक अस्तित्व** (Collective Existence of Various Sub-Systems)– प्रबंध सूचना प्रणाली विभिन्न उप–प्रणालियों जैसे नियोजन उप–प्रणाली, स्कन्ध नियंत्रण उप–प्रणाली, लेखांकन उप–प्रणाली आदि को शामिल करती है।

7. **कम्प्यूटर का उपयोग** (Use of Computer)– प्रबंधन सूचना प्रणाली में कम्प्यूटर का उपयोग किये जाने से सूचनाओं का संकलन, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण सरल हो जाता हैं। इसकी सहायता से सूचनाओं को शीघ्र तथा परिशुद्ध रूप में उपलब्ध कराया जा सकता है।

प्रबंध सूचना प्रणाली में आंकड़ों को सूचना के रूप में बदला जाता है। यह एक मूल्यांकन तथा नियंत्रण तकनीक है।

प्रबंधन सूचना प्रणाली का महत्व एवं लाभ (Importance and Advantages of MIS)

प्रबंधन सूचना प्रणाली का महत्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसके महत्व में वृद्धि होने का कारण है– इसके द्वारा सही समय पर पूर्व सूचनाएं उपलब्ध कराना ताकि व्यूहरचना का निरन्तर मूल्यांकन एवं नियंत्रण सुनिश्चित हो सके तथा उपयुक्त समय

पर सुधारात्मक कार्यवाही की जा सके। प्रबंध सूचना प्रणाली द्वारा उपलब्ध करायी गयी सूचनाएं व्यूहरचना के नियोजन एवं नियंत्रण में सहायक होती हैं। इस प्रणाली के अन्तर्गत सूचनाओं का एकत्रीकरण, प्रविधियन एवं प्रस्तुतीकरण नियोजन एवं पूर्वानुमान, मूल्यांकन व नियंत्रण तथा निर्णय लेने हेतु किया जाता है।

प्रबंध सूचना प्रणाली से प्राप्त होने वाले लाभ निम्नलिखित होते हैं–

1. विश्लेषण पर आधारित बेहतर निर्णय लिया जाना,
2. निर्णय लेने हेतु पर्याप्त सूचनाएं प्राप्त होना,
3. दुर्लभ संसाधनों तथा क्षमता का सही उपयोग होना,
4. उत्पादकता तथा लाभ में वृद्धि होना,
5. समकों के संकलन के दोहराव होने की कम संभावना होना,
6. कार्यकुशलता में वृद्धि होना,
7. सुदृढ़ योजनाओं, कार्यक्रमों व व्यूह रचनाओं का निर्माण,
8. नियंत्रण को प्रभावशाली बनाया जाना,
9. कार्य अनुपालन की किस्म में सुधार होना,
10. विभिन्न कारकों को एकीकृत किया जाना,
11. प्रबंधकों के आत्म–विश्वास में वृद्धि होना,
12. संगठन संबंधी समस्याओं का सरल निदान होना,
13. कमजोरियों तथा सुदृढ़ताओं की समालोचना किया जाना,
14. लागत बचतों में वृद्धि होना,
15. सूचनाओं का गुण, परिमाण तथा मांग के अनुरूप होना आदि।

प्रबंध सूचना प्रणाली की सफलता हेतु आवश्यक बातें (Essentials of Success of MIS)–

प्रबंध सूचना प्रणाली की सफलता हेतु निम्नलिखित बातें आवश्यक होती हैं–

1. सूचनाओं का सही तथा विश्वास करने योग्य होना,
2. सूचनाओं में पर्याप्त तथ्यों का उपलब्ध होना,
3. संगठन की आवश्यकतानुसार प्ररचना का होना,
4. सूचनाओं का समय पर प्रदान किया जाना,
5. सूचनाओं को नियमित रूप से प्रवाहित किया जाना,
6. नवीनतम व प्रासंगिक सूचनाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना,
7. सूचना प्रणाली का मितव्ययी होना,
8. सूचना प्रदाताओं व उपयोगकर्ताओं को प्रशिक्षण सुनिश्चित करना,

प्रबंध सूचना प्रणाली व्यूहरचना के मूल्यांकन तथा नियंत्रण में उपयोगी होती है। इसके अन्यान्य मुख्य लाभ निम्नलिखित हैं –

1. सूचनाओं तथा तथ्यों का संक्षिप्त व शीघ्र ग्राह्य प्रस्तुतीकरण होना,
2. मूल्यांकन तथा नियंत्रण में सहायक होना,
3. सूचनाओं का शीघ्र व सही रूप से प्राप्त होना,
4. संगठन के अधिशासियों की कार्यकुशलता में वृद्धि होना आदि।

प्रबंध सूचना प्रणाली की हानियां (Disadvantages of MIS) – प्रबंध सूचना प्रणाली की मुख्य हानियां निम्नलिखित हैं –

1. बहुत सी सूचनाओं को प्रस्तुत न कर पाने के कारण सूचनाओं में अपूर्णता होना,
2. अधिक समय तथा धन की आवश्यकता होना,
3. योग्य तथा महंगे कार्यकारियों को नियुक्त किया जाना।

• **प्रबंध प्रतिवेदन** (Management Reporting) –

प्रबंध सूचना पद्धति द्वारा सूचनाएं प्रतिवेदन के रूप में होने के कारण समुचित प्रतिवेदन पद्धति उपलब्ध होनी चाहिए। उचित प्रतिवेदन व्यवस्था प्रबंध सूचना प्रणाली को प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रबंध सूचना प्रतिवेदन सही समय पर सही रूप में प्रबंधकों को सूचनाएं प्रदान करने से संबंध रखती हैं।

प्रभावशाली प्रतिवेदन के लक्षण (Characteristics of an Effective Reporting) प्रभावशाली प्रतिवेदन के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं –

1. प्रतिवेदन को दिये जाने वाले तथ्य सही एवं उचित होने चाहिए,
2. प्रतिवेदन को सरल तथा स्पष्ट भाषा में प्रस्तुत किया जाना चाहिए,
3. प्रतिवेदन को स्पष्ट, शीर्षक, उप शीर्षक, खण्डों आदि में बांटकर प्रस्तुत करना चाहिए,
4. प्रतिवेदन में यथार्थता व संपूर्णता को ध्यान में रखा जाना चाहिए,
5. प्रतिवेदन संक्षिप्त तथा रूचिपूर्ण होना चाहिए,
6. प्रतिवेदन को समुचित समय पर प्रस्तुत किया जाना चाहिए,
7. प्रतिवेदन जिस प्रबन्धक को दिया जा रहा हो, उसकी आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

   प्रबंधकीय सूचना प्रणाली में पर्याप्त लोच होनी चाहिए तथा इसे व्यूहरचनात्मक प्रबंध का समर्थन करना चाहिए।

प्रतिवेदन के प्रकार (Types of Report)

व्यूहरचना के मूल्यांकन तथा नियंत्रण हेतु दिये जाने वाले प्रतिवेदन दैनिक प्रतिवेदनों से हटकर होते हैं। प्रतिवेदन निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं –

(क) **आंतरिक प्रतिवेदन** (Internal Report) – आन्तरिक प्रतिबंध संस्था की आंतरिक स्थिति से संबंधित होते हैं।

(ख) **बाह्य प्रतिवेदन** (External Reports) – इन प्रतिवेदनों में संस्था द्वारा बाहरी पक्षों जैसे–सरकार, ऋणपत्रधारी, अंशधारी बैंक आदि हेतु प्रकाशित प्रतिवेदन शामिल होते हैं।

उच्च प्रबंध वर्ग को प्रायः निम्नलिखित के संबंध में प्रतिवेदन देने होते हैं –

1. व्यूहरचना की वास्तविक उपलब्धि/असफलता के संबंध में।
2. कम्पनी की वित्तीय स्थिति के संबंध में।
3. संपूर्ण अथवा किसी उत्पादन विभाग में आने वाली उत्पादन लागत के संबंध में।
4. विभागानुसार उपरिव्ययों के संबंध में।
5. तैयार उत्पाद तथा स्कन्ध की स्थिति के संबंध में।
6. संपूर्ण वर्ष के प्रबंध व श्रम के संबंध में।
7. आवधिक प्राप्तियों तथा भुगतानों के संबंध में।
8. उधारियों की प्राप्ति के संबंध में।
9. संपूर्ण विक्रय के संबंध में।

• **सम–विच्छेद विश्लेषण (Break-Even Analysis)** – प्रबंध में प्रयोग किया जाने वाला यह एक आधुनिक उपकरण है जिससे यह पता लगाया जाता है कि किस सीमा तक उत्पादन करने पर हानि होती है और किस सीमा के बाद लाभ होने लगता है। उत्पादन की वह सीमा जिस पर न लाभ होता है और न हानि, सम–विच्छेद बिन्दु (Break-Even Point) कहलाता है। इस सीमा या बिन्दु पर आय (revenue) लागत या व्यय के बराबर होती है। उससे कम उत्पादन करने पर हानि होती है और यदि उससे अधिक उत्पादन किया जाए तो लाभ होगा। इस सीमा या बिन्दु की गणना गणित के माध्यम से की जाती है। परन्तु प्रायः इसका पता ग्राफ के माध्यम से लगाया जाता है क्योंकि ग्राफ में केवल देखकर आसानी से इसका पता चल जाता है। इसको लाभ का एक ग्राफ (profit graph) कहते हैं। जब हम इसे चार्ट के रूप में दिखाते हैं तो यह सम–विच्छेद चार्ट (Break-even chart) कहलाता है जिसे नीचे दिखाया गया है।

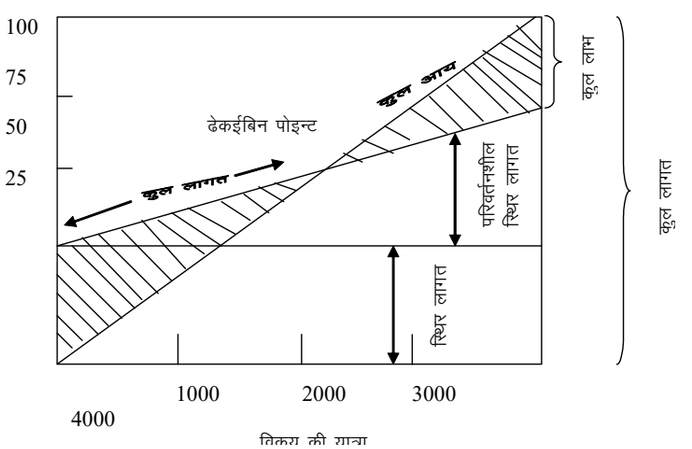

चार्ट को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि उत्पादन 2,000 इकाई या टन की जाती तो उस पर न तो लाभ हो रहा है और न ही हानि, परन्तु यदि इससे अधिक उत्पादन किया जाता है तो लाभ हो रहा है। यदि उत्पादन उससे कम किया जाता है तो हानि होगी। यदि उत्पादन 1,000 इकाई या टन किया जाए तो उस स्थित में कुल आय कम है और कुल लागत अधिक है अतः हानि होगी।

प्रबंधक के लिए यह अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण नियंत्रण की विधि है जो लागत विक्रय की मात्रा और आय के बीच यह संबंध बताता है कि उत्पादन के विभिन्न स्तर पर क्या लाभ हो सकता है और इस जानकारी के माध्यम से वह व्यय पर नियंत्रण करके लाभ को बढ़ाने की विशिष्ट योजना तैयार कर सकता है। वास्तव में, इसके माध्यम से प्रबंधक सभी महत्वपूर्ण सूचनाएं या आंकड़े एक ही दृष्टि से देख सकता है। यह योजना और नियंत्रण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सीमान्त के विचार (concept of margin) पर बल देता है एवं स्पष्ट करता है कि अतिरिक्त विक्रय या लागत का लाभ पर क्या प्रभाव पड़ता है।

सीमाएं (Limitation)

(i) यह उस मान्यता पर आधारित होती है कि मूल्य निश्चित या स्थिर है, परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं पाया जाता। स्थिर मूल्य पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति का द्योतक है जबकि व्यवहार में पूर्ण प्रतियोगिता नहीं पायी जाती।

(ii) इसके नापने में यह भी कठिनाई होती है कि कौन–सी लागत ली जाए, कौन सी नहीं, इस लागत के नापने की कठिनाई सामने आती है।

(iii) यह उत्पादन और विक्रय के बीच समय (time-lag) पर ध्यान नहीं देता।

(iv) यह उत्पादन को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण घटक जैसे– प्लाण्ट का आकार, तकनीक आदि पर ध्यान नहीं देता है।

(v) इसकी गणना केवल वही फर्म कर सकती है जो केवल एक ही वस्तु का उत्पादन करती है। ऐसी फर्म जो कई वस्तुओं का उत्पादन एक साथ करती हो, इसका उपयोग नहीं कर सकती।

(vi) इसमें विक्रय से संबंधित व्यय, जैसे विज्ञापन व्यय पर ध्यान नहीं दिया जाता जबकि यह एक महत्वपूर्ण व्यय है।

(vii) यह समय और लागत के संबंध पर भी विचार नहीं करता। उदाहरण के लिए यदि किसी मशीन की मरम्मत पर व्यय किया गया परन्तु उसका लाभ अगले पांच वर्ष तक उठाना है तो उसको यह चार्ट बनाते समय नहीं लिया जा सकता है।

(viii) उसी प्रकार से यह कर संबंधी व्यय पर भी विचार नहीं करता है।

• **अपवाद द्वारा प्रबंध (Management by Exception-MBE)** – वर्तमान युग बड़ी मात्रा में उत्पादन तथा व्यवसाय का युग है तथा व्यावसायिक गतिविधियां दिन–प्रतिदिन जटिल होती जा रही हैं। प्रत्येक स्तर पर उत्तरदायित्व बढ़ गए हैं। इसलिए यह

आवश्यक है कि प्रबंध के प्रत्येक स्तर को सुपरिभाषित करके उत्तरदायित्व तय किये जायें। उच्च प्रबंध सामान्य उद्देश्य निर्धारित करे तथा नीतियों, योजनाओं व कार्यक्रमों पर विचार करे। मध्यम स्तरीय प्रबंध इनका निष्पादन करें। अपवाद द्वारा प्रबंध में उच्च प्रबंध केवल अपवादित समस्याओं पर ध्यान लगाता है। इसमें विभिन्न स्तरों पर उत्तरदायित्व तय कर दिये जाते हैं तथा उच्च प्रबंध केवल मुख्य–मुख्य निर्णयों व समस्याओं पर निर्णय लेता है।

अपवाद द्वारा प्रबंध के सिद्धान्त (Principles of Management by Exceptions) अपवाद द्वारा प्रबंध के सिद्धान्त निम्नलिखित होते हैं –

1. स्व. नियंत्रण का सिद्धान्त (Principle of self-control),
2. प्रबंध का क्रमबद्ध अभिगम का सिद्धान्त (Principle of approach of management),
3. निरन्तर पर्यवेक्षण का सिद्धान्त (Principle of continuous supervision),
4. प्राधिकार अनुकरण का सिद्धान्त (Principle of delegation of authority),
5. नीति अनुकरण का सिद्धान्त (Principle of follow the policy),
6. नैत्विक तथा अपवादित गतिविधियों में अन्तर का सिद्धान्त (Principle of difference between routing and exceptional activities),

लाभ (Advantages) – अपवाद द्वारा प्रबंध के लाभ निम्नलिखित होते हैं –

1. उच्च प्रबंध द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों में कमी होना।
2. अवसरों तथा समस्याओं को पहचानना।
3. उच्च प्रबंध को जटिल समस्याओं के समाधान हेतु अधिक समय मिलना।
4. व्यक्तियों का सही व कुशल उपयोग होना।
5. अधीनस्थों को विकास के अवसर प्राप्त होना।
6. शोध तथा विकास में सहायक होना।
7. क्षमताओं का अधिकतम उपयोग होना।

हानियां (Exceptions) – अपवाद द्वारा प्रबंध की हानियां/दोष निम्नलिखित हैं–

1. सुदृढ़ अवलोकन एवं प्रतिवेदन व्यवस्था आवश्यक होना,
2. उच्च अधिकारियों का अधीनस्थों पर निर्भर हो जाना,
3. समूह भावना में कमी होना।
4. मूल्यांकन के आधार पर नीचे गिर जाना।

अपवाद द्वारा प्रबंध प्रणाली का उपयोग व्यूहरचनात्मक मूल्यांकन तथा नियंत्रण द्वारा किया जाता है। इससे अवलोकन व निर्णयन में सहायता प्राप्त होती है।

• **वित्तीय अनुपात विश्लेषण (Financial Ratio Analysis)** – वित्तीय अनुपात विश्लेषण द्वारा वित्तीय विचलनों के संबंध में निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इनके द्वारा दो या

अधिक मदों के बीच संरचनात्मक संबंध प्रकट किये जाते हैं। वित्तीय अनुपातों के माध्यम से तर्कयुक्त व नियमबद्ध रूप से संबंध स्थापित किये जाते हैं। वित्तीय अनुपातों को अनुपात, दर या प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। फर्म की संपूर्ण निष्पादन क्षमता को मापने हेतु निम्नलिखित अनुपातों का प्रयोग किया जाता है।

1. **चालू अनुपात** (Current Ratio) – इस अनुपात द्वारा अल्पकालीन भुगतान क्षमता की स्थिति को मापा जाता है। चालू सम्पत्तियों को चालू दायित्वों द्वारा विभाजित करने पर यह अनुपात प्राप्त होता है। अनुपात दुर्बल होने पर वह खतरे का संकेत करता है। यह अनुपात 2 होना चाहिए।
2. **तरलता अनुपात** (Liquidity Ratio) – इस अनुपात की गणना तरल सम्पत्तियों में तरल दायित्वों का भाग देकर की जाती है यह अनुपात 1 होना चाहिए। 1 : 1 से कम का अनुपात वित्तीय संकट को सूचित करता है।
3. **गतिविधि या क्रियाशीलता अनुपात** (Activity Ratios) – यह अनुपात फर्म के कोषों के उपयोग की समुचितता को बताता है। इसके द्वारा व्यवसाय के कार्य निष्पादन पर प्रकाश डाला जाता है। स्कन्ध आवर्त अनुपात देनदार आवर्त अनुपात इसके उदाहरण हैं। उच्च क्रियाशीलता अनुपात अच्छा माना जाता है।
4. **लाभदायकता अनुपात** (Profitability Ratios) – ये अनुपात यह बताते हैं कि फर्म को विनियोगों से कितना प्रत्यय प्राप्त हो रहा है। इन अनुपातों में प्रति अंश आय, सकल लाभ अनुपात, शुद्ध लाभ अनुपात आदि की गणना की जाती है। इससे कोषों के कुशल उपयोग का मापन होना है।

5.2.3 प्रमुख प्रदर्शन क्षेत्र की पहचान तथा नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु

- नियंत्रण प्रबंध–प्रकार्य की महत्वपूर्ण क्रिया है। नियंत्रण का आधार नियोजन होता है। प्रत्येक उपक्रम के निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए नियंत्रण प्रक्रिया का कार्यान्वयन अनिवार्य है।
- नियंत्रण भविष्यमुखी प्रक्रिया है। भावी घटनाओं को पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार घटित होते देखना ही नियंत्रण का प्रमुख उद्देश्य होता है। नियंत्रण के परिणामस्वरूप नवीन पद्धतियों के विकास को प्रेरणा मिलती है।
- जिस प्रकार नियोजन एक सतत प्रक्रिया है। उसी प्रकार नियंत्रण भी प्रबंध का निरंतर जारी रहने वाला प्रकार्य है।
- नियंत्रण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है, अर्थात परिस्थितियों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप नियंत्रण पद्धति में परिवर्तन करना आवश्यक होता है।
- नियंत्रण वास्तव में व्यक्तियों के कार्यों से संबंधित प्रक्रिया है।
- प्रबंध के प्रत्येक स्तर पर नियंत्रण–प्रक्रिया व्याप्त रहती है।
- नियंत्रण का अर्थ अधिकारों का हनन नहीं होता है।

नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु

- नियंत्रण कार्यों को उद्देश्योन्मुख रखने में सहायता करता है।
- नियंत्रण पद्धति स्थापित होने से प्रबंध अधीनस्थ स्तरों पर अधिकार और दायित्वों का प्रत्यायोजन कर पाता है।
- यह विभिन्न विभागों और उनकी गतिविधियों में समन्वय स्थापित करने में सहायक होती है।
- नियंत्रण की कुशल प्रणाली कार्यों और कार्मिकों में अनुशासन उत्पन्न करती है।
- इसके द्वारा भ्रष्टाचार और लापरवाही पर अंकुश लगता है।
- इसके द्वारा अकुशल कार्मिकों को पता लगाकर उन्हें दंडित किया जा सकता है तथा कुशल कार्मिकों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। अतः नियंत्रण अभिप्रेरणा का आधार है।
- नियंत्रण के माध्यम से विकेन्द्रीकरण में भी सहायता मिलती है।
- नियंत्रण से निर्णयन में सहयोग प्राप्त होता है।
- अंततः नियंत्रण व्यवसाय हेतु बीमे का कार्य करता है।
- नियंत्रण की प्रणाली व्यवसाय की आवश्यकता और प्रगति के अनुरूप होनी चाहिए।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "किसी लक्ष्य या लक्ष्यों के समूह की ओर निर्देशित क्रियाओं के मध्य संतुलन बनाए रखना नियंत्रण है"– यह मत किसका है?

   (क) मेरी कुशिंग नाइल्स (ख) कोटलर

   (ग) गोटज (घ) मैसी

2. इनमें से क्या नियंत्रण प्रक्रिया का तत्व नहीं है?

   (क) कार्य प्रमापों का स्थापन (ख) वास्तविक प्रगति का मापन

   (ग) सुधारात्मक कार्यवाही (घ) संगठन का विघटन

5.3 भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंधन विज्ञान के सिद्धान्तों एवं तकनीकों का अनुप्रयोग

प्रबंधन के सिद्धान्तों एवं तकनीकों का सामाजिक कल्याण और विकास के परिप्रेक्ष्य में अनुप्रयोग एवं महत्व निम्न रूपों में होता है–

- **प्रबंधकों को वास्तविकता का उपयोगी सूक्ष्म ज्ञान प्रदान करना**– प्रबंधन के सिद्धान्त, प्रबंधकों तथा समाजशास्त्रियों को वास्तविक दुनिया की स्थिति से

पूर्णतः अवगत कराते हैं। इन सिद्धान्तों को अपनाने से उनके प्रबंधकीय स्थिति एवं परिस्थितियों के संबंध में ज्ञान, योग्यता एवं समक्ष में वृद्धि होती है। इससे प्रबंधक अपनी पूर्व की त्रुटियों से कुछ सीखता है तथा बार–बार उत्पन्न होने वाली समस्याओं का शीघ्रता से समाधान करता है। इस प्रकार प्रबंधकीय सिद्धान्त, प्रबंध क्षमता में वृद्धि करते हैं।

- **संसाधनों का अधिकतम उपयोग व प्रभावी प्रशासन**– समाज में उपलब्ध मानवीय तथा भौतिक दोनों संसाधन सीमित होते हैं। इनका अधिकतम उपयोग करना होता है। अर्थात् कम से कम संसाधनों द्वारा अधिकतम लाभ की प्राप्ति संभव हो सके। सिद्धान्तों की सहायता से व्यक्ति अपने निर्णयों एवं कार्यों में कारण एवं परिणाम के सम्बन्ध का पूर्वानुमान लगा सकते हैं। इससे त्रुटियों से शिक्षा ग्रहण करने की नीति में होने वाले क्षति से बचा जा सकता है। प्रभावी समाज के प्रशासन हेतु प्रबंधकीय व्यवहार का व्यक्तिकरण आवश्यक है जिससे कि प्रबंधकीय अधिकारों का सुविधानुसार उपयोग किया जा सके। प्रबंध के सिद्धान्त, प्रबंध में स्वेच्छाचार की सीमा निर्धारित करते हैं जिससे कि प्रबंधकों के निर्णय व्यक्तिगत रुचियों व पक्षपात से मुक्त होते हैं।
- **वैज्ञानिक निर्णय**– समस्त निर्णय, निर्धारित उद्देश्यों के रूप में विचारणीय एवं न्यायोचित तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए। यह समयानुकूल, वास्तविक एवं मापन तथा मूल्यांकन के योग्य होने चाहिए। प्रबंध के सिद्धान्त विचारपूर्ण निर्णय लेने में सहायक होते हैं जो एक समाज प्रशासन को उचित समय पर उचित निर्णय लेने में सहायक होता है।
- **परिवर्तित पर्यावरण की आवश्यकताओं को पूर्ण करना**– सिद्धांत यद्यपि सामान्य दिशा–निर्देश प्रकृति के होते हैं, तथापि इसमें परिवर्तन होता रहता है, जिससे यह समाजशास्त्रियों प्रबंधकों की पर्यावरण पर बदलती आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होते हैं। प्रबंध के सिद्धान्त लोचपूर्ण होते हैं, जो गतिशील व्यवसायिक पर्यावरण के अनुरूप ढाले जा सकते हैं।
- **सामाजिक उत्तरदायित्वों को पूर्ण करना**– जनसाधारण में बढ़ती जागरूकता व्यवसायों को अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए बाध्यकारी रही है। प्रबंध के सिद्धान्त एवं प्रबंध विषय का ज्ञान इस प्रकार की मांगों के परिणामस्वरूप ही विकसित हुआ है तथा समय के साथ–साथ सिद्धान्तों की व्याख्या इनके नए और समकालीन अर्थ निकल रहे हैं, इसी कारण समता की बात होने पर, यह मांग मजदूरों से सम्बन्धित नहीं होती है, अपितु ग्राहक के लिए मूल्य पर्यावरण संरक्षण, व्यवसाय के लिए सहयोगियों के व्यवहार पर भी यह सिद्धान्त लागू किया जाता है।
- **प्रबंध प्रशिक्षण, शिक्षा एवं अनुसंधान**– प्रबंध के सिद्धान्त, प्रबंध विषय के ज्ञान के मूलाधार है। इनका उपयोग प्रबंध के प्रशिक्षण, शिक्षा एवं अनुसंधान के आधार के रूप में किया जाता है। किसी भी राष्ट्र के विकास की स्थिति का स्तर उस राष्ट्र के शिक्षा से ज्ञात किया जा सकता है। प्रबंधन के विकास के सिद्धान्तों द्वारा शिक्षा का स्तर सुधारा जा सकता है।

प्रबंधन का विकास न केवल राष्ट्रीय स्तर पर, अपितु इसका विस्तार विश्वव्यापी स्तर पर हुआ है। जिस प्रकार वैश्विक उद्योग एवं अर्थव्यवस्था का विकास हुआ है। यह एक परिभाषित व्यवसाय के संदर्भ में एक आयामी भूमिका में बहुआयामी भूमिका में परिवर्तित हो गया है, जिसके लिए तकनीकी कौशल, सॉफ्ट प्रबंध और कौशल और विभिन्न संस्कृतियों को ग्रहण करना एवं सीखने के सम्मिश्रण की आवश्यकता होती है।

कुछ समय में विकास की अवधारणा में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है और सामाजिक विकास ने विकास की विचारधारा में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। समाज संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण इकाई होने के कारण इसके विकास पर संपूर्ण राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। अतः प्रबंध के समस्त सिद्धान्तों व नीतियों के अनुप्रयोग द्वारा सामाजिक विकास व कल्याण अधिकाधिक संभव हो पाता है। समाज, सामाजिक सुदृढ़ता, सामाजिक पूंजी, सामाजिक न्याय और सामाजिक हित विकास व प्रबंध प्रक्रिया के साझीदार होने चाहिए।

वस्तुतः प्रबंध का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति व समाज के हित में कार्य करना है। निर्धनता, बेरोजगारी, लैंगिक विभेद, निरक्षरता, जनसंख्या विस्फोट और अस्वस्थकर वातावरण पर नियंत्रण किये बिना विकास प्रक्रिया को समावेशी तथा समतामूलक नहीं बनाया जा सकता। इसलिए स्थिर, सुरक्षित व न्यायपूर्ण समाज को विकसित करने के लिए निम्नांकित बिंदुओं पर बल दिया गया है–

- प्रत्येक राष्ट्र द्वारा निर्धारित समय सीमा में निर्धनता का पूर्ण रूप से उन्मूलन करना।
- एक बुनियादी नीतिगत लक्ष्य के रूप में रोजगार को पूर्ण रूप से बढ़ावा देना।
- समस्त मानवाधिकारों के संरक्षण व संवर्द्धन पर आधारित सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देना।
- महिलाओं व पुरुषों के मध्य समानता व समता की उपलब्धि अर्जित करना।
- 'संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रमों' में सामाजिक विकास को सम्मिलित करना।
- सामाजिक विकास के लिए आवंटित संसाधनों में वृद्धि करना।
- एक ऐसा आर्थिक राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व वैधानिक पर्यावरण निर्मित करना जो लोगों को सामाजिक विकास की उपलब्धि में सहायता करें।
- शिक्षा व प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के सार्वभौमिक लक्ष्य को प्राप्त करना।
- सामाजिक विकास, आर्थिक संवृद्धि के साधन तथा लोगों के जीवन स्तर में सुधार हेतु संपूर्ण समाज के रूपांतरण का माध्यम है। वास्तव में, सामाजिक विकास की संकल्पना मानव विकास की संकल्पना से अधिक व्यापक है। विकासशील देशों में, जहां अत्यधिक जनसंख्या के कारण संसाधनों का दोहन होता है। ऐसी स्थिति में प्रबंधन के सिद्धान्तों का अनुप्रयोग सामाजिक कल्याण व विकास हेतु अति सराहनीय है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. प्रबंधकीय सिद्धांत किस क्षमता में वृद्धि करते हैं?

   (क) नियंत्रण क्षमता (ख) प्रबंध क्षमता

   (ग) दमन क्षमता (घ) इनमें से कोई नहीं

4. प्रबंध के सिद्धांतों का उपयोग किसके आधार के रूप में किया जाता है?

   (क) प्रबंध के प्रशिक्षण (ख) शिक्षा

   (ग) अनुसंधान (घ) पूर्वोक्त सभी

5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (घ)
3. (ख)
4. (घ)

5.5 सारांश

नियंत्रण को प्रबंधकीय नियंत्रण माना जाता है। जिसका आशय यह पता लगाना है कि समस्त कार्य का निष्पादन पूर्व योजना, निर्देशों, उद्देश्यों तथा उत्तरदायी सिद्धांतों के अनुरूप हुआ है या नहीं। यदि नहीं हुआ है तो उसके क्या कारण हैं, इसके लिए कौन उत्तरदायी है और साथ ही उसे सुधारने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए। अन्य शब्दों में उपक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपनाई गई योजनाएं ठीक से चल रही हैं या नहीं, यह जानने के लिए अधीनस्थों की जांच करने एवं आवश्यक सुधार करने को प्रबंधकीय नियंत्रण कहते हैं।

लागत के विभिन्न तत्वों की जानकारी आवश्यक है। इसके द्वारा कच्चे माल की लागत में कमी, कुशल पर्यवेक्षक उत्पादन के उन्नत साधनों या विधियों का प्रयोग, एवं कार्य करने के तरीकों में सुधार करके की जाती है। कारखाना तथा कार्यकाल में कमी कुशल संगठन, नियोजन तथा अभिप्रेरणा द्वारा की जाती है।

व्यवहार में, देखा गया है कि एक व्यक्ति जो काम नहीं करता और कुशल भी है, प्रबंधक के सामने आने पर कुशलता से काम करने लगता है। किसी भी स्थान पर उसकी उपस्थिति हो व्यक्तियों को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त होती है। यहां पर यह बात लागू होती है कि जो काम लिख– पढ़कर नहीं हो सकता उसे आमने–सामने बात करके किया जा सकता है। इस प्रकार, व्यक्तिगत अवलोकन, प्रायः कुछ परिस्थितियों में, नियंत्रण का अत्यन्त उपयोगी उपकरण सिद्ध होता है।

समाज संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण इकाई होने के कारण इसके विकास पर संपूर्ण राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। अतः प्रबंध के समस्त सिद्धान्तों व

नीतियों के अनुप्रयोग द्वारा सामाजिक विकास व कल्याण अधिकाधिक संभव हो पाता है। समाज, सामाजिक सुदृढ़ता, सामाजिक पूंजी, सामाजिक न्याय और सामाजिक हित विकास व प्रबंध प्रक्रिया के साझीदार होने चाहिए। वस्तुतः प्रबंध का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति व समाज के हित में कार्य करना है। निर्धनता, बेरोजगारी, लैंगिक विभेद, निरक्षरता, जनसंख्या विस्फोट और अस्वस्थकर वातावरण पर नियंत्रण किये बिना विकास प्रक्रिया को समावेशी तथा समतामूलक नहीं बनाया जा सकता।

5.6 मुख्य शब्दावली

- **निष्पादन** : पूरा करना, संपन्न करना
- **अपेक्षित** : जैसा चाहा गया
- **बाध्य** : विवश
- **अभिप्राय** : आशय
- **रिपोर्ट** : प्रतिवेदन
- **अवलोकन** : सही ढंग से देखना
- **बजटिंग** : बजट निर्माण
- **प्रणाली** : विधि या प्रक्रिया

5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. नियंत्रण की दो परिभाषाएं बताइए।
2. नियंत्रण प्रक्रिया में किन तत्वों का समावेशन होता है?
3. उत्पादन नियंत्रण से क्या आशय है?
4. किस्म नियंत्रण किसे कहते हैं?
5. स्थिर, सुरक्षित व न्यायपूर्ण समाज के विकास के लिए किन बिंदुओं पर बल दिया गया है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. नियंत्रण प्रक्रिया का विश्लेषण कीजिए।
2. नियंत्रण तकनीकों की विवेचना कीजिए।
3. शून्य–आधार बजटिंग में उठाए जाने वाले कदमों का ब्योरा दीजिए।
4. प्रमुख प्रदर्शन क्षेत्र की पहचान तथा नियंत्रण के रणनीतिक बिंदु रेखांकित कीजिए।
5. भारत में सामाजिक कल्याण और विकास के क्षेत्र में प्रबंध विज्ञान के सिद्धांतों एवं तकनीकों का अनुप्रयोग स्पष्ट कीजिए।

5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- *Managing for Value*, Hamilton, PHI
- *Management*, Stoner, PHI
- *Management Concepts and Practice*, Gupta, C.B. Sultan.
- *A Guide to Maintenance Management,* Roy, B.K., Jaico
- *Management Control Systems*, Ghosh , PHI
- *Compensation Management in Knowledge*, Henderson, Person
- *Knowledge Management*, Awad, Pearson
- *Knowledge for Competitive*, Chaudhary, Harish Excel.
- *Essentials of Management*, Dubrin, Andrew, Thomson
- *Brand Management Text and Case*, Moorthi, Vikas
- *Management: Principles & Practice*, Prag, Diwan, Excel.
- *Principles and Practice of Management*, Prasad, L.M., Sultan C.